ईश्वर के सम्पर्क में

मूल लेखक
श्री रैल्फ वाल्डो ट्राइन

अनुवादक
केदारनाथ गुप्त, एम० ए०
प्रिंसपल अग्रवाल विद्यालय कालिज, प्रयाग

प्रकाशक
छात्रहितकारी पुस्तकमाला
दारागंज, प्रयाग

प्रथम संस्करण] १९५२ [मूल्य २)

प्रकाशक
श्री केदारनाथ गुप्त, एम० ए०
छात्रहितकारी पुस्तकमाला
दारागंज, प्रयाग

मुद्रक
सरयू प्रसाद पांडेय 'विशारद'
नागरी प्रेस, दारागंज
प्रयाग।

निवेदन

आज मुझे बड़ा हर्ष हो रहा है कि अंगरेजी पुस्तक इन ट्यून विद दी इनफिनिट (In Tune with the Infinite) का हिन्दी भाषान्तर मै हिन्दी जनता के सामने उपस्थित कर रहा हूँ।

अंगरेजी की पुस्तक मुझे एक बार अपने एक मित्र से पढ़ने को मिली। उसे आद्योपान्त पढ़कर मै बडा प्रभावित हुआ। कुछ समय पश्चात् इसी पुस्तक का उल्लेख थियासाफिकल सोसाइटी के हमारे एक मित्र श्री महाबीर प्रसाद जी ने किया। वे मुझसे भी अधिक इस पुस्तक को पढ़कर प्रभावित हुये थे। उनके मुख से इसकी प्रशंसा सुनकर मेरी धारणा इस पुस्तक के बारे मे और भी अधिक पुष्ट हुई और मैने गरमी की छुट्टी मे इसको हिन्दी मे अनुवाद करने का पूर्ण निश्चय किया।

अनुवाद करने का काम गत २५ मई को प्रारम्भ हुआ। इलाहाबाद की कडी गरमी के मध्य जब मेरे घर के सब प्राणी शयन करते थे तो मै १२ और ५ बजे के बीच नित्य इसका अनुवाद करता था। ५ घंटे लगातार अनवरत परिश्रम करके मैने इस पुस्तक का अनुवाद गत ५ जुलाई को समाप्त किया। लोग गरमी के कारण परेशान रहते थे किन्तु मै पुस्तक के विचारो मे अनुवाद करते समय इतना निमग्न हो जाता था कि गरमी से मुझे जरा भी परेशानी नहीं होती थी। इस पुस्तक का नाम मैने अपने मित्रो की सलाह से रक्खा "ईश्वर के सम्पर्क में"।

मनुष्य और ईश्वर की समानता स्थिर करना एव उसे अपने असली स्वरूप का ज्ञान कराना, प्राणिमात्र मे एक भगवान का दर्शन

कराना, मनुष्य मात्र की ऊँची-ऊँची भावना मे रहने के लिये प्रेरित करना, विचारों के ऊँचे स्तर से प्राणिमात्र को निरोग बनाना और समार के झंझटों के बीच रहते हुये भी सची शान्ति का अनुभव कराना इस पुस्तक के मुख्य उद्देश्य हैं।

नास्तिकों के लिये यह पुस्तक बडे महत्व की है। आजकल के वैज्ञानिक युग में लोगों का विश्वास ईश्वर की ओर से हटता जा रहा है। 'खाओ पियो और मस्त रहो' इस सिद्धान्त के मानने वालो की संख्या उत्तरोत्तर बढ़ रही है। ऐसे लोग यदि इस पुस्तक को ध्यान पूर्वक पढ़ेंगे और उस पर मनन करेंगे तो निस्सन्देह वे ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास करने लगेंगे और उनका जीवन सुखी और शान्त होगा।

यदि आप अशान्त रहते हों तो इस पुस्तक को पढ़िये, आपको शान्ति अवश्य मिलेगी। यदि आप अपने जीवन से ऊब गये हों तो इस पुस्तक को पढ़िये, आपको जीवन में आनन्द मिलेगा। और यदि आपका स्वास्थ्य खराब हो गया हो तो इस पुस्तक को पढ़िये, आप पूर्ण स्वस्थ होकर कम से कम १०० वर्ष तक अवश्य जीवित रहेंगे।

इन ट्यून विद दी इनफीनिट (In Tune with the Infinite) का हिन्दी अनुवाद मैंने बडी ही स्वच्छन्दता पूर्वक किया है। मैंने अंगरेजी ग्रन्थकर्ता के मनोभावों को हिन्दी में पूर्णरूप से लाने का प्रयत्न किया है और साथ ही हिन्दी मुहाविरों की भी रक्षा की है। अगरेजी से हिन्दी में अनुवाद करने की मेरी अपनी यही धारणा है कि अनुवाद, अनुवाद न मालूम हो किन्तु पढ़ने में एक मूल लेख मालूम हो।

हमारे अतरग मित्र आल इंडिया सेवा समिति प्रयाग के सुयोग्य मंत्री श्री श्रीराम भारतीय एम० ए० ने इस अनूदित पुस्तक की भूमिका लिखी है जिसमे उन्होंने मूल लेखक के उद्देश्यो को विस्तार पूर्वक बहुत ही अच्छी तरह समझाया है । अतएव मै श्री भारतीय जी का अत्यन्त आभारी हूॅ

मै श्री महावीर प्रसाद जी का भी अत्यन्त आभारी हूॅ जिनकी प्रेरणा से मै अंगरेजी पुस्तक का भाषान्तर कर सका हूॅ । मै अपने कालिज के अगरेजी विभाग के अध्यक्ष श्री आनन्दी लाल नागर का भी आभारी हूॅ जिन्होंने अंगरेजी पुस्तक मे आई हुई अगरेजी कविताओं के अनुवाद करने मे मेरी बडी सहायता की है । मै बाल सखा के सुयोग्य सम्पादक और हिन्दी के प्रसिद्ध वयोवृद्ध लेखक प० लल्ली प्रसाद जी पाण्डेय का भी अत्यन्त आभारी हूॅ जिन्होंने मेरे अनुवाद को आद्योपान्त पढ़कर और उसमे यत्र तत्र उचित संशोधन करने का कष्ट उठाया है । मै मूल पुस्तक के लेखक महाशय रैल्फ वाल्डो ट्राइन और प्रकाशक का भी आभारी हूॅ जिनकी पुस्तक का अनुवाद करके उसे मै जनता के सामने रख रहा हूॅ ।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि 'ईश्वर के सम्पर्क मे' पुस्तक का हिन्दी भाषाभाषी जनता मे काफी प्रचार होगा और उसको पढ़कर लोगो को सच्ची शान्ति मिलेगी ।

अग्रवाल विद्यालय कालिज
प्रयाग
३०-७-५२

केदारनाथ गुप्त
प्रिन्सिपल

श्री श्रीराम भारतीय द्वारा लिखित

भूमिका

प्रिंसिपल केदार नाथ गुप्त हिन्दी के विख्यात लेखको में से हैं। उन्होने और उनके मित्र श्री गणेश पाण्डेय ने छात्र हितकारी पुस्तक-माला के द्वारा बहुत सुन्दर साहित्य युवको और सभी के लिये प्रकाशित किया है। वे आदर्शवादी होते हुये भी कार्यशील हैं और प्रस्तुत पुस्तक उनकी लगन का एक ज्वलन्त नमूना है।

ट्राइन की पुस्तक In Tune with the Infinite जग विख्यात है। लाखों प्रतियाँ उसकी छपकर बिक चुकी हैं और अब भी उसकी हर जगह माँग है। इससे प्रतीत होता है कि जिस विषय को लेकर उन्होने पुस्तक लिखी है वह विषय गम्भीर है और उनके विश्लेषण से अशान्त हृदयो को शान्ति मिलती है और जीवन मे उत्साह उत्पन्न होता है। हमे हर्ष है कि इस सुन्दर पुस्तक का अनुवाद गुप्त जी ने अथक परिश्रम से हिन्दी जगत में प्रस्तुत किया है। उनकी शैली मे जोर है और अवश्य उनके अनुवाद को पढ़कर लोगो के हृदय मे शान्ति का बीजारोपण होगा। हमें आशा है कि पुस्तक का प्रचार खूब होगा और गुप्त जी इस विषय की और पुस्तकें भी पाठको के सामने रख सकेंगे।

हर मनुष्य के सामने जीवन का क्या लक्ष्य है यह प्रश्न कभी न कभी उठता है। ईसा मसीह ने कहा है कि भगवान् ने अपने रूप मे मनुष्य को रचा और उसे अनश्वर बनाया है हमारे देश मे भी सभी धर्मों मे यह विश्वास है कि भगवान ने सब प्राणियों मे उत्तम मनुष्य को बनाया है तथापि मनुष्य अपने अनुभवो और साधनों द्वारा अपनी आध्यात्मिक उन्नति करते हुये परमात्मा को पा सकता है और आत्मा का

परमात्मा हो जाना ही मनुष्य जीवन का ध्येय है और उसकी पराकाष्टा है।

हमारे देश में प्रायः देखा गया है कि धर्म के नाम पर बहुत से वादाविवाद हुये हैं। विदेशो मे भी प्रोटेस्टेन्ट और रोमन कैथलिक, मुसलमान और ईसाई लडे हैं तथा क्रूसेड और Inquisition, Riformation और Pope के बुल चालू किये गये हैं। इन सब बातों को देखकर कभी-कभी तो यह प्रश्न उठता है कि धर्म क्या है और क्या भगवान् ने अपने तक पहुँचने के लिये कोई विशेष धर्म रखा है या सब धर्मों के द्वारा उसकी प्राप्ति हो सकती है। जिन धर्मावलम्बियो ने दूसरे धर्म मानने वालों के ऊपर अनाचार किये या उन पर जजिया लगाई या उनके पूजा स्थानो को नष्ट किया उन्होंने यह अवश्य समझा होगा कि उन्ही का धर्म सबसे अच्छा है और दूसरो का धर्म खराब। इस विचार ने ससार मे कितना नुकसान पहुँचाया है उसका अनुमान करना मुश्किल है। परन्तु इतने अनाचारो के बाद तथा नये आविष्कारो से लोगों के मन मे फिर एक बार यह बात उठने लगी है कि भगवान् तक पहुँचने के लिये किसी धर्म का अनुसरण किया जा सकता है और अपने परिश्रम से भगवान् की आराधना करते हुये और उनकी बनाई हुई चीजों का आदर करते हुये हम अपने जीवन को ऊँचा उठा सकते हैं। अपने धर्म मे सब प्राणि मात्रों में एक जीवन का होना बतलाया गया है और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का पाठ पढ़ाया गया हैं। उसके होते हुये मार्ग कठिन है और हर पथिक की अपनी शक्ति पर भी उसकी यात्रा का सफल होना निर्भर है। इसीलिये हिंदुओ में ज्ञानमार्ग, भक्तिमार्ग और कर्ममार्ग का उल्लेख है। किसी भी मार्ग पर चलने से मोक्ष

प्राप्त हो सकता है। भगवान् बुद्ध ने परम्परा के प्रतिकूल आवाज़ उठाई थी। उन्होंने अपने समय की हालत को देखकर यह घोषणा की कि पुरुष अपने उद्योग से ही निर्वाण तक पहुँच सकता है। उसे और किसी भी चीज की आवश्यकता नहीं है। परन्तु कुछ ऐसे भी धर्म हैं जिनमें भगवान की भक्ति के साथ-साथ पैगम्बर की भी भक्ति आवश्यक है या यह कि बिना गुरू के भगवान् तक नहीं पहुँच सकते अर्थात् प्रयत्न करने पर भी बिना भगवान् की अनुग्रह या 'ग्रेस' के मोक्ष प्राप्त नही हो सकता। ईसा मसीह और भगवान कृष्ण दोनो ने कहा है कि दुनिया के सब झगड़ो को छोड़कर मेरे पास आओ, मैं तुम्हें सब पापो से छुड़ाकर मोक्ष तक पहुँचा दूँगा।

ट्राइन की पुस्तक इस विषय को लेकर लिखी गई है और सब धर्मावलम्बी उसे पढ़कर उससे Inspiration लेंगे और भगवत् भजन मे अग्रसर हो सकेंगे। धर्म का रूप सत्य है और सत्य के मार्ग पर चलने वाला कभी धोखा नहीं खाता। हमारे देश मे गॉधी जी की मिसाल हमारे सामने है। वह निर्भीक थे और सदैव अपने आपको भगवान् की प्रेरणा से काम करते हुये कहते थे। मुश्किल केवल आत्म समर्पण की है बिना आत्म समर्पण के कोई शरणागत नहीं हो सकता। हमें आशा है कि इस पुस्तक द्वारा लोगो का आन्तरिक संघर्ष दूर हो सकेगा और वे शुद्ध हृदय से आत्म समर्पण कर सकेंगे और शरणागत पद प्राप्त कर सकेंगे। उसी को मोक्ष कहते हैं। वही निर्वाण है, वही Salvation है और वही फना होना है।

सेवा निकुंज,
इलाहाबाद ३.
२६-७-५२

श्रीराम भारतीय

विषयानुक्रमणिका

—:o:—

ईश्वर के सम्पर्क में

अखण्ड शान्ति, बल और विपुलता

प्रस्तावना

आशावादी का कहना ठीक है और निराशावादी का भी कहना ठीक है, यद्यपि दोनो के कथन मे प्रकाश और अंधेरे का अन्तर है; किन्तु कहते दोनो बिल्कुल ठीक हैं। अपने-अपने विशेष दृष्टिकोण के अनुसार दोनो में से हरएक का कहना ठीक है और उन्ही के कथन पर उनके जीवन की सफलता निर्भर है। एक को जीवन मे प्रभुत्व मिलता है और दूसरे को निराशा, एक को जीवन मे शान्ति मिलती है और दूसरे को अशान्ति; एक को जीवन में सफलता मिलती है और दूसरे को असफलता।

आशावादी प्रत्येक वस्तु को व्यापक दृष्टि से देखता है और निराशावादी संकीर्ण दृष्टि से। आशावादी की बुद्धि बुद्धिमत्तापूर्ण और निराशावादी की मूर्खतापूर्ण होती है। हरएक अपना संसार अपने

विचारो के अनुसार बनाता है और फल भी हरएक को अपने विचारों के अनुसार मिलता है। आशावादी अपनी अपूर्व बुद्धि और सूझ-बूझ से अपना स्वर्ग बनाता है और जितना भव्य वह अपना स्वर्ग बनाता है उतना ही ओजपूर्ण स्वर्ग वह अपने सम्पर्क मे रहने वालो के लिये भी बनाता है। निराशावादी अपनी कुबुद्धि से अपने लिये नरक बना लेता है और जितना निकृष्ट नरक वह अपने लिये बनाता है उससे भी घटिया नरक वह अपने सम्पर्क में रहने वालो के लिये भी तैयार करता है।

हम और आप या तो आशावादी हैं या निराशावादी और उसी के अनुसार प्रतिक्षण और प्रति घंटा हम अपना स्वर्ग या नरक बनाते रहते हं। जिस क्रम से हम अपना स्वर्ग या नरक अपने लिये बनाते हैं उसी क्रम से दुनिया को भी स्वर्ग और नरक बनाने मे हम उसकी सहायता करते हैं।

स्वर्ग का अर्थ ही शान्ति है। नरक अँगरेजी शब्द हेल (Hell) का पर्यायवाची है जिसका अर्थ है चारो ओर से बन्द कर देना या चारों ओर से अलग कर देना; शान्ति के अर्थ हैं सब से अच्छा सम्बन्ध रखना। यदि हेल (Hell) के अर्थ हैं अलग रखना या बन्द कर देना तो कोई एक ऐसी वस्तु अवश्य है जो मनुष्य को सब से अलग रखती है।

संसार की वास्तविकता

ससार मे हमारे चारो ओर वह अखण्ड ईश्वरीय शक्ति है जो कण-कण मे व्याप्त है और जिसका प्रतिबिम्ब सब मे परिलक्षित होता है। यह ईश्वरीय शक्ति अनादि और सनातन है जिससे सब उत्पन्न ही नहीं हुए हैं, किन्तु जिससे अब भी सब उत्पन्न हो रहे हैं। यदि कोई व्यक्तिगत जीवन है तो जीवन का स्रोत भी अवश्य होगा, जहाँ से वह व्यक्ति उत्पन्न हुआ है। यदि दुनिया मे प्रेम है तो प्रेम का अथाह सागर भी अवश्य होगा जहाँ से वह प्रेम उत्पन्न हुआ है। यदि दुनिया में बुद्धि है तो उसका स्रोत भी अवश्य होना चाहिये जहाँ से वह बुद्धि उत्पन्न हुई है। यही बात शान्ति, बल और भौतिक वस्तुओ के बारे मे भी कही जा सकती है।

कहने का तात्पर्य्य यह कि हमारे पीछे एक महान्, सनातन, और अखण्ड शक्ति है जिससे हम सब उत्पन्न हुए हैं। यह शक्ति न केवल हमको उत्पन्न करती और हमारा पालन करती है प्रत्युत अचल नियमो द्वारा सारे संसार को उत्पन्न करती और उसका शासन भी करती है। हमारे जीवन के हरएक काम का संचालन इन्ही महान् नियमो द्वारा होता है। हर एक फूल किसी महान् अचल नियम द्वारा ही लगता, फूलता और फिर मुरझा जाता है। महान् अपरिवर्तनशील नियमो द्वारा ही तुषार खण्ड आकाश से पृथ्वी पर गिरते और फिर नष्ट हो जाते हैं।

संसार के जितने भी काम हैं, नियमों से ही चलते हैं। यदि यह बात सच है तो इन नियमो का बनाने वाला भी कोई न कोई अवश्य होगा और वह नियमो से भी अधिक बलशाली होगा। हमारे चारो ओर जो महान, अनादि और सनातन शक्ति है उसको हम 'ईश्वर' कहते हैं। अपनी सुविधा के अनुसार आप उसे चाहे ईश्वर कहिये, चाहे खुदा, चाहे प्रकाश, चाहे विधाता, चाहे परमात्मा, चाहे सर्वशक्तिमान अथवा कोई और नाम दीजिये। इसमे मुझे तनिक भी आपत्ति नहीं। यदि हम इस अनादि ईश्वरीय शक्ति को मानते हैं तो हमे नामों की कोई परवाह नहीं है।

तो ईश्वर वह अनादि शक्ति है जो संसार के कण कण में व्याप्त है और जिससे सभी उत्पन्न हुए हैं और उसी में विचर रहे हैं। उसके बाहर कोई भी वस्तु नहीं है। वास्तव में हम उसी मे जीवित रहते हैं, उसी मे चलते-फिरते हैं और उसी से उत्पन्न होते हैं। वही हमारे जीवन का जीवन और हमारे प्राणों का प्राण है। हमने अपना जीवन उसीसे पाया है और बराबर उसीसे पा रहे हैं। हम ईश्वर के ही अंश हैं; यद्यपि हम सब अलग-अलग हैं और वह एक सम्पूर्ण है तथापि हमारे और उसके बीच मे कोई अन्तर नहीं है। हम ईश्वर ही तो हैं। ईश्वर और मनुष्य के तत्व मे कोई अन्तर नहीं है। अन्तर है मनुष्य के क्रमिक विकास में।

कुछ ऐसे सुबोध महान् पुरुष हैं जिनका विश्वास है कि हमें जीवन ईश्वर से मिलता है और कुछ ऐसे भी हैं जो कहते हैं कि हमारे और ईश्वर के जीवन मे कोई अन्तर नहीं है यानी हम और ईश्वर एक ही

है। तो दोनो मे कौन ठीक कह रहे हैं? दोनो ही ठीक कह रहे हैं यदि उनके तत्व को ठीक-ठीक समझा जाय तो।

यदि ईश्वर जीवन का अनन्त सागर है जहॉ से सब उत्पन्न होते हैं, तो हम सब व्यक्ति उसी अनन्त सागर से प्रवाहित होते हैं और यदि हम ईश्वर के अश हैं तो जो ईश्वर का प्रकाश हममे परिलक्षित होता है उसमे और ईश्वर के प्रकाश मे कोई अन्तर नही है। यदि समुद्र से एक बूँद पानी ले लिया जाय तो गुण और स्वभाव मे उसमे और समुद्र मे कोई अन्तर नही होगा क्योकि वह पानी समुद्र ही का तो एक अग है। और अन्तर हो भी कैसे सकता है? वास्तव मे हम लोग समझने में गलती करते हैं। यद्यपि ईश्वर और मनुष्य मे कोई अन्तर नही है, दोनो एक हैं; फिर भी ईश्वर व्यापक होने से मनुष्य से ऊँचा है, महान् है। कहने का तात्पर्य्य यह कि जहॉ तक जीवन का सम्बन्ध है, ईश्वर और मनुष्य एक ही हैं और जहॉ तक जीवन के क्रम का सम्बन्ध है दोनो एक दूसरे से भिन्न हैं।

इस प्रकार क्या यह बात स्पष्ट नही है कि दोनो सिद्धान्त सत्य हैं! मेरी राय मे ये कहने के लिये दो हैं, किन्तु वास्तव मे है एक ही। दोनो सिद्धान्तो का स्पष्टीकरण एक ही उदाहरण से हो सकता है।

घाटी मे एक छोटा जलाशय है। पहाड के ऊपर एक बडा अथाह जलाशय है। वहॉ से घाटीवाले जलाशय मे पानी आता है। बडा जलाशय छोटे जलाशय मे बहता रहता है इसलिये छोटे जलाशय को बडे जलाशय से पानी बराबर मिलता रहता है। छोटे जलाशय के पानी का वही गुण और वही स्वभाव है जो बडे जलाशय का क्योकि बडा जलाशय छोटे का जीवनदाता है। दोनो मे अन्तर यह है

कि पहाड़ वाला जलाशय इतना विशाल है कि ऐसे-ऐसे छोटे छोटे न जाने कितने जलाशयों को वह पानी दे सकता है और इतने पर भी वह अथाह ही बना रहता है।

यही हाल मनुष्य के जीवन का है। मेरी धारणा है और आपकी भी धारणा है कि चाहे और बातो में हमारी राय एक न हो किन्तु इस बात में हमारा आपका मत एक है कि हम सब के पीछे एक अनादि और सनातन चेतन-शक्ति अवश्य है जिससे आपको और हमको जीवन मिलता है। यदि यह बात सत्य है तो जहाँ से हमको जीवन मिलता है उस चेतन-शक्ति मे और हमारे जीवन में कोई अन्तर नहीं है। हाँ, एक अन्तर अवश्य है। यह अन्तर वास्तविक नहीं क्रमिक है।

यदि इसे सच मान लें तो क्या इसका अर्थ यह नहीं है कि जिस क्रम के अनुसार मनुष्य का सम्मान ईश्वर की ओर होगा उसी क्रम के अनुसार वह ईश्वर के समीप पहुँचता जायगा और उसी क्रम के अनुसार उसको ईश्वरीय शक्ति प्राप्त होती जायगी। ईश्वर की शक्ति अपार है। मनुष्य की भी शक्तियाँ अपार हैं किन्तु उसने उसको पहिचाना नहीं है, उसने उनको परिमित बना रक्खा है।

मानवी जीवन का सच्चा स्वरूप

संसार के वास्तविक स्वरूप के विषय मे हमारी और आपकी एक ही धारणा है यानी हमारे चारों ओर एक आदि शक्ति मौजूद है जिससे हम सब पैदा हुए हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि मानवी जीवन का सच्चा स्वरूप क्या है? इसका उत्तर भी स्पष्ट है।

जीवन की वास्तविकता जानने के लिये हम इस बात का अनुभव करें कि हम और ईश्वर एक ही हैं और हमारा जीवन प्रवाह ईश्वरीय प्रवाह से मिला हुआ है। वास्तव मे जीवन की यही असलियत है। जीवन की और दूसरी बातें इसी के भीतर निहित हैं। जितना अधिक हमे इस बात का ज्ञान होगा कि हम और ईश्वर एक ही हैं और जितना अधिक,हम ईश्वर से अपना सम्पर्क स्थापित करेंगे उतना ही अधिक ईश्वरीय बल और गुण हमे प्राप्त होगा।

इसका मतलब क्या है? इसका मतलब यह है कि हम अपने जीवन के तत्व को समझ रहे हैं और ईश्वर के महान् नियमो का पालन करके उसी प्रकार स्फूर्ति ग्रहण कर रहे हैं जिस प्रकार बड़े बड़े ऋषियो, पैगम्बरो और दुनिया के अन्य महान् पुरुषो ने ग्रहण किया था। जितनी तीव्रता से हम इस बात को समझेंगे और जितनी तीव्रता से हमारा सम्पर्क ईश्वर से स्थापित होगा उतनी ही तीव्रता से ईश्वर की महान् शक्तियाँ हमे प्राप्त होंगी और हमारे द्वारा कार्य्य रूप मे उनका विकास होगा।

अपनी मूर्खता से हम इस ईश्वरीय प्रवाह, अथवा ईश्वरीय शक्ति

से अपने को अलग भी रख सकते हैं, जैसा प्रायः देखा जाता है, और इस प्रकार हमारे ही द्वारा ईश्वरीय शक्ति के विकास में रुकावट भी उत्पन्न हो सकती है। अथवा हम जान बूझ कर अपना सम्बन्ध उस ईश्वर से तोड़ कर उसकी शक्ति से अपने को वंचित कर सकते हैं जो एक सच्चे वारिस होने के नाते हमारी निजी वस्तु है। साथ ही हम इस बात का भी अनुभव कर सकते हैं कि हम और ईश्वर एक हैं और ईश्वर के प्रवाह से ही हमें शक्ति, बल और स्फूर्ति मिल रही है। और इस प्रकार हम उसके सच्चे भक्त बन सकते हैं।

ईश्वर भक्त किसे कहते हैं? जिसके द्वारा मनुष्य रूप में ही ईश्वर की शक्तियों का विकास हो रहा हो। ऐसे पुरुष के मार्ग में कोई विघ्न नहीं डाल सकता; यदि विघ्न होता भी है तो उसी का डाला हुआ। विघ्न का मुख्य कारण अपनी मूर्खता ही हुआ करती है। इसी कारण बहुत से लोग, मूर्खतावश, यह न जानकर कि हम ईश्वर के उत्तराधिकारी है, अपना स्वार्थपूर्ण और संकुचित जीवन दुःख के साथ व्यतीत किया करते हैं। उन्होंने कभी अपने असली स्वरूप को पहिचाना नहीं है।

मनुष्य ने कभी इस बात का अनुभव नहीं किया कि हमारी आत्मा ईश्वर का ही अंश है। अपनी मूर्खता से उसने कभी ईश्वर के प्रवाह में अपने जीवन का प्रवाह नहीं मिलाया और इसी कारण ईश्वरीय शक्ति और तेज बढ़कर उसमें नहीं आया। जब हम अपने को केवल मनुष्य समझते हैं तो हम मनुष्य की ही तरह जीवन व्यतीत करते हैं और हममें मनुष्य की ही शक्ति होती है। और जब हम यह अनुभव करते हैं कि हम ईश्वर के उपासक हैं तो हम एक उपासक की तरह

रहते हैं और हममे ईश्वरीय शक्ति आती है। जिस अनुपात से हम अपना सम्बन्ध ईश्वर के साथ जोडते हैं उसी अनुपात के अनुसार हम मनुष्य से ईश्वर होते जाते है।

हमारे एक मित्र के पास एक सुन्दर कमल का तालाब है। थोडी दूर पर, एक पहाडी के पास, एक जलाशय है। उसी से इस तालाब मे पानी आता है। एक फाटक लगा हुआ है जिसके द्वारा वह जब चाहता है, पानी बडे जलाशय से ले लेता है और जब नहीं चाहता तब नहीं लेता। जहाँ कमलो का तालाब है वहाँ की प्राकृतिक छटा निराली है। गरमी के दिनों मे तालाब के स्वच्छ पानी के ऊपर कमल फूले रहते हैं। तालाब के किनारे किनारे गुलाब और दूसरे जंगली फूलो के पौदे लगे रहते हैं। चिडिया आ आकर उसमे कलोलें करती हैं, उसी का पानी पीती हैं और दिन भर चहचहाती रहती हैं। कोई भी आकर उनका चहचहाना सुन सकता है। जंगली फूलो के इस बाग मे शहद की मक्खियाँ लगातार भनभनाया करती और काम मे लगी होती हैं। तालाब के पीछे एक बडा सा कुज है जो मीलो फैला हुआ है। उसमे नाना प्रकार की झाडियां और नाना प्रकार के फूल दिखलाई पडते हैं।

हमारा मित्र भगवद्भक्त है और ससार मात्र से प्रेम करता है। उसकी जमीदारी मे ऐसा कोई साइनबोर्ड नही लगा है जिसमे लिखा हो कि यह हमारी जमीन है और जो यहां से गुजरेंगे वे गिरफ्तार कर लिये जायेंगे। लोगो की सुविधा के लिये उसने गली के अन्त में इस चित्ताकर्षक स्थान से थोडी दूर पर एक साइन बोर्ड लगवा दिया है जिसमे लिखा है, "इस कमलो के तालाब में सब लोग आ सकते हैं"।

हमारे मित्र को सभी प्यार करते हैं सभी उसकी प्रशंसा करते हैं। क्यो? इसलिए कि वह सबको प्यार करता है और अपनी सम्पत्ति को सब की सम्पत्ति समझता है।

छोटे छोटे बच्चे प्रायः यहाँ आकर खेलते कूदते हैं। बहुत से थके हुए स्त्री पुरुष आकर यहां विश्राम करते हैं और चलते समय कहते हैं—ईश्वर इस जमीन के मालिक का भला करे। बहुत से लोग कहते हैं कि यह ईश्वर का बाग है। मेरा मित्र इसे ईश्वर का ही बाग समझता है और कई घंटे यहां शान्ति प्राप्त करने के लिये बैठा रहता है। प्रायः मैंने देखा है कि जब सब लोग चले जाते हैं तब भी वह चाँदनी रात मे एक टूटी हुई बेंच पर बैठा हुआ जंगली फूलो की महक लिया करता है। उसका स्वभाव बहुत ही सरल है। वह कहता है कि यहाँ मुझे जीवन का सच्चा सुख मिलता है और बड़े-बड़े मन्सूबों का हल मैं यहीं सफलता पूर्वक एका-एक पा जाता हूँ।

उसकी जमीन के चारो ओर दया, प्रसन्नता और सुख का पूर्ण वातावरण रहता है। वहां जाने से लोगो में सद्भावना की उत्पत्ति होती है। गाय, बैल, भेड और बकरियाँ जब इस कुंज की पत्थर की चहारदीवारी के पास आती हैं तो उनको भी मनुष्यो की तरह आनन्द मिलता है। वे चौपाये संतुष्ट और प्रसन्न, होकर मुस्कराते दिखलाई पड़ते हैं अथवा कदाचित् देखने वाले को ऐसा लगता है, क्योंकि वह भी उनको संतुष्ट और प्रसन्न देखकर बिना मुस्कराये रह नहीं सकता।

तालाब का फाटक बराबर खुला रहता हैं जिससे उसमें पानी बड़े जलाशय से आता रहता है। वहाँ से एक नाली, खेतों के बगल से, बराबर बहती रहती है जहाँ वहाँ के चरनेवाले जानवर और भेड़ें पहाड़ का

स्वच्छ पानी पीने को आती हैं। वह नाली पास के खेतों मे भी बहती रहती है।

कुछ समय पूर्व हमारा मित्र एक वर्ष के लिये कहीं चला गया। उसने अपनी जमीन किराये पर एक ऐसे आदमी को दे दी जिसका उद्देश्य धन कमाना था। उसको हर समय सिवाय पैसा पैदा करने के दूसरा काम अच्छा ही नहीं लगता था। जिस फाटक द्वारा कमलो के तालाब में बडे जलाशय से पानी आता था वह बन्द कर दिया गया। इसलिये पहाड का स्वच्छ पानी आना बन्द हो गया। हमारे मित्र का साइनबोर्ड कि 'यहाँ सब आ सकते हैं' निकाल दिया गया और लडकों तथा स्त्री पुरुषों को वहाँ बैठने की मनाही कर दी गई। हर काम मे वहाँ परिवर्तन दिखलाई पडने लगा। जीवन देने वाले पानी के बन्द हो जाने से तालाब के कमल सूख गये और उनके तने नीचे कीचड मे फँस गये। जो मछलियाँ पहले पानी मे तैरती थीं वे मर गईं और उनसे दुर्गन्धि निकलने लगी। किनारे के फूलो का खिलना बन्द हो गया। चिडियो ने वहाँ पानी पीना और नहाना छोड दिया। मधुमक्खियों की भनभनाहट बन्द हो गई। जो नाली खेतों मे होकर बह रही थी वह सूख गई और जानवरो और पेडो को पहाडी स्वच्छ पानी मिलना बन्द हो गया।

इस स्थान मे इतना अन्तर क्यों पड गया? जब वह हमारे मित्र के अधिकार मे था तो वह क्यों हरा-भरा था और अब वह उजाड क्यो हो गया? फाटक बन्द कर दिया गया जिसके कारण उस तालाब को जीवन देने वाले पानी का आना बन्द हो गया। जब तालाब के जीवन का उद्गम ही बन्द हो गया तो तालाब की दशा भी खराब हो गई और

आसपास के खेतों के पास से बहने वाली पानी की नाली भी सूख गई जिसके किनारे जानवर और भेड़े पानी पीने आया करती थी।

यह घटना क्या हमारे जीवन में पूर्ण रूप से लागू नहीं हो रही है? जिस अनुपात से हम अपने और ईश्वर को समान समझते हैं, और जिस अनुपात से हम उस ईश्वर से अपना सम्बन्ध स्थापित करते है जो सब का जीवनदाता है, और जिस अनुपात से हमारा झुकाव ईश्वर की ओर होता है उसी अनुपात से हम उस सर्व-शक्तिमान, सर्वोत्तम और सर्व सुन्दर ईश्वर के समीप पहुँचते हैं और जिस अनुपात से हमम से ईश्वरीय तेज स्फुटित होता है उसी अनुपात से हमारा प्रभाव हमारे समीपवर्ती लोगों पर पड़ता है। हमारी यह स्थिति कमलो के तालाब की वह अवस्था है जब वह मेरे दोस्त के हाथ मे था जो ईश्वर से प्रेम करता है। जिस अनुपात से हम उस आदि शक्ति से अपने को अलग समझते हैं, और उसके दिव्य स्रोत से अपने को अलग रखते हैं उसी अनुपात से हमारी अवस्था हीन होती जाती है और हमे न तो कोई वस्तु सुन्दर दिखलाई पडती है, न अच्छी लगती है और न हम ईश्वर की शक्ति को ही प्राप्त कर सकते हैं। जो लोग हमारे सम्पर्क मे आते हैं उनका लाभ न होकर हानि होती है। हमारी यह स्थिति कमलों के तालाब की वह अवस्था है जब वह एक व्यवसायी आसामी के हाथ मे आया।

कमलो के तालाब और हमारे और आपके जीवन मे यही अन्तर है। उसमें इतनी शक्ति नहीं है कि वह फाटक को खोल दे जिससे उस जलाशय से पानी आने लगे जो उसका उद्गम स्थान है। वह स्वयं शक्तिहीन है और उसे बाहरी साधन पर आश्रित

रहना पडता है। उसी प्रकार आपके और हमारे भीतर एक शक्ति है। उसको हम चाहे बन्द रक्खें अथवा ईश्वर की शक्ति से जोड दें। ऐसा हम तभी कर सकते हैं जब हम अपनी मस्तिष्क-शक्ति के द्वारा विचारों को काम मे लावें।

ईश्वर की ओर से हमे आत्मा मिली है। यह हमको ईश्वर से मिलाती है। आत्मा के अलावा हमें यह शरीर भी मिला है। इसका सम्बन्ध भौतिक संसार से है। हमारे विचार आत्मा और शरीर को मिलाते हैं। हमारे विचार ही दोनों के बीच बडे महत्वपूर्ण कार्य करते हैं।

सब से पहले हमे यह सोचना चाहिये कि "विचार" क्या चीज है और उसका स्वभाव क्या है ?

'विचार' कोई अनर्गल या कोई दूसरी निरर्थक वस्तु नही है। 'विचार' एक आवश्यक और विलक्षण जीवित शक्ति है।

प्रयोगशालाओ मे प्रयोग द्वारा हम लोग इस बात को बहुत जोरो के साथ प्रमाणित कर रहे हैं कि 'विचारो' मे एक जबरदस्त शक्ति होती है, उनमे स्वरूप होता है, सार होता है और शक्ति होती है। विचारो को हम लोगो ने अब विज्ञान का स्वरूप दिया है। हम लोगों ने अब यह भी खोजना शुरू किया है कि विचारो के द्वारा हम एक असली शक्ति का निर्माण भी कर सकते हैं। यह मै किसी आलङ्कारिक भाषा में नहीं कह रहा हूँ किन्तु एक सच्ची बात कह रहा हूँ।

भौतिक संसार मे जितनी वस्तुयें दिखलाई पड़ती हैं वे सब 'विचारो' से ही पैदा हुई हैं। पहले 'विचार' उत्पन्न होता है और फिर उसका

स्वरूप हमारे सामने आता है। प्रत्येक किला, प्रत्येक मूर्ति, प्रत्येक चित्र और प्रत्येक मशीन का स्वरूप विचार में उत्पन्न होता है और फिर ये रूप मूर्त पाकर हमारे सामने उपस्थित होते हैं और हम उन्हें आंखो से देखते हैं। जिस संसार में हम रहते हैं वह स्वयं उस आदि शक्ति ईश्वर के विचारों का परिणाम है जो हमारे चारा ओर कण कण मे व्याप्त है। यदि हम ईश्वर के अंश हैं और हमारे और ईश्वर के बीच मे कोई अन्तर नही है तो क्या ऐसा नही हो सकता कि हम भी अपने आध्यात्मिक विचारों से अपना एक आध्यात्मिक संसार बना लें ?

हर एक वस्तु दृश्य रूप मे आने के पहले अदृश्य रूप मे आती है। इसलिये यह सत्य है कि अदृश्य चीजें सत्य होती हैं और दृश्य चीजें असत्य। अदृश्य और दृश्य चीजें कारण और कार्य्य का काम करती हैं। अदृश्य चीजें स्थायी होती हैं और दृश्य चीजें परिवर्तन-शील और अस्थायी हैं।

शब्दों में भी कितनी शक्ति होती है; इसे हम रोज ही देखते हैं। शब्दो मे शक्ति का होना एक वैज्ञानिक सत्य है। विचारो से हम शक्ति उत्पन्न करते हैं। विचारो के जो अदृश्य काम भीतर ही भीतर होते हैं, कहे हुये शब्द उनके बाहरी संकेतक शब्द ही तो हैं। कहे हुये शब्द एक प्रकार से साधन हैं जिनके द्वारा हमारी भीतरी विचार शक्तियां किसी एक विशेष विषय की ओर लगती हैं। किसी कार्य्य के होने के पहिले यह जरूरी है कि ये विचार शक्तियां एकाग्रता के साथ उस विषय की ओर पूर्ण रूप से लगाई जॉय।

'हवाई किले बनाने' के बारे मे बहुत कुछ कहा जा चुका है। जो हवाई किले बनाते हैं, उनको लोग सम्मान की दृष्टि से नहीं देखते। किन्तु

पृथ्वी पर असली किले बनाने के पहले, जिनमे हम रहते हैं, हवाई किले बनाना जरूरी होता है। जो हवाई किले बनाते हैं उनको सम्मान की दृष्टि से हम इसलिए नही देखते कि वे हवा मे किला बनाकर आगे नही बढ़ते। वे उसे वास्तविक स्वरूप देकर तैयार नहीं करते। वे एक काम करने का तो विचार करते हैं किन्तु दूसरा जरूरी काम बिना किया हुआ रह जाता है।

विचारो की शक्ति के बारे मे एक बडा नियम काम कर रहा है। वह यह है कि समान विचार समान विचारो को खीचते हैं। अपने विचार के अनुकूल ही हम जीवन के दृश्य और अदृश्य पहलुओ से समान विचारो को खींचते रहते हैं।

यह नियम हमेशा काम करता रहता है—चाहे उसका ज्ञान हमे हो या न हो। हम एक प्रकार के विचारो के अपार समुद्र मे रह रहे हैं। हमारे चारो ओर का वायुमण्डल विचारो से भरा हुआ है जहॉ लहरो के रूप मे विचार आते हैं और विचार जाते भी हैं। इन विचारो की लहरों का प्रभाव हम सब पर चेतन या अचेतन रूप से, कम या अधिक पडता रहता है। यदि हमने अपने दिमाग को खोल रक्खा है तो बाहरी वायु मंडल का प्रभाव हमारे विचारों पर पडेगा और उन्ही के अनुसार हमारा जीवन बनेगा। यदि हमने अपने दिमाग को बन्द कर रक्खा है तो बाहरी वायुमडल का कोई भी प्रभाव हमारे विचारो पर न पडेगा और हमारे जीवन मे भी उन्नति न होगी।

हममे से कुछ ऐसे हैं जिन पर दूसरों की अपेक्षा जल्द प्रभाव पड़ता है, क्योंकि उनका दिमाग कोमल बना हुआ है। उनके शरीर बड़े नाजुक होते हैं और उनके दिमाग भी बड़े नाजुक होते हे।

उन पर उन लोगों के विचारों का अच्छा या बुरा प्रभाव पड़ता है जिनके साथ वे रहते हैं और जिनके साथ वे उठते बैठते हैं। हमारे एक सम्मानित मित्र का, जो एक बड़े पत्र के सम्पादक हैं, दिमाग इतना कोमल है कि उनके लिये किसी सभा में जाना, लोगों से हाथ मिलाना और उनसे बातचीत करना असम्भव हो जाता है; क्योंकि उनके दिमाग पर मिलने वालों की मानसिक और शारीरिक अवस्थाओं का प्रभाव जोरों से पड़ता है। इन अवस्थाओं का हमारे मित्र पर इतना प्रभाव पड़ता है कि वे दो या तीन दिन तक सुचारु रूप से अपना काम नहीं कर सकते।

कुछ लोग नाजुक दिमाग होने को एक दोष मानते हैं; किन्तु बात ऐसी नहीं है। नाजुक दिमाग का होना अच्छा है। ऐसे लोगों पर भीतरी और बाहरी ऊंचे विचारों के प्रभाव आसानी से पड़ सकते हैं। ऐसा नाजुक दिमाग पाना कठिन है किन्तु मनुष्य अपने को ऐसा बना ही सकता है कि बाहरी चीजों का खराब असर उसके विचारों पर न पड़ने पावे।

मन पर संयम रखने से यह आदत बन सकती है। मनुष्य का दिमाग नाजुक हो या न हो, उसे कभी कभी अपने मन को रोककर यह कहना चाहिये कि मैं अपने दिमाग को प्रतिकूल समय पर बन्द कर लेता हूँ जिससे बुरी बातों का प्रभाव उस पर न पड़े और अनुकूल समय पर खोल देता हूँ। जिससे अच्छी अच्छी बातों का प्रभाव उस पर पड़ता रहे। जानबूझ कर कभी कभी ऐसा करते रहने से मनुष्य की आदत पड़ जाती है और वह जब चाहे तब अपने दिमाग को बन्द कर सकता है और जब चाहे तब वह खोल सकता है। यदि मनुष्य अपने को ऐसा

संयमी बनाना चाहे तो धीरे-धीरे कुछ समय में उसको सफलता मिल जायगी इस तरह इसके जीवन के दृश्य और अदृश्य भागो के कुत्सित और अवांछनीय विचार उसके दिमाग के भीतर न जा सकेंगे और उच्च विचारों का क्रमिक प्रवेश धीरे-धीरे होने लगेगा।

जीवन के अदृश्य भाग से क्या मतलब है? इसके दो भाग हैं। (१) हमारी विचार शक्ति और हमारे चारो ओर की मानसिक और भावमय परिस्थितियाँ जो कि इस ससार मे स्थूल शरीरधारियो द्वारा उत्पन्न होती हैं। (२) वे मानसिक और भावमय परिस्थितियाँ जो इस स्थूल शरीर को छोड कर सूक्ष्म शरीर धारण करने वाले जीवधारियों द्वारा उत्पन्न होती हैं।

मनुष्य का अस्तित्व पहले भौतिक ससार मे स्थूल शरीर द्वारा प्रारम्भ होता है। फिर धीरे-धीरे वह मनोमय और देवमय शरीर मे प्रवेश करता है। धीरे-धीरे वह एक ऐसी स्थिति मे पहुँचता है जहाँ उसे अपार आनन्द मिलता है। यह स्थूल शरीर तो मनुष्य का एक बाहरी रूप है। उसके भीतर जीवात्मा है। जीवात्मा से मनुष्य उन्नति करते-करते ईश्वरीय लोक पहुँचता है जहाँ का अनुमान करना भी इस स्थूलधारी मनुष्य के लिये दुर्लभ है। इसी प्रकार इस शरीर के दो भाग है (१) स्थूल शरीर और (२) सूक्ष्म शरीर। स्थूल शरीर बाहरी भाग है। उसमे हमारा सूक्ष्म शरीर परिपक्व होता है जिस प्रकार अनाज की बाल के भीतर अन्न परिपक्व होता है। सूक्ष्म शरीर को परिपक्व करना ही स्थूल शरीर का काम है। सूक्ष्म शरीर के द्वारा हमारा व्यक्तित्व हमेशा के लिये कायम रहता है।

जीवन का असली तत्व तो यह है कि इस भौतिक शरीर के नष्ट

होने पर भी पुनर्जन्म द्वारा जीवन की लडी कायम रहे। जीवात्मा चिरन्तन होता है इसलिये शरीर बदल जाने पर भी वह कायम रहता है। परमात्मा के यहाँ इस जीवात्मा के निवास करने के लिये अनेको घर है। जीवात्मा का विकास होता है इसलिये एक शरीर छोडने पर वह दूसरा शरीर धारण करता है। इस प्रकार इस जीवन की लडी अटूट बनी रहती है।

इस भौतिक ससार मे नाना प्रकार के मस्तिष्क होते हैं अतः उनके भाव भी नाना प्रकार के होते हैं। यदि यह नियम हमेशा काम करता है कि समान-समान को खीचता है तो हम अपने विचारों के अनुकूल और अपने जीवन के अनुकूल परिस्थतियाँ उत्पन्न करके उन्हीं से प्रभावित होते रहते हैं। सब का जीवन एक प्रकार का नहीं होता, यद्यपि हम सब का एक दूसरे से घनिष्ट सम्बन्ध है। हम छुई मुई नहीं हैं कि छूने से सिकुड जायँ, हममे दृढ़ता है। हम उन्हीं विचारों को ग्रहण कर सकते हैं जिनको हम चाहें, गन्दे और निकृष्ट विचार हमारे भीतर कभी घुस नहीं सकते।

नाव मे पतवार होता है। पतवार की सहायता से नाव को हम जिधर चाहे, ले जा सकते हैं। यदि पतवार न हो तो नाव यथेच्छ बहने लगेगी और हमे कुघाट मे भी डाल सकती है। उसी प्रकार यदि हम अपने मन मे पतवार लगावें तो हम जो करना चाहे कर सकते हैं, नहीं तो बिना पतवार की नाव की तरह हम कुछ कर नहीं सकते। इस संसार में जो महान् पुरुष हो गये हैं उनके जीवन से हमें अच्छी-अच्छी बातें सीखनी चाहिए जिससे हमारा जीवन भी प्रभावित होता हुआ ऊँचाई की ओर जाय।

जिन्होंने इस संसार मे प्रेम स्थापित करने और जीवन को ऊँचा बनाने के लिये घोर परिश्रम किया है। वे आज भी जीवित हैं और पहले से भी अधिक प्रेम स्थापित करने और जीवन को ऊँचा बनाने मे वे अपना प्रभाव डाल रहे हैं।

"एलिसा ने प्रार्थना की और कहा—प्रभो, मैं विनती करता हूँ, आप उसकी आँखें खोल दीजिये और प्रभु ने उसकी आंखें खोल दीं और वह देखने लगा। एलिसा के चारो ओर पहाड मे घोडे और आग के रथ दिखलाई पडने लगे।"

कुछ दिन हुए, मै अपने एक मित्र के साथ, घोडे पर सवार होकर घूम रहा था। हम लोग बातचीत कर रहे थे कि आज कल लोग हर जगह जीवन की महत्वपूर्ण बातों मे दिलचस्पी लेने लगे हैं। वे अब अपनी भीतरी शक्तियों पर गम्भीरता से विचार करने लगे हैं, और ईश्वर के साथ अपने सम्बन्ध को जानने के लिये वे बडे उत्सुक हैं। मैंने मित्र से कहा, "इस शताब्दि के अन्त मे संसार भर मे आध्यात्मिक जाग्रति बडे वेग के साथ हो रही है और दूसरी शताब्दि के आरम्भ मे यह जाग्रति और भी बढ़ जायगी। इमर्सन को ईश्वर का प्रकाश कहीं पहले मिल चुका था। उसने बहुत पहले आध्यात्मिक उन्नति का प्रयत्न किया था। यदि कही वह इस समय जीवित होता तो वर्तमान आध्यात्मिक उन्नति को देखकर कितना प्रसन्न होता।" मेरे मित्रने उत्तर दिया, "कैसे तुम जानते हो कि वह नही देख रहा है? संभव है, इस काम मे उसका हाथ अब भी हो और वह पहिले से भी अधिक सहायता दे रहा हो।" मैंने अपने मित्र को धन्यवाद दिया और कहा कि क्या यह बात सच नही है कि वे विशाल आत्मायें अब भी अपने

पीछे काम करने वालों को सहायता दे रही हैं ? विज्ञान ने सिद्ध करके दिखलाया है कि जो चीजें हम देख रहे हैं वे उन चीजो की अपेक्षा बहुत ही कम हैं जो हमारे चारों ओर मोजूद हैं । हमारे जीवन मे और हमारे इर्दगिर्द जो जरूरी शक्तियाँ काम कर रही हैं उन्हे हम इन साधारण भौतिक आँखों से नहीं देख सकते । किन्तु उन्ही से तो ये सब चीजे उत्पन्न हुई हैं जिन्हें हम देखते हैं । हमारे विचार ही हमारी शक्तियाँ हैं। समान को समान बनाता है और समान को समान खींचता है । जो अपने विचारों पर संयम रखता है वही अपने जीवन के भविष्य का निर्णय कर सकता है ।

भौतिक और आध्यात्मिक संसार का अच्छा ज्ञान रखने वाले एक सज्जन ने कहा है, "आध्यात्मिक और भौतिक संसार नियम द्वारा एक दूसरे से बंधे हुए हैं और उनके काम ठीक-ठीक चल रहे हैं जिनको देखकर आश्चर्य होता है।"

जो मनुष्य हमेशा दुखी रहते हैं उनमे सहानुभूति दुखी ही मनुष्य रखते हैं । जो लोग हमेशा निरुत्साह और निराश रहते हैं वे जीवन में कभी सफल नहीं होते, और दूसरो के लिये बोझ बनकर जीवन निर्वाह करते हैं । जो आशावादी हैं, जिन्हें अपनी शक्तियों पर विश्वास है और जो हमेशा प्रसन्न रहते हैं उन्हें हमेशा सफलता मिलती है । एक आदमी के सामने और पीछे के आँगन को देखकर आप समझ सकते हैं कि उसका दिमाग किस प्रकार काम कर रहा है। घर की किसी स्त्री के विचारों को आप उसके वस्त्रों से मालूम कर सकते हैं । मैले कुचैले वस्त्र पहिनने वाली स्त्री को देखकर आप बता सकते हैं कि उसमें कितनी निराशा, कितनी लापरवाही और कितनी अव्यवस्था है ।

शरीर मे आने के पूर्व गन्दगी दिमाग मे आती है। जैसे विचार आपके मस्तिष्क मे होंगे उसी प्रकार का वायु मंडल आप अपने चारो ओर बना लेंगे जिस प्रकार एक दृश्य ताँबे का टुकडा घुलाव में अदृश्य ताँबे के टुकडे को भी खींच लेता है। जो हमेशा आशावादी है, जिसे अपनी शक्तियो पर विश्वास है, जो साहसी है और जो धुन का पक्का है वह अपने अनुकूल शक्तियाँ प्राप्त कर लेता है।

हर एक विचार का अपना महत्व है और उसे आपको भोगना पडता है। विचारों के ही कारण आपका शरीर सबल होता है, विचारो के ही कारण आपका मस्तिष्क मजबूत होता है, विचारों के ही कारण आपको व्यवसाय मे सफलता मिलती है, और विचारो के ही कारण आप दूसरों को सुख दे सकते हैं। जिस प्रकार की आपकी चित्त वृत्ति होगी उसी प्रकार का आपको उसका परिणाम भी मिलेगा। जिस प्रकार रसायन शास्त्र के नियम होते हैं उसी प्रकार के नियम विचार शास्त्र के भी होते हैं। रसायन शास्त्र उन्हीं तत्वों पर सीमित नही है जिन्हे हम देखते है। जिन तत्वों को हम इन चर्मचक्षुओ से नही देख सकते उनकी संख्या देखे हुए तत्वों से दस हजार गुना से भी अधिक होती है। महात्मा ईसा ने कहा था, "जो तुमसे घृणा करते हैं उनकी तुम भलाई करो।" यह कथन एक वैज्ञानिक तथ्य और स्वाभाविक नियम है। यदि तुम भलाई करोगे तो प्रकृति की शक्ति तुम्हें मिलेगी और तुम्हारा भला होगा। यदि तुम बुराई करोगे तो तुमको नष्ट करने वाले तत्व आकर तुम्हारे पास जमा हो जायेंगे। जब हमारी आँखें खुलेंगी तो हम अपने बचाव के लिये भलाई करेंगे। जो घृणा करते हुए जीवित रहते हैं वे घृणा करते हुए मरेंगे भी। अथवा जो तलवार के बल पर जीवित रहते

हैं वे तलवार की मार से मरते भी हैं। यदि तुम किसी का बुरा सोचते हो तो एक प्रकार से तुम उस पर तलवार चला रहे हो। यदि बदला लेने के लिये तुम तलवार उठा रहे हो तो तुम और भी बुरा कर रहे हो।

एक विद्वान् ने कहा है, "आकर्षण का नियम प्रत्येक क्षेत्र में अपना काम करता है और जिसको हम चाहते हैं या जिसकी हम इच्छा करते हैं उसे हम अपनी ओर खींचते हैं। यदि हम एक चीज की इच्छा करें और किसी अन्य की आशा करें तो हमारा ऐसा करना उन घरों के समान है जिनमें दरारें पड़ गई हैं और जो शीघ्र ही गिरने वाले हैं। जिसकी तुम्हें इच्छा है उसी को प्राप्त करने की आशा करो तो तुम उसी को अपनी ओर खींचोगे। किसी प्रकार का भी विचार तुम अपने मन में लाओ तो जब तक तुम उसे रक्खे रहोगे तब तक तुम चाहे पृथ्वी पर घूमो या समुद्र की सैर करो, उसी के समान विचारों को तुम अपनी ओर खींच सकोगे। विचार हमारी अपनी जायदाद है और उन्हें हम जैसा चाहें वैसा इच्छानुसार मोड़ सकते हैं क्योंकि ऐसा करने की हममें क्षमता रहती है।"

हमने अभी मन की आकर्षण शक्ति के बारे में कहा है। अब हम श्रद्धा के बारे में कहेंगे। विचार शक्तियों से उत्पन्न उस इच्छा को श्रद्धा कहते हैं जिसके पूर्ण होने की आशा हो। जितनी अधिक उस श्रद्धा या उत्कट इच्छा के पूर्ण होने की आशा होगी उतनी ही अधिक वह हमें अपनी ओर खींचेगी और उसका स्वरूप अदृश्य से दृश्य और आध्यात्मिक से भौतिक होगा।

यदि उस श्रद्धा में सन्देह की मात्रा उत्पन्न हो गई तो वह श्रद्धा बिलकुल समाप्त हो जायगी। फिर उसकी पूर्ति कभी न हो सकेगी।

लगातार दृढ़ आशा से सींची जाकर वह एक आकर्षक शक्ति बन जाती है जिसकी सफलता अनिवार्य है।

श्रद्धा के बारे मे जो बडी बडी बातें कही जा रही है, श्रद्धा से जो बडी बडी आशायें की जाती हैं वे सब झूठी कोरी बातें नहीं हैं किन्तु वैज्ञानिक सचाइयाँ है और उनका संचालन अटूट नियमो द्वारा होता है। इन शक्तियो के भीतर जो सिद्धान्त काम कर रहे हैं उनकी खोज हम अपनी प्रयोगशालाओ मे कर रहे हैं। उनके प्रयोग हम समझ बूझ कर काम मे ला रहे हैं; आँख बन्द करके नहीं, जैसा अभी तक होता आया है।

'इच्छा शक्ति' के बारे मे भी बहुत कुछ कहा जा चुका है। कई बार इस पर विवेचना की गई है और विद्वानों ने इसे एक 'शक्ति' कहा है। 'इच्छा शक्ति' भी विचारों को किसी एक विषय की ओर केन्द्रित करती है और जितना अधिक वे केन्द्रित होगे उतना ही अधिक काम मे दृढता आवेगी और हमे सफलता मिलेगी।

'इच्छा शक्ति' दो प्रकार की होती है, एक मानवी और दूसरी ईश्वरीय। मानवी इच्छा-शक्ति सांसारिक लोगों की होती है। इसका सम्बन्ध मन और शरीर से होता है। यह इच्छा-शक्ति उन लोगो की है जो यह नही समझते कि वर्तमान जीवन से भी परे एक जीवन है और यदि उस जीवन का साक्षात्कार कर लिया जाय तो उससे बहुत ही अधिक सच्चा सुख मिल सकता है। ईश्वरीय इच्छा-शक्ति पारलौकिक होती है। यह इच्छा-शक्ति उन लोगों की होती है जो अपने को और ईश्वर को एक समझते हें और जो ईश्वरीय इच्छा-शक्ति के संयोग से

अपनी इच्छा-शक्ति का उपयोग करते हैं। "तुम्हारा प्रभु तुम सबसे बडा है।" इसको याद रक्खो।

मनुष्य की इच्छा-शक्ति परिमित है। नियम कहता है कि इसका जोर यहाँ तक रहेगा। इसके आगे नहीं। ईश्वरीय इच्छा शक्ति मे कोई बन्धन नही है। वह सर्वोपरि है। नियम कहता है कि दुनिया भर की चीजें आपकी हैं, शर्त यही है कि आपकी इच्छा-शक्ति ईश्वरीय इच्छा-शक्ति से मिलकर काम करती रहे। जितना अधिक मनुष्य मिलकर काम करेगा, उतना ही अधिक उसका महत्त्व बढ़ेगा और तब यह स्थिति आवेगी कि, "तुम जब किसी चीज के लिये हुक्म दोगे' तो उसकी पूर्ति तुरन्त होगी।" जीवन की सब से बडी सफलता और जीवन का सब से बडा बल यह है कि हम ईश्वर से अपना सम्बन्ध रक्खें।

जीवन की दैनिक सफलता ईश्वर के सम्बन्ध पर ही निर्भर है। ईश्वर सर्वश्रेष्ठ और सर्वव्यापी है। सदा की भाँति वह संसार को उत्पन्न करता है, उसे स्थिर रखता है और उस पर शासन करता है। हमारे और आपके जीवन पर भी उसी का शासन है। हम उसे हर समय अपने पास नहीं देखते। हम प्रायः यही सोचते हैं कि दुनिया का काम शुरू करके वह चला जाता है। किन्तु बात ऐसी नहीं है।

जितना अधिक हमें यह विश्वास होगा कि ईश्वर कण कण में व्याप्त है और वह सर्वश्रेष्ठ है उतना ही हमें उससे बल मिलेगा और हमारा जीवन ईश्वरीय जीवन होगा। जितना हमें इस बात का विश्वास होगा कि हममें ईश्वर का ही अंश है, हम उसी के बल से सब काम करते हैं, संसार का काम उसी के शासन से चल रहा है, सब प्राणियों

मे उसी की झलक दिखलाई पड रही है, और हम और ईश्वर एक ही है उतना ही हमे ईश्वरीय गुण प्राप्त होगे और उन्हे हम अपने जीवन मे कार्यरूप मे परिणत करके दिखावेंगे। सर्वव्यापी और सर्वश्रेष्ठ ईश्वर से हम जितना अधिक सम्बन्ध रक्खेंगे और जितना अधिक हमारा रुझान उसकी ओर होगा उतना ही अधिक ईश्वरीय बुद्धि और ईश्वरीय बल हमे प्राप्त होगा।

अपनी बुद्धि द्वारा ही हम अपनी आत्मा और अपने भौतिक शरीर का सम्बन्ध कायम रखते हैं जिससे हमारी आत्मा शरीर के द्वारा ससार के सारे काम करती है। विचारमय जीवन को भीतर से प्रकाश लगातार मिलता रहता है। हम जितना विचार करेंगे कि हम और ईश्वर एक हैं और प्रत्येक आत्मा मे वही व्यक्तिगत रूप से झलक रहा है उतना ही अधिक प्रकाश हमे भीतर से मिलेगा।

इस प्रकार हमे भीतर से मार्गप्रदर्शन मिलता है, जिसे हम 'अन्तर्ज्ञान' कहते हैं। जिस प्रकार छू कर हमे इन्द्रियो का ज्ञान होता है उसी प्रकार अन्तर्ज्ञान से हमे अपने आध्यात्मिक स्वरूप का ज्ञान होता है। आध्यात्मिक अन्तर्ज्ञान के कारण ही मनुष्य ईश्वर से अपना सम्बन्ध स्थापित करता है, प्रकृति और जीवन के भीतरी तत्वो की जानकारी प्राप्त करता है, अपने को और ईश्वर को समान समझता है, अपने देवतुल्य स्वभाव को समझता है और अन्त मे इस बात का अनुभव करता है कि मैं ईश्वर का पुत्र हूॅ। ईश्वर की सहायता से अन्तर्ज्ञान द्वारा जब हमे आध्यात्मिक श्रेष्ठता और ईश्वरीय प्रकाश का ज्ञान होता है तब हम उन सब चीजो के असली तत्वो को समझते हैं

जिनकी ओर हम आकृष्ट होते हैं और जिनमें हमारी दिलचस्पी होती है।

जिस प्रकार हमारी इन्द्रियों को बाहरी चीजों का ज्ञान होता है उसी प्रकार अंतर्ज्ञान से हमें आध्यात्मिक चीजों का ज्ञान होता है। अन्तर्ज्ञान से ही हम स्वतन्त्रता पूर्वक हर चीज का ज्ञान प्राप्त करते हैं और हर चीज की सचाई की जानकारी हमे होती है। आत्मा की आध्यात्मिकता को मानने और उसके द्वारा आध्यात्मिक बातों को ग्रहण करने से ही हमारा खिंचाव तमाम आध्यात्मिक विषयों की ओर होता है।

अपनी उत्कट इच्छा और विश्वास द्वारा जब मनुष्य अपनी और ईश्वर की एकता समझ लेगा तो उसकी आत्मा को ईश्वर की ओर से स्फूर्ति और प्रकाश मिलता रहेगा और वह एक ऋषि और प्रभु बन जायगा।

इसी अस्थि मांसमय शरीर में आध्यत्मिक जीवन का ज्ञान प्राप्त करके मनुष्य का रुझान ईश्वर की ओर होता है। वह बिना किसी की सहायता और बिना किसी बाहरी दबाव के स्वच्छन्दता पूर्वक पक्षपात छोड़कर अपना काम करता है। आध्यात्मिक दृष्टिकोण से सब वस्तुओं को देखकर वह उनमें ईश्वर को ही देखता है। अन्तर्ज्ञान के द्वारा जब वह अपनी आत्मा को ईश्वर मे मिला देता है तो उसे तुरन्त अपने आप मालूम हो जाता है कि इन चीजों की वास्तविकता क्या है और ईश्वर ने इन्हें क्यों निर्मित किया है? कुछ लोग इसे आत्मा की आवाज कहते हैं और कुछ ईश्वर की आवाज। कुछ इसे छठवीं

ज्ञानेन्द्रिय समझते हैं । वास्तव मे यह हमारी भीतरी आध्यात्मिक इन्द्रिय है जिसे अन्तःकरण कहते हैं ।

जितना अधिक हम अपने को पहिचानेंगे, जितना अधिक हम अपनी एकता ईश्वर के साथ स्थापित करेंगे, जितना अधिक ईश्वर की ओर हमारा रुझान होगा उतना ही अधिक सफाई के साथ यह आत्मा की आवाज या दूसरे शब्दो मे ईश्वर की आवाज हमसे बातें करेगी और जितना ही अधिक हम इस आवाज को सर्वमान्यता देंगे और उसकी आज्ञा को मानेंगे उतना ही अधिक स्पष्ट वह बोलेगी। धीरे-धीरे वह समय आयेगा जब उसकी इच्छा से काम करने मे हमसें कभी भूल न होगी ।

जीवन की पूर्णता—शारीरिक स्वास्थ्य और शक्ति

ईश्वर अनन्त जीवन की अन्तरात्मा है; यदि हम इस जीवन का आनन्द लेना चाहते हैं और ईश्वरीय प्रवाह मे हमे अपने को खोलने की शक्ति है तो हमें इस शरीर के ऊपर भी ध्यान देने की जरूरत है। इस जीवन मे मनुष्य को कोई बीमारी न होना चाहिये, यदि यह बात सच है तो जिस शरीर मे बीमारी बिना रोक टोक के घुसती है वहाँ बीमारी का नामोनिशान भी न होना चाहिये।

आरम्भ में ही हमे यह मान लेना चाहिये कि जहाँ तक इस भौतिक शरीर से सम्बन्ध है, जीवन का स्रोत भीतर से बाहर प्रवाहित होता है। अमिट ईश्वरीय नियम कहता है, "जैसा भीतर वैसा बाहर, भीतर कारण और बाहर उसका फल।" दूसरे शब्दों मे भीतरी विचारों, नाना प्रकार की मानसिक अवस्थाओ, भावनाओ आदि का प्रभाव इस भौतिक शरीर पर पडता है।

एक सज्जन कहते हैं, "लोगो का कहना है कि मन का प्रभाव शरीर पर पडता है किन्तु मैं इस पर अधिक विश्वास नहीं करता।" क्या खूब ? क्या तुम भी ऐसा ही सोचते हो ? एक सज्जन एकाएक कोई खबर लाते हैं। उसे सुनकर तुम पीले पड जाते हो, कांपने लगते हो अथवा मूर्छित होकर गिर पडते हो। मस्तिष्क के द्वारा यह खबर तुम तक पहुँचती है। एक मित्र तुमको भोजन के समय कुछ बुरा भला कहता

है और उससे तुमको आघात पहुँचता है। अभी तक बडे आनन्द से तुम भोजन कर रहे थे किन्तु अपशब्द सुनते ही तुम्हारी क्षुधा न मालूम कहाँ चली गई। जो अपशब्द कहे गये वे मस्तिष्क द्वारा भीतर घुसे और तुमको दुःख पहुँचा।

देखो तो जरा! एक नवजवान लडखडाता हुआ जा रहा है, और मार्ग मे जरा भी बाधा उपस्थित होने पर धडाम से गिर पडता है। ऐसा क्यो? क्योकि उसका मस्तिष्क कमजोर है, उसकी बुद्धि मंद है। दूसरे शब्दों में मन के कमजोर होने से शरीर भी कमजोर हो जाता है। जो मस्त है उसके सब काम मस्ती से होंगे। जिसके दिमाग में शंका है उसके सब काम शंका पूर्ण होगे।

एकाएक संकट काल उपस्थित होता है। तुम कमजोरी दिखाते हो और मारे डर के कॉपने लगते हो। तुम कमजोर बनकर एक कदम भी आगे क्यों नहीं रख रहे हो? तुम क्यों कॉप रहे हो? और तब भी तुम्हारा यही विश्वास है कि मन का शरीर पर बहुत ही कम प्रभाव पडता है। कभी तुम पर क्रोध सवार हो जाता है। थोड़ी देर बाद तुम कहते हो कि मेरे सिर मे दर्द है। तब भी तुम्हारा विश्वास है कि विचारो और भावनाओ का शरीर पर प्रभाव नहीं पडता।

एक दो दिन हुए, मै अपने मित्र से 'चिन्ता' के बारे मे वार्तालाप कर रहा था। मेरे मित्र ने कहा, "मेरे पिता को बडी चिन्ता रहती है।' मैने उत्तर दिया, "तुम्हारे पिता स्वस्थ और मजबूत नहीं हैं।" मैंने फिर उनके पिता की दशा का वर्णन शुरू किया और उन कष्टों को भी कहा जिनसे वे परेशान रहते हैं। मेरे मित्र मेरी ओर आश्चर्य

पूर्ण दृष्टि से देखने लगे और कहा, "अरे भाई, तुम मेरे पिता को तो जानते भी नहीं हो, फिर तुमने उनके कष्टों को कैसे बता दिया जिनसे वे व्याकुल रहते हैं।" मैंने कहा कि तुमने अभी अभी कहा है कि पिता जी को चिन्ता रहा करती है। जब यह बात तुमने कही तो तुमने उसके कारण की ओर भी संकेत कर दिया। तुम्हारे पिता की दशा का वर्णन करने मे मैंने कारण को उसके विशेष कार्य (फल) से मिला दिया।

भय और चिन्ता शरीर के स्रोत को बन्द कर देते हैं जिसके कारण जीवन का स्रोत मन्द-मन्द बहने लगता है। आशा और शान्ति शरीर के श्रोत को खोल देते हैं जिससे जीवन का स्रोत बडे वेग से बहता है और उसके सामने कोई बीमारी शरीर के भीतर ठहर नहीं सकती।

कुछ दिन हुए एक स्त्री मेरे एक मित्र से कह रही थी कि मुझे एक बडा शारीरिक कष्ट है। मेरे मित्र को मालूम था कि इस स्त्री और उसकी बहिन के बीच मनमोटाव है। उसने उसके कष्टों की कहानी ध्यान से सुनी और फिर उसके चेहरे की ओर घूर कर उसने बडे प्रेम और दृढ़ता से कहा, "अपनी बहन को क्षमा करो।" स्त्री ने मित्र की ओर बडे आश्चर्य्य से देखा और कहा, "मै अपनी बहन को नही क्षमा कर सकती," उसने उत्तर दिया, "अच्छी बात है। तो फिर अपनी गठिया को पालती रहो और कष्ट सहती रहो।"

कुछ सप्ताह बाद हमारे मित्र उस स्त्री से फिर मिले। उसने आकर कहा, "मैं अपनी बहन से मिली थी। उसे मैंने माफ कर दिया है। हम लोगों मे फिर से मेल हो गया है। जिस दिन से मेरा उससे मेल हुआ, मेरा शारीरिक कष्ट कम होने लगा और आज तो मेरा पुराना रोग सब समाप्त हो गया है। इस समय मुझमें और मेरी बहन मे

इतना घनिष्ठता है कि हम लोग बिना एक दूसरे के रह नहीं सकते।" यहाँ भी एक दूसरे प्रकार का कारण उत्पन्न हो गया और उसका फल भी अच्छा ही हुआ।

नीचे दी हुई घटना के समान और भी बहुत सी सच्ची घटनायें मेरे देखने मे आई है। एक मा को थोडी देर के लिये बडा क्रोध आया जिससे उसका दूध विषैला हो गया। दूषित दूध पीने से उसका नन्हा बच्चा एक घटे के भीतर मर गया। इसी तरह की दूसरी घटनाओ मे बच्चा सख्त बीमार पड गया और उसके पेट मे ऐंठन होने लगी।

एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक ने नीचे लिखे प्रयोगो को कई बार आजमा कर देखा है। बहुत से आदमी एक गरम किये हुए कमरे मे खडे किये गये। उनमें से हरएक किसी न किसी विकार के आवेश मे था। एक मे क्रोध था और दूसरों मे इसी प्रकार के अन्य विकार थे। वैज्ञानिक ने प्रत्येक मनुष्य के शरीर से पसीने की एक बूँद ले ली। उसके विश्लेषण के बाद वह इस बात को सही सही बता सका कि किस पुरुष मे किस विकार की अधिकता है। ठीक वही नतीजा उनके थूक के विश्लेषण के बाद भी निकला।

एक बडे मेडिकल कालेज के सुयोग्य स्नातक और अमेरिका के प्रसिद्ध लेखक ने, जिन्होने शरीर शास्त्र का अच्छा अध्ययन किया है, और जिन्होंने इस बात का पता लगाया है कि किन-किन शक्तियो से शरीर का निर्माण होता है और किन-किन शक्तियों से उसका नाश होता है, कहा है, "मस्तिष्क मनुष्य शरीर का रक्षक है। हरएक विचार चारो ओर अपना प्रभाव डालता है। रोग, वीर्यनाश और सब प्रकार के पापों के भयानक मानसिक चित्र आत्मा में कंठमाला

और कोढ़ पैदा करते हैं। वे ही रोग फिर आगे चलकर शरीर मे हो जाते हैं। क्रोध थूक मे विष उत्पन्न कर देता है जो जीवन के लिये भयानक है। तीव्र भावावेग न केवल हृदय को कुछ घंटो मे कमजोर कर डालते हैं बल्कि मनुष्य को मार भी डालते हैं और पागल बना देते हैं। वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि पापो से जो पसीना शरीर मे निकलता है उसमे और मामूली पसीने मे अन्तर है। पापी के पसीने का विश्लेषण करके लोग बतला देते हैं कि उसके मस्तिष्क का क्या हाल-चाल है। उसका पसीना सेलेनिक (Selenic) एसिड से स्पर्श करता है जिससे उसका रंग गुलाबी हो जाता है। लोगों को अच्छी तरह मालूम है कि डर से हजारों पापी मर जाते हैं और हिम्मत से उनको बल मिलता है।"

क्रोध से मां के दूध में विष पैदा हो सकता है जिससे दूध पीने वाला बच्चा मर सकता है। प्रसिद्ध घुडसवार रेयरी (Rarey) ने कहा है कि क्रोध भरे एक शब्द से भी घोड़े की नाडी का चलना एक मिनट में १० बार बढ़ सकता है। यदि क्रोध का प्रभाव घोड़े ऐसे जानवर पर हो सकता है तो मनुष्य प्राणी और विशेष कर बच्चे पर उसका कितना प्रभाव पडता होगा। प्रचण्ड मानसिक आवेगों से कै होने लगती है। प्रचण्ड क्रोध या भय से कमल रोग हो जाता है। प्रचण्ड क्रोध के आवेग से मिरगी का रोग हो जाता और मृत्यु भी हो जाती है। एक ही रात के मानसिक कष्ट ने तो कई आदमियो के जीवन को समाप्त कर दिया है। शोक से, बहुत पुरानी ईर्ष्या मे और शरीर को धीरे-धीरे खोखला करने वाली लगातार चिन्ता से मनुष्य पागल हो जाता है। ऊल-जलूल विचारों और द्वेषपूर्ण चित्तवृत्ति मे से

बीमारी पैदा होती है। पाप द्वेषपूर्ण दिमाग में ही पैदा होते हैं और वहीं उनकी वृद्धि होती है।

इन सबसे हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं, जिसे हमने विज्ञान से सिद्ध किया है, कि नाना प्रकार के मानसिक विचारों, भावनाओ और विकारों का शरीर पर भिन्न-भिन्न प्रभाव पडता है। यदि ये बढ़ गये तो इनसे विशेष-विशेष प्रकार की बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं और वे फिर जड पकड लेती हैं।

मानसिक विकारों से बीमारियाँ किस प्रकार पैदा होती हैं, इसके बारे मे भी दो एक शब्द यहाँ लिखना आवश्यक है। मान लीजिए, एक मनुष्य में क्रोध की मात्रा अधिक है तो शरीर के भीतर एक प्रतिक्रिया उत्पन्न हो जाती है और शरीर के रस बजाय अपना मामूली काम करने के विषैले और नष्टकारी हो जाते हैं। यदि यह क्रिया इसी प्रकार बहुत समय तक चलती रही तो विष एकट्ठा होता जाता है जिससे एक नये प्रकार की बीमारी पैदा हो जाती है और वही फिर पुरानी बीमारी हो जाती है। इसी प्रकार इनके विरोध की भावनाओ से, जैसे दया, प्रेम, उदारता शुभ कामना, शरीर के रस स्वस्थ और साफ हो जाते हैं जिनसे शरीर को पोषण मिलता है। शरीर के सब द्वार खुलकर बिना किसी रुकावट के स्वतंत्रता पूर्वक काम करते हैं। जीवन की शक्तियाँ उनमें से उछलती हुई प्रवाहित होती रहती हैं और कुछ समय के अनंतर बीमारी पैदा करने वाले विष को भी वे नष्ट कर देती हैं जिससे बीमारी पैदा होती है।

एक डाक्टर किसी रोगी को देखने के लिये जाता है। वह प्रातःकाल कोई दवा भी नहीं देता तब भी उसके जाने से रोगी की दशा

सुंघने लगती है। वह अपने साथ स्वास्थ्य की भावना ले जाता है। उसके चेहरे की चमक और व्यवहार का रोगी पर अच्छा प्रभाव पडता है। वह बीमार के पास आशा लेकर जाता है और उस आशा को वही छोडकर चला आता है। उसकी आशा और शुभकामना का रोगी के मन पर जबरदस्त प्रभाव पडता है और उसके मन का प्रभाव उसके शरीर पर पडता है। इस प्रकार मन को अच्छा करके रोगी की शारीरिक दशा सुधारी जाती है।

"तो फिर समझो कि जिन वस्तुओं से मन प्रफुल्लित तथा स्थिर रहता है उन्हीं वस्तुओं से शरीर भी स्वस्थ रहता है। इसलिये सबसे महत्वपूर्ण स्पंदन जो मनुष्य के हृदय में निहित है वह है आशा। आशा आत्मा को धैर्य तथा जीवन प्रदान करती है।"

प्रायः एक कमजोर स्वास्थ्य वाले को दूसरे से हमने कहते सुना है, "भाई, जब तुम आते हो तो मैं अपने को अच्छा समझने लगता हूँ।" इस कथन के भीतर एक गहरा वैज्ञानिक सत्य छिपा हुआ है। बुद्धिमानों की जबान ही स्वास्थ्य है। मानवी मस्तिष्क के सुझाव की शक्ति बड़ी विचित्र और अध्ययन का दिलचस्प विषय है। मस्तिष्क द्वारा बहुत ही विचित्र और बलशाली शक्तियों से काम लिया जा सकता है। ससार का एक बहुत ही बडा वैज्ञानिक और शरीर-विश्लेषक कहता है कि यह सारा शरीर भी बिल्कुल बदला जा सकता है और एक वर्ष में ही इसका पुनर्निर्माण हो सकता है और कुछ सप्ताहों के भीतर इसके कुछ हिस्से तो फिर से बनाये जा सकते हैं।

लोग मुझसे पूछते हैं कि क्या तुम्हारा मतलब यह है कि भीतरी

शक्तियों द्वारा रोगी का शरीर स्वस्थ बनाया जा सकता है। जी हाँ, बनाया जा सकता है और बहुत ही स्वस्थ। शरीर को स्वस्थ बनाने की एक यही प्राकृतिक विधि है। दवाओं का सेवन तो एक अप्राकृतिक विधि है। दवाइयाँ केवल इतना काम करती है कि वे बीच की बाधाओं को दूर कर देती हैं ताकि जीवन की शक्तियो को काम करने का सुअवसर मिले। किन्तु चगे होने की क्रिया तो भीतर से शुरू होती है। संसार के एक लब्ध प्रतिष्ठ डाक्टर ने अन्य डाक्टरो के सामने यह कहा था, "डाक्टरो ने सबसे आवश्यकीय विषय—जिसे जीवन का मुख्य विषय कहना चाहिये—भोजन पर गहराई से नहीं सोचा है। भौतिक तत्व (matter) का मन पर क्या प्रभाव पडता है इसी विषय पर उन्होने घूम फेर कर अध्ययन किया है। इसने बहुत ही बुरी तरह से डाक्टरो की विकास शक्ति पर अपना बुरा प्रभाव डाला है। आध्यात्मिक शक्ति द्वारा रोग अच्छे किये जा सकते हैं, इस पर अभी बहुत ही प्रारम्भिक काम हुआ है। किन्तु अब वर्तमान शताब्दी में प्रकाश चारों ओर बेग से फैल रहा है अतएव मनुष्य अब भीतरी शक्तियों की खोज करने लगे हैं। अब डाक्टरो ने उनके साथ काम करना शुरू किया है जो मानसिक औषधि शास्त्र की खोज कर रहे हैं। अब इस मानसिक शक्ति पर सन्देह करके देर करने की जरूरत नही है। जो देर करेगा वह नुकसान उठावेगा। इस मानसिक शक्ति के आन्दोलन मे सारी जाति लगी हुई है।

जिस विषय की हम चर्चा कर रहे हैं उस विषय पर गत वर्षों मे बहुत ही मूर्खता पूर्ण काम हुआ है। लोगों ने दावे के साथ कहा है कि हमने अमुक अमुक अनुसन्धान किये हैं। वास्तव मे वे निरर्थक हैं।

इन लोगों ने भीतरी शक्तियों का विरोध भी नही किया किन्तु उनके काम से और इन शक्तियों से कोई सम्बन्ध भी नहीं है। यही बात पुराने समय के किसी भी धर्म या स्मृति पर कही जा सकती है। किन्तु समय के साथ ये वेहूदा बातें दूर हो रही हैं और महान् शाश्वत सिद्धान्तों की महत्ता अब अधिकाधिक बढ़ रही है।

मैं कुछ ऐसे रोगियों को जानता हूँ जो इन भीतरी शक्तियो के प्रयोग से ही थोडे समय में चंगे हो गये हैं। कुछ तो ऐसे मरीज थे जिनको डाक्टरों ने जवाब दे दिया था। पुराने जमाने के हरएक धर्म में ऐसे रोगियो का वर्णन पाया जाता है जिनको महान् पुरुषो ने भीतरी आध्यात्मिक शक्तियों द्वारा अच्छा कर दिया है। यदि यह शक्ति पहिले थी तो इसे अब क्यों न होनी चाहिये ? यह शक्ति अब भी मौजूद है और समय आने वाला है जब इस शक्ति के प्रभाव को लोग उसी प्रकार समझेंगे जैसे पुराने समय के लोगों ने समझा था।

एक मनुष्य किसी रोगी की चिकित्सा बड़े परिश्रम से करता है। किन्तु इस काम में उसे रोगी का पूर्ण सहयोग प्राप्त होना चाहिये। जिन-जिन रोगियों को महात्मा ईसा ने चंगा किया था उनसे वे हमेशा सहयोग चाहते थे। उनका प्रश्न रोगी से, यही होता था, "क्या तुम्हारा विश्वास मुझ पर है ?" इस प्रकार रोगी की भीतरी जीवनी शक्ति को प्रोत्साहित करके वे उसे अच्छा करते थे। यदि किसी की शारीरिक दशा बडी कमजोर है, यदि उसका नाडी मंडल शक्तिहीन हो गया है, यदि बीमारी के कारण उसका मस्तिष्क मजबूती से काम नहीं करता तो वह दूसरों की सहायता और सहयोग प्राप्त करे। इससे भी उसके लिये

अच्छा यह होगा कि वह अपनी भीतरी शक्तियों की सबलता पर विश्वास करे।

एक दूसरे को भले ही अच्छा कर दे किन्तु यदि वह हमेशा के लिये चंगा होना चाहता है तो उसे स्वयं अपने को चंगा करना होगा। इस प्रकार भीतरी शक्तियों का ज्ञान प्राप्त कराके एक आदमी गुरू बन सकता है किन्तु स्थायी रूप से चगा होने के लिये उसे स्वयं परिश्रम करना पडेगा। महात्मा ईसा यही कहा करते थे, "जाओ और भविष्य मे पाप न करो, तुम्हारे सब पाप माफ किये गये।" इस प्रकार उनके कथन का मतलब यही होता था कि तुम्हारे सब रोग और उनसे उत्पन्न होने वाले दूसरे रोग, परोक्ष या अपरोक्ष रूप से ईश्वरीय नियम तोडने के कारण जानबूझ कर या अपने आप तुम्हारे पास आये हैं।

तुम जब तक पाप करोगे तब तक तुम्हे कष्ट भोगना ही पडेगा— चाहे तुम इसे पूर्व जन्म का संस्कार समझो या इसी जन्म का, किन्तु है परिणाम इसी जन्म का। जिस समय तुम ईश्वरीय नियम तोडना छोड दोगे, जिस समय तुम ईश्वरीय कानून का अक्षरशः पालन करोगे उसी समय तुम्हारे कष्ट का कारण नष्ट हो जायगा और यद्यपि पूर्व जन्म के पापो के परिणाम भले ही एकट्ठे हो किन्तु कारण अवश्य हट जायगा और आगे पाप बढेगा नही। पूर्व जन्म के पापो से जो तुम्हारी पतित अवस्था हो गई है वह भी ठीक-ठीक ईश्वरीय नियम का पालन करने पर, नष्ट हो जायगी।

जल्द और पूर्णरूप से ईश्वरीय नियम का पालन उसी समय हो सकता है जब मनुष्य उस ईश्वर के साथ अपनी एकता का अनुभव करता है जो सब का जीवन है। ऐसा समझने से कोई बीमारी नही होगी

और शरीर के अन्दर जो कूडा कर्कट गया हुआ है वह भी दूर हो जायगा, यानी पुरानी बीमारी भी दूर हो जायगी। "मै अपनी रूह तुममे डालूँगा और तुम जीवित रहोगे।" महात्मा ईसा का यह कथन बिल्कुल सत्य है।

जिस समय एक पुरुष समझ लेता है कि मैं ईश्वर का अश हूँ उसी समय वह एक पवित्रात्मा बन जाता है, मिट्टी का पिण्ड नहीं रह जाता। अभी जो वह यह समझे हुए है कि मै तमाम बीमारियो से भरा हुआ शरीर ही हूँ, वैसी भूल वह फिर नहीं करता। वह महसूस करता है कि मै शरीर का निर्माणकर्ता और उसका स्वामी हूँ। शरीर तो मेरे रहने का घर है। जब वह महसूस कर लेता है कि मैं शरीर का स्वामी हूँ तो शरीर उसके ऊपर हावी नहीं हो सकता। जो शक्तियाँ उसकी मूर्खता से अपना अधिकार शरीर पर जमा लेती हैं उनकी वह परवाह नहीं करता। जिस समय वह महसूस करता है कि मैं ब्रह्म हूँ और मैं सबके ऊपर हूँ, तो बजाय उन शक्तियो से डरने के जिनसे वह अभी तक अपने को अलग समझता था, वह उनसे प्रेम करने लगता है। अथवा वह उनको इस प्रकार हुक्म देता है कि वे उसके वश मे हो जाती हैं। जो पहले उनका गुलाम था वही अब उनका मालिक हो जाता है। जिस समय हम किसी वस्तु मे प्रेम करने लगते हैं तो वह फिर हमे हानि नही पहुँचा सकती।

आजकल ऐसे हजारो आदमी दिखलाई पडते हैं जिनके शरीर कमजोर हैं और जो शारीरिक कष्ट भोगते हैं। वे अच्छे मजबूत और स्वस्थ हो सकते हैं यदि वे ईश्वर को अपना काम करने का अवसर दें। ऐसे लोगो से मेरा कहना है कि ईश्वरीय प्रवाह जो तुममें बह रहा है,

बन्द न करो। जितना तुम उससे अपना सम्बन्ध रक्खोगे उतनी ही शक्ति तुम्हारे शरीर के भीतर भरेगी और उससे शरीर के भीतर की संचित खराबी हट जायगी। महात्मा ईसा कहते हैं "मेरे शब्द उन लोगों को जीवन प्रदान करते हैं जो उनकी खोज करते हैं और उनको स्वास्थ्य भी देते हैं।"

एक नॉद पर से गन्दे पानी की धारा कई दिनों से बह रही है। गन्दगी धीरे-धीरे नॉद के अगल बगल और पेंदे मे जमा हो गई है। वह गन्दगी उस समय तक कायम रहेगी जब तक गन्दा पानी उसके ऊपर बहता रहेगा। उसके ऊपर से साफ पानी की धारा बहने दो तो जो गन्दगी जमा हो गई है वह थोड़े समय मे बह जायगी। नॉद बिलकुल साफ हो जायगी, देखने में वह बड़ी सुन्दर मालूम होगी, और उसका भद्दापन दूर हो जायगा। उसके ऊपर से जो पानी बहता है उससे उनको ताकत और स्वास्थ्य मिलेगा जो उसका उपयोग करेंगे।

इसी प्रकार जितना अधिक तुम अपने को और ईश्वर को समान समझोगे उतना ही तुम अपनी भीतरी गुप्त शक्तियो का उपयोग कर सकोगे और बीमारी के स्थान मे तुमको स्वास्थ्य मिलेगा, अशान्ति के स्थान में शान्ति और कष्ट के स्थान मे तुमको बढ़िया सुख और बल मिलेगा। इसके अलावा तुम उन लोगों को भी स्वास्थ्य और बल दे सकोगे जिनका सम्पर्क तुमसे होगा। हम लोगों को याद रखना चाहिये कि जिस प्रकार बीमारी छूत से बढ़ती है उसी प्रकार स्वास्थ्य भी सम्पर्क से बढ़ता है।

प्रायः मुझसे प्रश्न किया जाता है कि इन आध्यात्मिक सिद्धान्तों का प्रयोग कार्य्य रूप मे किस प्रकार परिणत किया जाय जिनसे हम

पूर्ण स्वास्थ्य का आनन्द ले सकें और यदि कोई बीमारी आ जाय तो उसे हम अच्छा कर सकें। इस प्रश्न का उत्तर यह है कि प्रत्येक पुरुष पहले इस बड़े सिद्धान्त को समझे कि मनुष्य और ईश्वर समान हैं और इसके बाद वह इस बात का अनुभव करे कि उसे सफलता प्राप्त करने के लिये स्वयं प्रयत्न करना होगा। एक आदमी दूसरे को सफलता न दिला सकेगा।

मन मे विचार लाते ही कि मै तन्दुरुस्त हूँ, मन की भीतरी शक्तियाँ अपना काम करने लगेंगी जिससे हमारा स्वास्थ्य कुछ न कुछ अच्छा ही होगा। इसके बाद इस बड़े सिद्धान्त पर विचार करना होगा कि हम और ईश्वर दोनो एक हैं। इस पर केवल विचार से काम न चलेगा किन्तु इसका अनुमान करना होगा कि हम और ईश्वर एक ही हैं, तब कहीं हमारा काम होगा।

जितना तुम अपने को और उस ईश्वर को एक ही मानोगे जिससे तमाम प्राणी उत्पन्न हुए हैं और बराबर उत्पन्न हो रहे हैं और जितना अधिक विश्वास के साथ तुम अपने को ईश्वर की ओर उन्मुख किये रहोगे उतना ही अधिक तुम ऐसा वातावरण पैदा कर दोगे कि कुछ समय में तुम्हारा शरीर भी पूर्ण स्वस्थ और ताकतवर हो जायगा। ईश्वरीय जीवन मे कोई बीमारी नहीं होती और जब तुम अपने को ईश्वर के समान ही समझने लगोगे और उसी की ओर तुम्हारा अधिक झुकाव होगा तो तुमको ईश्वरीय शक्ति मिलती जायगी और तुम्हारा अस्वस्थ जीवन स्वस्थ हो जायगा। इस प्रकार जीवन का स्वस्थ अथवा अस्वस्थ रखना तुम्हारे ही हाथ मे है।

कुछ लोग तो ऐसे भी देखने में आये हैं जिनको पूर्ण विश्वास हो

गया है कि हम और ईश्वर समान हैं। उन्होंने शीघ्र ही अपने को हमेशा के लिये स्वस्थ कर लिया है। जितना अधिक आपका विश्वास होगा उतना ही शीघ्र आप रोग मुक्त होंगे। आपका विश्वास बहुत पक्का हो, डिगने वाला न हो। कुछ लोग ऐसे भी हैं जिन्होंने धीरे धीरे कुछ समय के बाद यह अनुभव किया कि हम और ईश्वर एक हैं और इसके बाद वे पूर्ण स्वस्थ हो गये।

कुछ को तो ईश्वर से बड़ी सहायता मिलती है और कुछ नीचे लिखी विधि से चगे होते है।—"मन मे हमेशा शान्त रहने से, सबसे प्रेम करने से और शरीर के अन्दर इस बात का अनुभव करने से कि हम और ईश्वर एक ही हैं।" इस प्रकार सोचने से हमारे शरीर मे कोई बीमारी नहीं रह सकती। मनुष्य को फिर कहना चाहिये कि मै अपने शरीर को, जो बीमारी से भरा हुआ है, ईश्वर की ओर उन्मुख करता हूँ और उसकी शक्ति मेरे शरीर मे बराबर आ रही है और मेरा शरीर बराबर अच्छा हो रहा है। इस बात पर इतना उत्कट विश्वास करो कि ईश्वर की ओर से तुममे शक्ति का संचार होने लगे। विश्वास करो कि अच्छा होने का काम बराबर जारी है और इसी पर कायम रहो। बहुत से लोग किसी एक चीज की इच्छा करते हैं किन्तु आशा रखते हैं दूसरी चीज के पाने की। वे भलाई करने की अपेक्षा बुराई करने पर अधिक विश्वास करते हैं और इसलिये बीमार रहते हैं।

यदि मनुष्य दिन मे कई बार ईश्वर का ध्यान करे और हमेशा उसी प्रकार की मानसिक स्थिति रक्खे तो भीतरी शक्तियाँ अपना काम करेंगी और थोड़े समय मे वह रोग मुक्त होकर चंगा और सबल हो जायगा और उसका मन हमेशा शान्त रहेगा। इसमे आश्चर्य करने की

कोई बात नहीं है। ऐसा करके वह ईश्वरीय शक्ति को अपना काम करने के लिये प्रोत्साहित कर रहा है जो अपना काम कभी न कभी करेगी अवश्य।

मनुष्य के शरीर के किसी विशेष भाग में पीडा हो और यदि वह शरीर के साथ इसको विशेष रूप से ईश्वर की ओर उन्मुख रखना चाहता है तो उसे इस विशेष भाग पर अधिक ध्यान लगाना चाहिये जिससे ईश्वरीय शक्ति इस भाग पर विशेष रूप से आवे। स्मरण रखना चाहिये कि शरीर अच्छा तो हो जायगा किन्तु उसका प्रभाव स्थायी न रहेगा जब तक कि उसके कारण दूर न किये जायँगे। दूसरे शब्दों मे जब तक आप ईश्वरीय नियम तोडते रहेंगे तब तक आपकी बीमारी और आपकी तकलीफ दूर नहीं हो सकती।

हम और ईश्वर एक हैं, इसका अनुभव करने से शरीर का केवल रोगी भाग ही चंगा न हो जायगा प्रत्युत अच्छे शरीर में भी जीवन, फुर्ती और बल आ जायगा।

सब युगों और सब देशों में बिना किसी अन्य बाहरी सहायता के केवल भीतरी शक्ति द्वारा ही न मालूम कितने रोगी अच्छे किये गये हैं। अनेकों नाम और अनेकों साधनों द्वारा इस भीतरी शक्ति से काम लिया गया था किन्तु उनके भीतर काम करने वाला सिद्धान्त एक ही था जो अब भी मौजूद है। जब महात्मा ईसा ने अपने शिष्यों को बाहर भेजा तो उनकी एक ही आज्ञा थी कि बीमारों को चंगा करो, दुखियों को सुखी करो और लोगों को सत्पथ पर चलने का आदेश दो। पहले के महाधीशों मे चंगा करने की शक्ति थी और चंगा करना उनके कर्तव्य का एक अंश था।

यदि यह शक्ति पहले थी तो अब भी क्यों न होनी चाहिये। क्या पहले से अब ईश्वरीय कानून बदल गये हैं? नही, कानून सब वही हैं। तो फिर आजकल वह शक्ति क्यो नहीं है? क्योंकि आजकल आडम्बर बहुत हैं और उनके भीतर असलियत नही है। आडम्बर भीतरी शक्ति को नष्ट कर देता है और असलियत से जीवन और बल मिलता है। जो मनुष्य आडम्बर न करके वास्तव में ईश्वर के समक्ष जायगा उसको शक्ति मिलेगी जैसी कि पहले के लोगों को मिली है और वे दूसरो को भी प्रभावित करेंगे। ऐसे लोग जहाँ जायेंगे उनकी बातो को सब लोग सुनेंगे।

हमें बडी शीघ्रता से मालूम हो रहा है और बराबर मालूम होता रहेगा जैसे जैसे समय बीतेगा, कि सारी बीमारियो और उनसे होने वाले कष्ट विकृत मन और विकृत भावनाओं से उत्पन्न होते हैं। जिस मानसिक प्रवृत्ति से हम किसी वस्तु को ओर देखेंगे उसी प्रकार का हमे फल भी मिलेगा। यदि हम उससे डरेंगे तो उसका हानिकारक परिणाम हमारे लिये होगा। यदि हम शान्ति के साथ उसे देखेंगे और यह समझेंगे कि हमारी भीतरी शक्ति के सामने यह कोई चीज नही है तो उससे हमको हानि नहीं होगी।

कोई बीमारी हमारे शरीर को पकड नही सकती जब तक कि उसी प्रकार की कोई खराब वस्तु हमारे भीतर नहीं होगी जिससे बीमारी उत्पन्न हो जाती है। उसी प्रकार किसी प्रकार की विकृत अवस्था हमारे भीतर नहीं उत्पन्न हो सकती जब तक भीतर उसी प्रकार का कोई खराब विकार नही होता जो कि विकृत अवस्था को उत्पन्न कर देता है। जितनी जल्दी हम आत्मनिरीक्षण करेंगे और खराबी को दूर

करेंगे उतनी जल्दी हमारा कल्याण होगा। हमारे लिये यही उचित है कि जल्द से जल्द अपनी भीतरी खराबियो को दूर करके अपने जीवन को सुखी बनावें।

हमारा स्वभाव ही ऐसा है कि परिस्थितियो पर हमारा पूर्ण अधिकार हो किन्तु अपनी मूर्खता से हमने अपने को ऐसा विवश बना लिया है जिससे सब प्रकार की परिस्थितियो ने अपना अधिकार हम पर जमा लिया है।

क्या मै हवा के झोके से डरता हूँ? उससे डरने की कौन सी बात है? वह तो ईश्वर का दिया हुआ शरीर को आराम पहुँचाने वाला हवा का एक प्रवाह है। इससे न तो सरदी का भय है और न बीमारी का। यदि मै ही चाहूँ तो इस झोंके का बुरा प्रभाव मुझ पर पड सकता है, अन्यथा नही। कारणवश किसी काम के होने और किसी काम के परिस्थितिवश हो जाने का अन्तर हमको समझना चाहिये। हवा का झोका बीमारी का कारण नही है और न वह कोई बीमारी उत्पन्न करता है।

एक ही प्रकार के हवा के झोके में दो पुरुष बैठे हुए हैं। एक को वह झोका हानि पहुँचाता है और दूसरे को सुख। एक परिस्थितियों का गुलाम है, वह झोंके से डरता है, उसके सामने आँखें बन्द कर लेता है, और सोचता रहता है कि यह मुझे हानि पहुँचा रहा है। दूसरे शब्दो मे वह उसके लिए दरवाजा खोल देता है कि वह घुसकर उस पर अधिकार कर ले। इस प्रकार झोका निरापद होता हुआ भी उसे नुकसान पहुँचाने का अधिकार प्राप्त कर लेता है।

दूसरा पुरुष अपने को परिस्थितियों का मालिक समझता

। वह झोंके की परवाह भी नहीं करता। वह उसे सँभाल ता है, जरा भी विचलित नहीं होता बल्कि उससे उसको प्रानन्द मिलता है। इसके अलावा उसे एक लाभ और होता ; । वह इतना कडा हो जाता है कि यदि भविष्य मे कोई नयानक आपत्ति उसके ऊपर आवे तो उसे सहने के लिये वह हमेशा तैयार रहता है। यदि कष्ट का कारण हवा का झोका था तो कष्ट दोनो मनुष्यों को होना चाहिये था। एक को कष्ट नहीं हुआ, इससे यह बात सिद्ध होती है कि कष्ट का कारण हवा का झोका नही था। वह तो एक परिस्थिति थी जो एक के लिये अनुकूल थी और दूसरे के लिये प्रतिकूल।

अभागे हवा के झोंके! कितनी वार उन लोगो ने तुझे बलिदान का बकरा बनाया है जो अपनी कमजोरी को महसूस नहीं करते और जो स्वामी बनने के स्थान मे अत्यन्त तुच्छ गुलाम बने रहते हैं। जरा सोचो तो सही, जो मनुष्य स्वयं ईश्वर है और जो ईश्वरीय शक्ति लेकर उत्पन्न हुआ है और जिसे सब पर निर्भयता के साथ हावी रहना चाहिये वह एक हवा के झोंके से डरे, कॉपे और घुटने टेके। कितने शोक की बात है। किन्तु बलिदान के बकरो से भी लाभ ही होता है, यद्यपि वे हमे हमेशा भ्रम मे डाले रहते हैं।

हवा के झोंके से उत्पन्न होने वाली सम्भावित हानि को दूर करने के लिये सबसे पहले हमें अपने भीतर शुद्ध और स्वस्थ वायुमण्डल उत्पन्न करना चाहिये। इसके बाद उसकी ओर से हानि पहुँचाने वाली अपनी धारणा बदल देनी चाहिये। इस बात को समझिये कि उसमे हानि पहुँचाने की शक्ति नही है। यह शक्ति तो आपने उसे दी है।

इस प्रकार आपका और उसका मेल हो जायगा और उससे आपको डर न लगेगा। इसके बाद कुछ बार झोंके के सामने बैठो और मजबूत बन जाओ। इस प्रकार उसके सामने कोई भी जाकर मजबूत बन सकता है। किन्तु मान लो, कोई बडा कमजोर है और झोके को बरदाश्त नही कर सकता तो थोडा बुद्धिमानी से काम लो। पहले एकदम प्रचण्ड हवा के सामने मत बैठो। पहले धीमी हवा के सामने बैठो। धीरे-धीरे तुम्हे अभ्यास हो जायगा और इस प्रकार यदि तुम अपनी बुद्धि से काम लेते गये, जिसका प्रयोग हर जगह समझबूझ कर करना चाहिये, तो फिर तुमको हवा से कोई नुकसान न होगा।

यदि हमे राजा होना है तो हम राजा हो सकते हैं, जैसे कुछ लोग हो गये हें। यदि एक राजा हो सकता है तो सभी राजा हो सकते हैं। तो फिर यह आवश्यक नही है कि हम किसी मानवीय राजा के अधीन रहे। जितना अधिक हम अपनी आन्तरिक शक्तियों का अनुभव करेंगे उतनी ही हम हुकूमत कर सकते हैं और अपनी आज्ञा का पालन करवा सकते हैं। जितना कम हम अपनी भीतरी शक्तियो का अनुभव करेंगे उतना ही अधिक दूसरे हम पर शासन करेंगे और हमसे अपनी आज्ञा का पालन करावेंगे। जो हमारे भीतर है उसी के अनुसार हम बाहर निर्माण करते हें, आध्यात्मिक नियम के अनुसार हम दूसरो को अपनी ओर खींचते हैं और जितने कुदरती कानून है वे सब आध्यात्मिक हैं।

मनुष्य ही दुःख और सुख का कारण है और वही दुःख और सुख को भोगता है। कोई बात अपने जीवन में अथवा संसार मे सयोगवश नहीं होती। जो कुछ हमारे जीवन में घटित होता रहता है उसके कर्त्ता

हमी हैं। हमें जो करना है वह यह है कि हम भाग्य कहकर काल्पनिक बातो मे अपने समय को नष्ट न करें किन्तु हम आत्मनिरीक्षण करें और जो ताकतें हमारे विरुद्ध काम कर रही है उनको अपने अनुकूल करलें जिससे एक दूसरा ही परिणाम निकले। इस प्रकार जो-हम चाहेंगे वही होगा। यह बात शरीर के लिये जितनी सच है उतनी ही जीवन की और दशाओ के लिये भी सच है। कोई चीज हमारे पास आती है, क्योंकि हम उसे बुलाते है चाहे जानबूझ कर बुलावें अथवा अनजाने मे। यदि हम न बुलावें तो वह हरगिज न आवेगी। कुछ लोग शुरू मे इस बात पर पहले विश्वास न करें किन्तु यदि वे शान्ति के साथ अपने भीतर देखें और विचारो की शक्ति पर गम्भीरता से सोचें और उनके प्रभाव को भी देखें तो यह बात उनको सच मालूम होगी और उनकी समझ मे आ जायगी।

जो घटना किसी पर घटित होती है उसका फल मनुष्य को उसकी चित्तवृत्ति के अनुसार मिलता है। कही कोई घटना हो जाती है। क्या उसका प्रभाव तुम पर पडता है? यदि हॉ, तो इसलिए कि तुम उधर ध्यान देते हो जिससे तुम्हे उसे देख कर तकलीफ होती है। तुमको अपने राज्य मे हुकूमत करने का अधिकार ईश्वर की ओर से मिला है। यदि तुम इस अधिकार को थोडी देर के लिये दूसरो को सौप देते हो तो तुम गुलाम बन जाते हो और दूसरो का तुम पर शासन होने लगता है।

आसपास की घटनाओ का तुम्हारे जीवन पर कोई प्रभाव न पडे इसके लिए पहले तुमको अपने केन्द्र की खोज करनी होगी। जब तुमको यह पता चल जायगा कि यह केन्द्र तुम्हारे भीतर ही है तो फिर वहीं से

तुम संसार का शासन कर सकोगे। जो मनुष्य परिस्थितियों पर अपना अधिकार नहीं जमाता उस पर परिस्थितियाँ अधिकार जमा लेती हैं और मनमाना नचाती रहती हैं। अपना केन्द्र ढूँढ़ लो और उसी में रहो, किसी पुरुष या वस्तु के सामने सिर न झुकाओ। इस प्रकार की जितनी अधिक भावना तुम्हारी रहेगी उतना ही अधिक तुम मजबूत होगे। अब प्रश्न यह उठता है कि मनुष्य अपना केन्द्र किस प्रकार ढूँढ़े ? अपने को ईश्वर के समान समझ कर और उसी विचार मे हमेशा डूबे रहकर।

किन्तु यदि तुम अपने केन्द्र से शासन नही कर सकते, यदि तुम अपना अधिकार दूसरों को दे देते हो जिससे तुम्हारा अनिष्ट होता है तो फिर जो आता है उसे भोगो। तमाम चीजों मे स्वाभाविक आनन्द यदि तुम्हें न मिले तो फिर अपने को कोसो नहीं।

"मैं शपथ पूर्वक कहता हूँ कि जो पुरुष अथवा स्त्री पूर्णता को प्राप्त हुए हैं, उनके लिए यह संसार भी अवश्यमेव पूर्ण होगा और जो अपूर्ण हैं उनके लिए यह संसार अपूर्ण प्रतीत होगा।"

यदि तुम्हारी आत्मा की खिडकियाँ गन्दी और धारीदार हैं और उन पर बाहर कीचड़ भी पुता हुआ है तो उनमें से जब तुम ससार को देखोगे तो ससार तुमको गंदा, धारीदार और अव्यवस्थित दिखलाई पडेगा। अपनी शिकायतों को दूर करो, अपनी बेबसी को दूर करो, अपनी निराशावादिता को हटाओ तो तुम्हारा जीवन सुखमय होगा नहीं तो तुम्हें बराबर धोखा होता रहेगा। जरा उस मित्र को देखो जो अपनी खिडकियों को हमेशा साफ रखता है जिसके द्वारा सूर्य की किरणें

भीतर जाकर कमरे की सब वस्तुओं को प्रकाशमय कर देती हैं। वह क्या आपसे भिन्न किसी दूसरे संसार में रहता है ?

उठो और अपनी खिडकियो को साफ करो तो फिर तुम दूसरी दुनिया को न चाहोगे। तुम तो इसी दुनिया की विचित्र-विचित्र और सुन्दर-सुन्दर वस्तुओ को खोज करके आनन्द प्राप्त करोगे। यदि तुमको सब ओर आनन्द नही दिखलाई पडता तो फिर तुमको कही भी आनन्द न मिलेगा।

> *"साधारणतः बेर की झाड़ी का कोई महत्व नहीं है, परन्तु जब कवि की दृष्टि उस ओर जाती है तब वह उस पर कविता लिखकर उसे सौन्दर्य का रूप देता है। शेक्सपियर जैसे कवि के लिये राह के सब दृश्यों में एक अन्तर्हित भावना छिपी हुई प्रतीत होती है।"*

उस शेक्सपियर ने जिसके गुजरने से हलचल मच जाती थी, अपने नाटक के एक चरितनायक के मुँह से यह कहलाया है, "प्यारे ब्रूटस, हमारे भाग्य का कुसूर नही है, कुसूर हमारा है जो यह सोचते हैं कि हम कितने निकृष्ट हैं।" उसने स्वय उन बातो की सच्चाई का अनुभव किया था जिन पर हम यहाँ विचार कर रहे हैं। उसने इस सच्चाई का दूसरा भी सबूत दिया है।—

> *"हमारी संशयात्मा ही हमको धोखा देती है। हम अपने कार्य में प्रायः सफलता भी प्राप्त कर लें, परन्तु असफलता की आशंका से उस कार्य में संलग्न होने की हमारी प्रवृत्ति ही नहीं होती है।"*

भय से बढ़कर हमारे लिये आपत्तियाँ लाने वाला और दूसरा जरिया नहीं है। हमें किसी से भी नहीं डरना चाहिये। हम जब अपने को समझ लेंगे तो हम किसी से न डरेंगे। एक फ्रांसीसी कहावत है।

"तुमने अपनी कुछ पीड़ाओं तथा संकटों पर अधिकार कर लिया है, और उनसे भी भयानक यातनाओं पर तुम्हारी विजय हुई है, परन्तु जिन दुखों का तुम्हें कभी भी सामना नहीं करना पड़ा उनसे तुम्हें अत्यन्त कष्ट मिला है।"

भय और ईश्वर पर अविश्वास दोनो साथ-साथ चलते हैं। एक दूसरे से उत्पन्न होता है। यदि आप मुझे बता दें कि अमुक मनुष्य कितना डरता है तो मै आपको बता दूँगा कि उसका ईश्वर पर कितना कम विश्वास है। एक मेहमान की तरह भय के लिये हमें बड़ी परेशानी उठानी पड़ती है और उसी प्रकार 'चिन्ता' के लिये भी। वे इतने परेशान करने वाले होते हैं कि उनको कोई बुलाना पसन्द न करेगा। हम भय को उसी प्रकार बुलाते हैं जिस प्रकार एक विशेष मानसिक अवस्था से हम उन परिस्थितियों को बुलाते हैं जिनको हम चाहते हैं। भयभीत मस्तिष्क में वे सब बातें अपने आप आती रहती हैं जिनसे वह डरता है।

एक पूर्वी यात्री को एक दिन मार्ग में प्लेग (ताऊन) मिला। यात्री ने पूछा, "भाई, कहाँ जा रहे हो?" प्लेग ने उत्तर दिया, "मैं ५ हजार आदमियों को मार कर बगदाद से आ रहा हूँ।" यात्री ने कहा, "तुमने तो कहा था कि हम ५ हजार मनुष्यों को मार डालेंगे लेकिन

तुमने ५० हजार मनुष्यो का बलिदान कर दिया ! क्या बात है ?" प्लेग ने कहा, "मैने मारा तो ५ ही हजार आदमियों को था, बाकी तो डर के मारे मर गये ।"

भय शरीर की प्रत्येक मांसपेशी को नष्ट कर सकता है । भय रुधिर के बहाव को और जीवन के साधारण कामों को बन्द कर सकता और स्वास्थ्य को ख़राब कर सकता है । भय से शरीर कडा और चलने के लिये असमर्थ हो जाता है ।

जिन चीजो से हम डरते हैं उनको तो हम अपनी ओर खीचते ही है किन्तु जो भय हमारे मन मे भरा हुआ है उससे हम दूसरो को भी भयभीत कर देते हैं । जितना अधिक भय हमारे भीतर होगा उतना ही अधिक भय हम उन लोगो मे भर सकेंगे जो स्वभाव से ही भयभीत रहते हैं और हमारे भय का भरना न हमे मालूम होगा और न उन्हे ।

छोटे लड़कों पर बड़े पुरुषो की अपेक्षा आसपास का प्रभाव जल्दी पडता है । उनमे से कुछ तो ऐसे होते हैं कि उन पर फोटोग्राफ के प्लेट की तरह बहुत जल्द प्रभाव पड जाता है और वह उनकी आयु के साथ बढ़ता जाता है । जब बच्चा गर्भ मे रहता है तभी माता और पिता के विचारों का प्रभाव उस पर पडता रहता है अतएव दोनो को बडी सावधानी से रहना चाहिए । जब बच्चा छोटा हो अथवा बड़ा हो जाय तब भी उसे भय से बचाते रहना चाहिये । कभी-कभी अधिक सावधानी के कारण भी, बिना जाने बूझे, माता-पिता अपने बच्चो को दब्बू बना देते हैं । अधिक सावधानी उतनी ही खराब है जितनी कम सावधानी ।

बहुत से ऐसे बच्चों का हाल मुझे मालूम है जो किसी काम के करने से इसलिए रोके गये कि कहीं भय न आ जाय और वह भय वास्तव में उनके पास आ गया। यदि वे रोके न जाते तो सम्भव था कि वह भय उनके पास कभी न आता। कभी-कभी ऐसा भी देखा जाता है कि भय का कोई कारण नही रहता और हम डरते रहते हैं। यदि कोई कारण भी हो तो हमे ऐसा समझ लेना चाहिये कि कोई कारण नहीं है और जो दूषित भयपूर्ण भावनायें काम कर रही हैं उन्हे हम समाप्त कर दें और बच्चो के मन मे निर्भयता के बीज बुद्धिमानी के साथ अंकुरित करें जिससे वे भय को अपने वश मे करें—भय उनको अपने वश मे न कर सके।

मेरे एक मित्र ने एक दिन पहले इस सम्बन्ध की अपने जीवन की एक घटना कही थी। एक समय वह अपनी एक आदत मे घोर सग्राम कर रहा था। जिसे देखकर उसकी माँ और एक नवजवान स्त्री, जिसके साथ वह अपनी आदत को दूर करके विवाह करने वाला था, भयभीत हो रहे थे। इन दोनों के भय का उस पर बुरा प्रभाव पड रहा था। उसे मालुम हो रहा था कि दोनों स्त्रियों की उसके प्रति क्या भावनायें थीं। उनकी कमजोरियों, उनके प्रश्नो और उनकी शंकाओं का उस पर बुरा प्रभाव पड रहा था जिससे उसकी दृढ़ता कम हो रही थी और वह निरुत्साहित हो रहा था। साहस और ताकत देने के बदले वे उसमे कमजोरी भर रही थीं और आदत के प्रति संग्राम करने का उपहास कर रही थीं।

देखिये, ये दोनो स्त्रियाँ उसे अधिक प्यार कर रही थीं और हर प्रकार से आदत पर विजय प्राप्त करने को उसकी सहायता कर सकती

थीं, किन्तु वे चुपचाप भीतर ही भीतर वेग के साथ काम करने वाले विचारों की शक्तियों से अनभिज्ञ थीं, अतएव उसे साहस और ताकत देने के बदले उन्होंने उत्साहहीन कर दिया और बाहर से उसे कमजोर बना दिया। इसलिये संग्राम उसके लिये तिगुना कठिन हो गया।

भय, चिन्ता और इसी प्रकार की दूसरी मानसिक अवस्थायें पुरुष, स्त्री या बच्चे को काफी परेशान करती हैं। भय से रोज के काम में रुकावट होती है और चिन्ता घुन की तरह शरीर को खोखला करके अन्त में उसे नष्ट कर देती है। इससे कोई लाभ तो होता नहीं, नुकसान जरूर होता है। उसी प्रकार हमेशा दुखी रहने से भी बड़ी हानि होती है। इनमें से हर एक का अलग दुष्परिणाम होता है। इसी प्रकार बहुत धन पैदा करने की कामना करने अथवा कंजूसी द्वारा बहुत सा धन बटोरने का भी बुरा परिणाम होता है। क्रोध, ईर्ष्या, द्वेषबुद्धि, विषय-वासना आदि विकारों के परिणाम बड़े भयंकर होते हैं। ये शरीर को खोखला कर डालते हैं।

जो लोग नेक रास्ते पर चलते हैं और ईश्वरीय नियम के अनुसार जीवन व्यतीत करते हैं उनको सुख और सम्पत्ति आप से आप मिलती है। उनका स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है। एक हिब्रू फकीर ने खूब कहा है, चूंकि जीवन का पोषण सचाई से होता है, अतएव बुराई के रास्ते पर चलने वाला अपनी मृत्यु बुलाता है। सचाई में जीवन है। इस मार्ग में मृत्यु नहीं है।" समय आवेगा जब लोग सचाई के मार्ग पर इतने वेग से चलेंगे जिसका उन्हें इस समय ख्याल भी नहीं है। अतएव मनुष्य चाहे तो अपनी आत्मा को एक सुन्दर, भव्य और

विशाल राजप्रासाद में रक्खे अथवा एक मैली-कुचैली नष्ट होने वाली कुटी मे।

न मालूम कितने आदमियों के शरीर, अव्यवस्थित एकाङ्गी जीवन व्यतीत करने के कारण समय के पहले नष्ट हो रहे हैं। अभागे शरीर रूपी घर जिनको मन्दिरों की तरह चमकते हुए होना चाहिये, अपने किरायेदारों की मूर्खता और असावधानी से गिर रहे हैं। यह बडे अफसोस की बात है।

एक गम्भीर निरीक्षक या भीतरी विचारों का अध्ययन करने वाला सावधान विद्यार्थी मनुष्य की आवाज और उसकी चाल-ढाल से बता देगा कि इस मनुष्य पर भीतरी विचारों का कितना प्रभाव पड रहा है। यदि उसे एक मनुष्य के भीतरी विचारों का पता चल जाय तो वह तुरन्त बता देगा कि उसकी आवाज कैसी है, उसकी चालढाल कैसी है अथवा उसको कौनसी बीमारी है।

एक विद्वान् ने कहा है कि मनुष्य के शरीर की बनावट का, अन्य पशुओं के शरीरों के मुकाबले में, अध्ययन करने से और जिस समय वह परिपक्व होता है उस पर विचार करने से यह मालूम होता है कि उसकी आयु १२० वर्ष की होनी चाहिये जो आजकल देखने को नहीं मिलती। लेकिन जरा आँख उठा कर अपने चारो ओर मनुष्यो को देखो तो सही कि किस प्रकार उनके शरीर कमजोर होकर समाप्त हो रहे हैं जब कि वर्तमान अवस्था उनके जीवन का मध्य भाग होना चाहिये और उनके शरीर मजबूत होना चाहिये। इस प्रकार जब कि हमारी स्वाभाविक आयु कम हो गई तब हम यह कहने लगे कि हमारे घराने में और हमारी जाति मे तो अब इतनी ही आयु होती है और कम अवस्था

हमारी एक स्वाभाविक आयु हो गई है। इसका परिणाम यह हुआ कि बहुत से लोग जब कुछ वर्ष के होते हैं तो समझने लगते हैं कि हमारे अगल-बगल के लोग अब हमारी ही आयु में बुड्ढे हो गये हैं अतएव हम भी अब एक प्रकार से बुड्ढे ही हो गये हैं। ऐसी मानसिक अवस्था लाने से ये लोग समय के बहुत पहले बुड्ढे हो जाते हैं। शरीर के निर्माण करने और उसे स्वस्थ रखने मे मानसिक विचारो का बहुत जबरदस्त प्रभाव होता है। मानसिक विचारो की ताकत को हम जैसे-जैसे समझेंगे वैसे-वैसे आगे चलकर लोगो का जीवन लम्बा होगा।

मुझे एक स्त्री का स्मरण आ रहा है जिसकी आयु इस समय ८० वर्ष की है। जो लोग केवल आयु से बूढ़ा होना मानते हैं, जो बराबर गिनते रहते हैं कि जीवन मे अमुक मौसम इतने बार आये और इतने बार चले गये, वे यही कहेंगे कि वह स्त्री बुड्ढी है। किन्तु उसे बूढ़ा कहना काले को सफेद कहना है। वह २५ वर्ष को लडकी से अधिक नहीं मालुम होती बल्कि कम ही है। इस आयु की अन्य लडकियों को देखते हुए मैं खुश होऊँ या नाखुश। सब लोगों मे और सब चीजो मे उसने अच्छाई ही देखी है इसलिये उसे हर स्थान मे अच्छाई ही दिखलाई पडती है। उसने जीवन भर अपना स्वभाव कोमल और अपनी बोली मधुर रक्खी है जिससे लोग उसको इतना चाहते हैं। उसने अभी तक के जीवन मे, जहाँ वह गई है वहाँ के लोगों को आशा, साहस और बल दिया है और अपने जीवन के शेष भाग मे भी बराबर देती रहेगी।

उसके विचारों में न भय है, न कोई चिन्ता है, न घृणा है, न

ईर्ष्या है, न कोई दुःख है, न कोई व्यसन है और न कोई धन एकट्ठा करने का लोभ है। ऐसी अवस्था होने से वह उन मानसिक विकारों से मुक्त है जो बीमारियाँ पैदा करते हैं और जिन्हें सैकडो पुरुष अपने साथ यह समझकर लिये घूमते रहते हैं कि ये स्वाभाविक हैं और ईश्वरीय नियम के अनुसार उनके पास इन्हें आना ही चाहिये। उसको जीवन मे अनेको अनुभव हुए हैं। यदि वह अपने को सावधान न रखती तो ये सब मानसिक विकार उसके मस्तिष्क मे भी घुस गये होते। उसका हमेशा ऐसा विश्वास रहा है कि कम से कम एक राज्य मे तो मेरा शासन है ही और वह है मनोराज्य। अब उसको पूरा अधिकार है कि कौन-सी बात को वह अपने मन मे घुसने दे और कौन सी बात को न घुसने दे। वह मन के साथसाथ और भी मानसिक विकारो का अध्ययन करती है। जब वह हँसमुख हो कर जवानो की तरह चलती है तो उसे देखकर बडी प्रसन्नता होती और बडा उत्साह होता है। शेक्सपियर इस बात को जानता था जब उसने कहा था, "यह मन ही है जो शरीर को वैभवशाली बनाता है।"

बडी प्रसन्नता से मै उसके रहन-सहन को देखा करता था। हाल मे वह एक दिन घूमने के लिये निकली तो रास्ते में उसे बहुत से बालक खेलते हुए मिले। उनसे उसने बातचीत की, आगे बढ़ी तो उसे एक धोबिन सिर पर गट्ठर लिये मिली। उससे उसने बातें की। आगे बढ़ी तो उसे एक मजदूर मिला जो अपना भोजन पात्र लिये काम से वापस आ रहा था। उसने उससे भी बातें की। इस प्रकार रास्ते में जो-जो उसे मिला उस स्त्री ने, उन सब को अपना गुण देकर अपने आचरण से प्रसन्न किया।

संयोगवश उसके सामने से एक दिन एक बूढी स्त्री निकली। यद्यपि वह उससे १० या १५ वर्ष छोटी थी फिर भी वह वास्तव मे बूढी थी। उसकी कमर झुक गई थी और उसके जोड और उसकी मांसपेशियाँ कडी पड गई थीं। उसके लम्बे चेहरे मे शोक की छाप लगी हुई थी। वह सिर पर काला कपडा डाले हुई थी और काले कपडे का घूँघट् भी काढे हुई थी। इससे उसके चेहरे पर शोक और भी अधिक बढ रहा था। उसकी सारी पोशाक इसी प्रकार की थी। पुराने ढँग का वस्त्र पहिने और अपना थूथन लटकाये वह लगातार दो बातो की घोषणा कर रही थी (१) अपने दुख की जिसे हमेशा मन मे भरे रहती थी और जिसके दूर करने का उसने कभी प्रयत्न नहीं किया था। (२) हरएक चीज की अच्छाई पर अपना अविश्वास, ईश्वर के प्रेम और उसकी अच्छाई पर अविश्वास।

वह हमेशा अपने ही दुःख से परेशान रहती थी और जिन लोगो के साथ उठती बैठती थी उनको वह किसी प्रकार की प्रसन्नता, किसी प्रकार का सन्तोप और किसी प्रकार का साहस नही दे सकती थी। इसके विरुद्ध वह उन सब विकारों को और लोगो मे फैलाती फिरती थी। एक दिन वह जब हमारी खुशदिल बहिन (उक्त महिला) के सामने से गुजरी तो कुछ उसमे परिवर्तन हुआ और उसने थोडा प्रसन्न होकर कहा, "तुम्हारी पोशाक और तुम्हारा रहन-सहन तुम ऐसी वृद्धा स्त्री मे नहीं फबता फिर भी मैं ईश्वर से प्रार्थना करती हूँ कि वह तुम ऐसे जीवन को प्रभावित करने वाले लोगो को अधिक संख्या मे भेजे जो अपना उत्तम और जीवन को उठाने वाला प्रभाव हम लोगो मे डालें। क्योंकि हम लोगो को उसकी अत्यन्त आवश्यकता है।'

क्या तुम हमेशा जवान रहना चाहते हो और क्या तुम बुढ़ापे मे भी जवानी का उत्साह कायम रखना चाहते हो ? तो इस बात की हमेशा परवाह करो कि तुम्हारे विचार कैसे हैं। इससे तुम जो चाहोगे, सब मिल जायगा। महात्मा गौतम बुद्ध ने कहा था, "मन ही सब कुछ है। जैसा तुम सोचोगे वैसा ही तुम बनोगे।" और उसी प्रकार को बात रस्किन ने भी कही थी, "अपने मन को सुन्दर विचारों का घोसला बनाओ। न तो हम जानते ही हैं और न लडकपन मे हमें बतलाया गया है कि सुन्दर विचारो का हम कितना बढ़िया महल बना सकते हैं जो हमारी गरीबी को दूर कर सकता है।" क्या तुम जवानो ऐसी सुन्दरता, जवानों ऐसी ताकत और जवानो ऐसी लचीली नसे अपने शरीर मे चाहते हो ? इसके लिए अच्छे विचारो को अपने मन मे आने दो और गन्दे विचारों को अपने से कोसों दूर रक्खो। अच्छे विचारो से तुम्हारा शरीर चमकने लगेगा। जितने ही तुम्हारे विचार अच्छे होंगे उतना ही तुम्हारे शरीर में जवानी रहेगी। कुछ समय बाद देखोगे कि तुम्हारे शरीर से तुम्हारे मन को सहायता मिलेगी, क्योंकि शरीर मन की उसी प्रकार मदद करता है जिस प्रकार मन शरीर की मदद करता है।

तुम्हारे शरीर के भीतर जैसा विचार और जैसी भावनायें रहती हैं वैसा ही तुम चारों ओर अपना वायुमण्डल भी बना रहे हो। जिस प्रकार के विचार तुम भीतर कर रहे हो उसी प्रकार के विचार तुम बाहर से भी ले रहे हो। तुम्हारे विशेष प्रकार के विचार बाहर से भी उसी प्रकार के विचार खींचते हैं। यदि तुम्हारे विचार अच्छे हैं, आशापूर्ण और प्रसन्नता देने वाले हैं तो तुम इसी प्रकार के विचार

बाहर से भी अपनी ओर खीचते हो। यदि तुम्हारे विचारो मे कायरता, निराशा और शोक है, तो तुम ऐसे ही विचार बाहर से भी खीचते हो।

यदि तुम्हारी विचारधारा निकृष्ट है तो अचेतनरूप से उसी प्रकार के विचार तुम्हारे पास आते रहेगे। उनसे छुटकारा पाने के लिये तुम्हे अपना स्वभाव लडको का-सा बनाना पडेगा जो हमेशा चिन्ता रहित और खुश रहते हैं। जो लडके खेलते-कूदते हैं वे खेल से सम्बन्ध रखने ही वाले विचार शरीर के अन्दर खीचते हैं। किसी बच्चे को अकेले कहीं बैठा दो और उसके साथी उसके पास से हटा दो तो वह तुरन्त उद्विग्न हो उठेगा और उसकी तेजी कम हो जायगी। वह अपनी विचारधारा से वञ्चित होकर दुखी हो जायगा।

इस समय तुम्हारे जो आमोदपूर्ण विचार नष्ट हो गये हैं, उन्हे फिर लाना चाहिये। तुम इस समय बडे गम्भीर या दुखी हो और जीवन की गम्भीर बातों मे डूबे रहते हो। तुम विनोदपूर्ण और सुखी हो सकते हो और तुम्हारी बातो को कोई बचो ऐसी या मूर्खतापूर्ण बाते भी नहीं कह सकता। जब तुम अपने काम से छुट्टी पाओ तो हँसी-मजाक कर सकते हो। इससे तुम्हारा व्यवसाय भी पहले से अच्छा हो सकता है। हमेशा दुखी या गम्भीर रहने से अपनी हानि होती है। जो दुखी और गम्भीर रहते हैं उनके मुँह पर कभी हँसी नहीं दीखती।

१८ या २० वर्ष की आयु से जवानी की विनोदपूर्ण आदत तुम शुरू करते हो। तुमने अभी से जीवन के एक गम्भीर अग को अपनाया है, तुम कोई व्यापार करने लगे। अब तुम्हारे कन्धो पर उसकी चिन्तायें और जिम्मेदारियाँ आ गई। इस प्रकार तुम्हारा जीवन, चाहे

तुम मर्द हो या स्त्री, चिन्तापूर्ण होने लगा। तुम अब एक ऐसे व्यापार मे लग गये जहाँ तुम्हे खेलने कूदने को समय नही मिलता। अब तुम अपने से बडो का साथ करने लगे और उनके पुराने विचारो को अपनाने लगे; पुराने ढंग से उन्ही की तरह तुम भी सोचने लगे और बिना कुछ पूछ-ताछ किये उन्हीं की तरह प्रत्येक बात मे माफी माँगने लगे। इस प्रकार के जीवन को अगीकार करके तुमने अपने मस्तिष्क मे चिन्ता और दुःखपूर्ण विचारों को अचेतन रूप से भर लिया। वे विचार तुम्हारे दिमाग से बह-बह कर शरीर मे आये और उसी के अन्दर उन्होने अपना घर बना लिया। बहुत वर्षो के बाद तुम मुश्किल से चलने-फिरने लायक रह गये और तुम्हारा शरीर भारी पड गया। १४ वर्ष की आयु मे तुम जिस प्रकार पेड पर चढ़ सकते थे, अब तुम नही चढ़ सकते। तुम्हारा मस्तिष्क इन वर्षो मे, वजनी और कडे तत्व शरीर को भेजता रहा, यहां तक कि उसे पंगु बना डाला।

यदि तुम अपना सुधार करना चाहते हो तो धीरे धीरे करो। तुम्हारे विचार जो इधर-उधर खराब रास्ते मे भटक रहे थे, उनको उधर से हटाओ और ईश्वर से प्रार्थना करो कि वह ऐसा करने के लिये तुम्हे शक्ति दे। ऐसा करने मे तुम्हारे खराब विचार धीरे-धीरे हट जॉयगे और उनके स्थान मे अच्छे विचारो का प्रवेश तुम्हारे भीतर हो जायगा।

पशुओं की तरह हमारी जाति के लोगों के भी शरीर, पुराने समय मे; कमजोर होकर नष्ट हो गये। अब ऐसा हमेशा नही होने का। आध्यात्मिक ज्ञान के बढ़ने से हमे शरीर के नष्ट होने का कारण मालुम हो जायगा और यह भी मालुम होगा कि ईश्वरीय नियम से

लाभ उठाकर हम किस प्रकार अपने शरीर का फिर से निर्माण करके उसको उत्तरोत्तर शक्ति दे सकते हैं। हम अब उस प्रकार ईश्वरीय नियम से लाभ नहीं उठायेंगे जिस प्रकार पुराने समय के लोग आँख बन्द करके उठाया करते थे और अपने शरीर को रोगी बनाकर नष्ट कर देते थे।

पूर्ण स्वस्थ होना शरीर का कुदरती धर्म है। ईश्वरीय नियमो को तोड़ने से मनुष्य अस्वस्थ होता है। ईश्वर ने कभी बीमारियाँ नहीं पैदा कीं। बीमारियाँ पैदा कीं मनुष्य ने। जिन नियमों के भीतर मनुष्य रहता है उन्हे तोडने से बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं। बीमारियो को देखते देखते हम इतने अभ्यस्त हो गये हैं कि हम यह कहने लगते हैं कि इन्हे प्रकृति ने तो नहीं पैदा किया किन्तु ये आपसे आप धीरे-धीरे पैदा हो गई हैं।

समय आवेगा जब डाक्टर का काम शरीर को चंगा करना न होगा किन्तु मस्तिष्क को ठीक रखना होगा, जिसके चंगे होने से शरीर अपने आप चगा हो जायगा। कहने का तात्पर्य्य यह कि सच्चा डाक्टर अब उपदेशक होगा जिसका काम बीमार होने पर चंगा करना न होगा किन्तु पहले ही से लोगो को, अच्छी हालत में रखना होगा। एक समय ऐसा भी आवेगा जब हर एक को अपना डाक्टर आप होना पडेगा।

जिस अनुपात से हम ईश्वरीय नियमों के अनुकूल चलेंगे और जिस अनुपात से हमे अपने ही मस्तिष्क की शक्तियो का अधिक ज्ञान होगा उसी अनुपात से हम शरीर की ओर ध्यान देंगे। यानी पश्चात तो हम विशेष करेंगे किन्तु ध्यान अधिक न देंगे।

यदि लोग अपने शरीर की ओर कम ध्यान दे तो उनके शरीर

कहीं अधिक अच्छे रहें। नियम यह है कि जो अपने शरीर की परवाह नहीं करते उनके शरीर अच्छे रहते हैं। बहुत अधिक ध्यान देने से बहुतों के शरीर हमेशा रोगी रहते हैं।

शरीर को सात्विक भोजन दो, उससे व्यायाम करवाओ, उसे स्वच्छ हवा में रक्खो, उसे सूर्य्य के प्रकाश में रक्खो और फिर उसकी अधिक परवाह न करो। बातचीत में और अपने मन में कभी उसकी अवहेलना न करो। बीमारी की चर्चा भी न करो। चर्चा करने से तुम अपना ही नुकसान नहीं करते बल्कि उनका भी नुकसान करते हो जो तुम्हारी बातो को सुनते हैं। ऐसी बातो की चर्चा करो जिनके सुनने से लोगों का कल्याण होगा। इस प्रकार तुम उनके दिलों मे कमजोरी और बीमारी के स्थान मे ताकत और स्वास्थ्य भर सकोगे।

किसी चीज की कमी को सोचना हानिकारक है। अन्य चीजों की तरह शरीर के बारे में भी यह सोचना कि इसमे यह कमी है, हानिकारक है। एक बहुत ही बुद्धिमान् और योग्य डाक्टर हैं। उन्होंने भीतरी शक्तियों का भी अच्छा अध्ययन किया है। उनका कथन बहुत ही महत्वपूर्ण और मूल्यवान् है। वे कहते हैं, "बीमारियो का ख्याल करके हम कभी तन्दुरुस्त नही हो सकते। जैसे अपूर्णता का ख्याल करके हम पूर्ण नहीं हो सकते अथवा अशान्ति का ख्याल करके हम शान्ति नहीं प्राप्त कर सकते। मन के सामने हमे आदर्श स्वास्थ्य और आदर्श शान्ति लगातार रखनी चाहिये।"

स्वास्थ्य के बारे में जो तुम नहीं चाहते उसे बार-बार मत कहो। अपनी बीमारियों को मत कहो और उनके लक्षण का भी अध्ययन मत करो। इस बात की कभी शंका न करो कि तुम अपने आपके

मालिक नही हो । बहादुरी से इस बात को स्वीकार कर लो कि बीमा-रियाँ हमारे वश में हैं और हम किसी के गुलाम नहीं हैं । मेरा लड़को से कहना है, "बच्चो ! तुम ऊँचे विचार, पवित्र जीवन और स्वास्थ्यपूर्ण आदतो द्वारा बीमारियो से अपने को कोसो दूर रक्खो । मृत्यु का विचार छोड़ दो, बीमारियो को मन मे भी न लाओ । और घृणा, बदला ईर्ष्या और व्यभिचार जितने अशान्ति पैदा वाले विकार हैं, उनको छोड़ दो । ये बुराई पैदा करते हैं । देखो बच्चो, खराब भोजन, खराब पानी और खराब हवा खून को खराब कर देते हैं । खराब खून से मास खराब हो जाता और नैतिक पतन होता है । स्वस्थ विचार शरीर को स्वस्थ रखने के लिये उतने ही आवश्यक हैं जितने जरूरी शरीर को शुद्ध रखने के लिये शुद्ध विचार । अपनी इच्छा-शक्ति दृढ़ करो और सब तरह से जीवन के शत्रुओं को उसके द्वारा नष्ट कर दो । तुममें से जो बीमार हैं उनसे कहो कि वे आशा विश्वास और प्रसन्नता रक्खे ।" हमारे विचारो और कल्पनाओं से ही हमारा कल्याण हो सकता है । कोई भी मनुष्य अपनी शक्ति से अधिक न तो सफलता ही प्राप्त कर सकता है और न स्वास्थ्य ही । सच तो यह है कि हम अपने लिए स्वयं खाई खोदते हैं ।

संसार में अच्छाई से अच्छाई पैदा होती है और खराबी से खराबी । ईर्ष्या, घृणा, बदला इन सबके बच्चे होते हैं । हर एक बुरे विचार से खराब विचार उत्पन्न होता है और उससे फिर दूसरा खराब विचार उत्पन्न होता है । इस प्रकार संसार मे हमारे लिये खराब ही खराब विचार बच्चों के रूप मे फैले रहते हैं । भविष्य के डाक्टर और अभिभावक को चाहिये कि वे अपने शरीर को औषधि से न भरें । उन्हें अपने मन को

कुछ सिद्धान्तों द्वारा अपने वश मे रखना चाहिये। भविष्य की मातायें अब अपने बच्चों को उपदेश देंगी कि बेटा, क्रोध और घृणा दूर करो और उनके स्थान मे प्रेम का पाठ सीखो। भविष्य के डाक्टर उपदेश करेंगे कि लोगो, स्वास्थ्य के लिये और दिल को सही रखनेके लिये प्रसन्न रहा करो, सबकी नेकी चाहो और अच्छे-अच्छे काम करो। जिसका दिल खुश है उसे किसी दवा की जरूरत नहीं होती।

तुम्हारे शरीर का स्वास्थ्य, तुम्हारे मन के स्वास्थ्य और ताकत की तरह इस बात पर निर्भर है कि तुम्हारा सम्बन्ध किससे है। हमने देखा है कि ईश्वर मे, जिसके हम अंश हैं, न तो कोई कमजोरी होती है और न कोई बीमारी। इसलिये इस बात का अनुभव करो कि ईश्वर और हम एक ही हैं, अपने दरवाजे को उसी ईश्वर की ओर खोलो तो शरीर को सदा स्फूर्ति देने वाली ताकत और तन्दुरुस्ती तुमको मिलेगी।

"अच्छाई ने बुराई पर सदैव ही विजय प्राप्त की है। जहां शारीरिक अथवा मानसिक कष्ट है वहाँ स्वास्थ्य का महत्व है। जैसे मनुष्य के विचार होते हैं वैसे ही उसके व्यक्तित्व का स्वरूप होता हैं। इसलिये तुम चेतो और ईश्वरीय भावनाओं मे ओत-प्रोत हो जाओ।"

सब बात की बात यह है कि "ईश्वर चंगा है इसलिये तुम भी चंगे हो।" तुम क्या हो, इसका ज्ञान तुम्हें होना चाहिये। जब यह ज्ञान तुम्हें हो जायगा तो जिन शक्तियों की जरूरत तुम्हारे शरीर को है वे तुम्हें मिल जायँगी। तुमको अनुभव करना चाहिये कि तुम और ईश्वर एक ही हो। फिर ईश्वर की इच्छा तुम्हारी इच्छा है और तुम्हारी

इच्छा ईश्वर की इच्छा है। ईश्वर के लिये सब चीजें सुलभ हैं। जब हम ईश्वर के जीवन से मिला कर जीवन व्यतीत करेंगे और भिन्नता दूर कर देंगे तो न केवल हमारी बीमारियाँ दूर हो जायेंगी बल्कि चारों ओर से हमारा मार्ग निष्कण्टक हो जायगा और हमारी बेबसी दूर हो जायगी।

"इसलिये ईश्वर में ही प्रसन्न रहो। वह तुम्हारी मुराद पूरी करेंगे।" तुमको यह भी अनुभव होगा कि ये वचन हमसे बहुत ही अच्छे स्थान मे कहे गये हैं और हमको एक प्रकार की वरासत मिली है। भविष्य में हमे अच्छी-अच्छी चीजें मिलेंगी और हमारे जीवन मे अच्छी-अच्छी बातें सम्भव होंगी ऐसा विचार मन से निकाल दो। असली जीवन में आ जाओ और आकर उन्हें जीवन मे पूरा करके दिखाओ। स्मरण रक्खो, जो बपौती तुमको मिली है उसी से तुम्हारा कल्याण होगा।

> *"हम वास्तविक पदार्थ के बदले निःसार तथा निरर्थक वस्तु की प्राप्ति में लगे हुए है। मुझे यथार्थ वस्तु का ज्ञान कराइये—जिसकी घनी पत्तियाँ और लतरें स्वर्ग की रजत पहाड़ियों में फैली हुई हैं और अविरल गति से ओस के बिन्दुओं से प्लावित हैं।"*

प्रेम का रहस्य, बल और प्रभाव

ईश्वर मे अपार प्रेम है। जब हम अपने को ईश्वर के समान समझेंगे तो हममें भी प्रेम भर जायगा और चारो ओर सब मे हम अच्छाई ही देखेंगे। जब हम अनुभव करते हैं कि हम और ईश्वर एक ही हैं तो संसार के सब प्राणी अपने ही समान दिखलाई पडते हैं। जब हम सब को अपने ही समान देखते हैं तो हम किसी को भी हानि नहीं पहुँचा सकते। हम अनुभव करने लगते हैं कि हम सब एक ही शरीर के अंग हैं और यदि हम किसी अंग को कष्ट पहुँचावेंगे तो दूसरे अंगो को भी कष्ट पहुँचेगा।

जब हम इस बडी महत्त्वपूर्ण सचाई को समझ जायॅगे कि एक ही आत्मा सब मे है, हम और ईश्वर एक हैं और एक ईश्वर से ही सब का उद्गम है तो घृणा और पक्षपात दूर हो जायॅगे। प्रेम बढ़कर सर्वोपरि हो जायगा। फिर जब हम किसी से मिलेंगे तो भीतर से उसमे हम ईश्वर को ही देखेंगे। इस प्रकार हम अच्छाई ही करेंगे और चारो ओर हमें अच्छाई ही दिखलाई देगी। इससे हमको हमेशा लाभ होगा।

इस कहावत में बहुत गहरा वैज्ञानिक सत्य है, कि "जो तलवार चलाता है वह तलवार से मरता भी है।" जिस समय हमें अनुभव होगा कि विचारो मे अपार शक्ति है उसी समय हमे दिखलाई पडेगा कि यदि हम किसी से घृणा करेंगे तो वह भी हमसे घृणा करेगा। विषय, घृणा और क्रोध का बुरा प्रभाव हमारे शरीर पर भी पडता है।

वास्तव मे ये विकार बड़े हानिकारक और सर्वनाशक हैं। यही हाल इसी प्रकार के दूसरे मानसिक विकारों का भी है, जैसे ईर्ष्या, अपमान और आलोचना आदि। अन्त मे हम देखेंगे कि जिससे हम द्वेष रखते हैं उसका इतना नुकसान नहीं होता जितना हमारा होता है।

स्वार्थपरता ही इन सब अपराधो की जड है और स्वार्थपरता मूर्खता से उत्पन्न होती है। यदि स्वार्थपरता न होती तो हम दूसरो के कामो को बडी उदारता से देखते। मूर्ख मनुष्य सब का नुकसान करके अपना भला चाहता है। मूर्ख मनुष्य ही स्वार्थी होता है, सच्चा बुद्धिमान् मनुष्य कभी स्वार्थी नही होता। वह सोचता है कि मै शरीर का एक अंग हूँ, सब का लाभ होने से मेरा भी लाभ होगा इसलिये अपने लाभ के लिए वह कोई ऐसी वस्तु नही चाहता जिससे सबका लाभ न हो।

यदि स्वार्थपरायणता से ये सब अपराध उत्पन्न होते है और मूर्खता स्वार्थपरायणता की जड है तो जब हम इन विकारो को किसी मनुष्य मे देखते हैं तो, यदि हम स्वार्थपरायण नहो हैं तो, उस मनुष्य मे भी जिसके सम्पर्क मे हम आते हैं—विकारों के स्थान मे हम गुण ही देखेंगे। जब ईश्वर ईश्वर से बातचीत करता है तो ईश्वर उत्तर देता है और ईश्वर की तरह बर्ताव करता है किन्तु जब राक्षस राक्षस से बातचीत करता है तो राक्षस उत्तर देता है और राक्षस को हानि उठानी पडती है।

कभी लोग कहा करते हैं, "हमे तो उसमे कोई गुण नही दिखलाई पडता।" यदि ऐसी बात है तो फिर आप बुद्धिमान् नहीं हैं। जरा गहराई से सोचो तो तुम्हें ईश्वर हर एक मनुष्य मे दिखलाई पडेगा। किन्तु याद रक्खो, ईश्वर ही ईश्वर को पहचानता है। महात्मा

ईसा सबसे सच्चे, सबसे ईमानदार और सबसे उत्तम मनुष्यों से बातचीत करते थे। वह हर एक व्यक्ति में ईश्वर देखते थे और उसे पहचानते थे, क्योंकि सब से पहले उन्होंने ईश्वर को अपने मे पहिचाना था। वह भठियारों और पापियों के साथ भोजन करते थे। स्काइब और फैरिसी जाति के लोग देखकर दंग रह जाते थे और ईसा से घृणा करते थे। वे अपने ही घमंड और स्वार्थ में चूर रहा करते थे इसलिये उनको अपने भीतर ईश्वर नहीं दिखलाई पड़ता था। वे इस बात का तो स्वप्न मे भी नहीं ख्याल करते थे कि भठियारों और पापियो मे भी जीवात्मा है।

जितना हम सोचते हैं कि इस पुरुष में इतनी बुराई है उतनी ही बुराई हम उसे देते हैं। जितना जो कमजोर होगा उतना ही अधिक दूसरों के विचारों का प्रभाव उस पर पड़ेगा। इस प्रकार जितना हम दूसरो को बुरा समझते हैं उतना ही उसके प्रति बुराई के हम भागी होते हैं। उसी प्रकार जब हम किसी मनुष्य को अच्छा, सचा और ईमानदार समझते हैं तो उसके जीवन पर हम अपना बहुत ही अधिक प्रभाव डालते हैं। यदि हम उन्हें प्यार करते हैं जो हमारे सम्पर्क मे आते हैं तो वे भी हमें प्यार करते हैं। इस कहावत में एक गहरा वैज्ञानिक सिद्धान्त है—"यदि तुम चाहते हो कि ससार तुमसे प्रेम करे तो तुम पहले संसार के लोगों से प्रेम करो।"

जितना हम प्यार करेंगे उतना दूसरे भी हमसे प्रेम करेंगे। विचार बड़े शक्तिशाली होते हैं। हमारा प्रत्येक विचार अपने समान विचार पैदा करता है। हमारा प्रत्येक विचार अपने समान विचार मे लदा हुआ वापस आता है :—

इसलिये तुम्हारे अन्तर्हित विचार सुन्दर हों—वे अत्यन्त, महत्वपूर्ण कार्य करते है। वे हमारी वाणी को सुसंस्कृत करने तथा भाग्य के निर्माण में योग देते हैं। ईश्वर की व्यवस्था अत्यन्त दुर्बोध तथा गूढ़ है।"

मेरे एक मित्र हैं जो हमेशा दूसरो को प्यार करते हैं और कहा करते हैं, "ऐ मेरे प्यारे लोगो! मै तुम्हे प्यार करता हूँ" ऐसा पुरुष देखने को नहीं मिलता। जब हम देखते हैं कि वापस आने के पहले या समाप्त होने के पहले हमारे विचार काम करके लौटते हैं तो हम सोच सकते हैं कि वे उन लोगों का, जिनके सम्पर्क मे हम आते हैं, कितना कल्याण कर सकते हैं। हमारे ये प्रेम के विचार सब ओर से हमारे लिये प्रेम लेकर हमारे पास लौट आते हैं।

पशु भी हमारे विचारों के प्रभाव को समझते हैं। कुछ पशु अनेक मनुष्यों से अधिक भावुक होते हैं। उनपर हमारे विचारो और हमारी भावनाओ का प्रभाव उन मनुष्यों से अधिक पड़ता है। इसलिये जब हम किसी पशु से मिलें, तो उससे प्रेम करके हम उसका भला कर सकते हैं। यदि हम जरा खुजला दें या पुचकार कर बोल दे तो वह हमारे प्रेम को समझ लेता है और वह भी सिर उठाकर या भंभाकर या पूँछ उठाकर इस बात को प्रकट करता है कि वह हमारे प्रेम को समझ रहा है और उससे प्रभावित हो रहा है।

ऐसे ससार मे रहने से हमें कितना आनन्द प्राप्त होगा जहाँ ईश्वर ही ईश्वर हैं। ऐसे संसार में तुम रह सकते हो। ऐसे संसार मे मै रह सकता हूँ। जितने ऊँचे हम अपने विचार मे रहेंगे उतना ही

अधिक स्पष्ट हम ईश्वर को प्रत्येक व्यक्ति मे देखेंगे। जब हम उसे प्रत्येक व्यक्ति मे देखेंगे तो इस संसार मे रहने मे हमे बडा आनन्द मिलेगा।

हर एक व्यक्ति में ईश्वर को देखने से हमारा विचार और भी अधिक पुष्ट होता जाता है। यह अधिकार जिस प्रकार मेरा है उसी प्रकार आपका भी है। दूसरो के बनावटी निर्णय से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि हम स्वयं विकास करती हुई, बदलती हुई और भूल करती हुई आत्मा के परे उस आत्मा को भी देख सकते हैं जो कभी बदलती नहीं, जो अमिट है और जो हमेशा एक रस रहती है। धीरे-धीरे ऐसी शाश्वत आत्मा के दर्शन करके हमे बडा आनन्द मिलेगा। यदि हम दूसरों को अपराधी ठहराते हैं तो हममें इतनी उदारता होनी चाहिये कि हम उसी काम के लिये अपने को भी अपराधी ठहरावें।

इस प्रकार की भावना से हमारा हृदय प्रेम से इतना भर जाता है कि वह बहने लगता है और जो लोग हमारे सम्पर्क मे आते हैं उन्हे उसे देखकर प्रसन्नता होती है और इस प्रकार चारों ओर से हमें प्रेम ही प्रेम मिलता है। यदि तुम मुझे बता दो कि कौन कितना प्यार करता है तो मै बता दूँगा कि उसने कितना ईश्वर का दर्शन किया है। यदि तुम मुझे बता दो कि कौन कितना प्यार करता है तो मैं तुमको बता दूँगा कि वह किस कदर ईश्वर के साथ है। यदि तुम मुझे बता दो कि कौन कितना प्यार करता है तो मैं तुमको बता दूँगा कि वह कहाँ तक ईश्वर के शान्ति के साम्राज्य में पहुँचा है, क्योंकि प्रेम ही इन सब की कुंजी है।

एक प्रकार से चारों ओर प्रेम ही प्रेम है। प्रेम जीवन की कुन्जी है। प्रेम का प्रभाव इतना होता है कि उससे संसार हिल उठता है। सब के साथ प्रेम करने का ही ख्याल २४ घंटे करो और तुम्हें सब ओर से प्रेम ही प्रेम मिलेगा। लोगों से यदि तुम घृणा करोगे तो चारो ओर से तुम्हें घृणा ही प्राप्त होगी।

'बुराई करने से विष पैदा होता है; ईर्ष्या तीर की तरह लौटकर हमी को वेधती है और ऐसा घाव हृदय में करती है कि जो कभी भी अच्छा नहीं हो सकता; क्रोधाग्नि हृदय को जलाया करती है।"

जो विचार तुम्हारे मन मे आता है वह स्वयं एक बल है जो बाहर जाता है और अपने समान विचार लेकर वापस आता है। यह अटूट नियम है। जो विचार तुम्हारे मन मे आता है उसका प्रभाव शरीर पर भी पडता है। प्रेम और उसी प्रकार की अन्य भावनायें स्वाभाविक होती हैं और ब्रह्माण्ड के नियम के अनुसार हैं; क्योंकि "ईश्वर ही प्रेम है।" ऐसी भावनाओं से जीवन मिलता है, हमारा शरीर स्वस्थ होता है, चेहरे में चमक आती है, कण्ठ मधुर होता है और हर प्रकार से हम मे आकर्षण उत्पन्न होता है। जितना अधिक तुम दूसरो से प्रेम करोगे, उतना ही अधिक तुम्हे उसके बदले में प्रेम मिलेगा और चूँकि इसका प्रभाव तुम्हारे मन और उसके द्वारा तुम्हारे शरीर पर पड़ता है इसलिये उतनी ही अधिक ताकत बाहर से तुम्हें मिल जायगी। इस प्रकार बराबर तुम्हारे मन और तुम्हारे शरीर को बल मिलता जायगा और तुम्हारा जीवन इस बल से गौरव-पूर्ण हो जायगा।

घृणा और इसी प्रकार की अन्य भावनायें अप्राकृतिक और विनाशक हैं। वे ब्रह्माण्ड के नियम के अनुसार नहीं हैं। प्रेम ब्रह्माण्ड के नियम की पूर्ति करता है और घृणा आदि भावनायें उस नियम को तोडती हैं। कानून तोडने में फिर हमको किसी न किसी रूप मे दुःख भोगना ही पडता है। इससे कोई बच नहीं सकता। विशेष रूप से इस नियम को तोडने का क्या परिणाम है? जब तुमको क्रोध आता है, या तुम मे घृणा पैदा होती है, या तुम मे अहंकार आता है तो ये घुन की तरह तुम्हारे शरीर के पीछे लग जाते हैं, शरीर को भीतर से खोखला करते रहते हैं और आगे चलकर यदि बहुत दिन तक कायम रहे तो, तुम्हारे शरीर को किसी एक बीमारी मे फँसा कर नष्ट कर देते हैं। तुम्हारे मन की भावनायें तुमको नष्ट तो करती ही हैं, साथ ही बाहर की अनिष्टकारी भावनायें आकर मिल जाती हैं। इस प्रकार दोनो भावनायें मिलकर शरीर को शीघ्र नष्ट करने मे बडी सहायता करती हैं।

इस प्रकार आपने देखा है कि प्रेम से प्रेम उत्पन्न होता है और घृणा से घृणा। प्रेम और शुभेच्छा शरीर को प्रोत्साहित करती और स्वस्थ बनाती है। घृणा और ईर्ष्या घुन की तरह शरीर को खोखला कर देती हैं। प्रेम जीवन देता है और घृणा मृत्यु देती है।

"संसार में ऐसे व्यक्ति हैं जिनका हृदय श्रद्धा और भक्ति से पूर्ण है, तथा जिनकी आत्मायें बलिष्ठ हैं, शुद्ध हैं और छल-छिद्र रहित हैं। इसलिये जो तुम्हारे पास सर्वोत्तम वस्तु हो उसको संसार में प्रस्तुत करो तो फिर सर्वोत्तम वस्तु तुम्हें भी प्राप्त होगी।"

"प्रेम करो तो तुम्हारे हृदय में प्रेम की सरिता बहेगी और तुम्हारी अत्यन्त आवश्यकता के अवसर पर तुम्हें बल मिलेगा। अपने में विश्वास रक्खो, तो तुम्हारे बचनों और कार्यों में सैकड़ों हृदय विश्वास करेंगे।"

मैंने एक मनुष्य को यह कहते हुए सुना कि अरे भाई! अमुक व्यक्ति से हमने कोई घृणा नही की किन्तु वह मुझसे बराबर घृणा कर रहा है। वह मेरा शत्रु बन गया है। मैंने तो उसके साथ कोई शत्रुता का व्यवहार नहीं किया। यह बात ठीक हो सकती है किन्तु ऐसे मामले बहुत ही कम होते हैं। यदि आप दूसरो से शत्रुता का भाव नही रक्खेंगे तो आशा यही है कि शायद ही आप का कोई शत्रु हो। इसकी जाँच करते रहो कि तुम्हारी ओर से कोई शत्रुता तो नहीं हो रही है। किन्तु यदि दूसरा कोई तुमसे बिना कारण शत्रुता करता है तो उसका सामना प्रेम और शुभेच्छा से करो। इस प्रकार अपने प्रेम से अपने शत्रु की शत्रुता को तुम निष्फल कर दोगे और उसकी शत्रुता से तुम्हारी कोई हानि न होगी। प्रेम से घृणा अधिक निश्चित और सबल है। घृणा प्रेम द्वारा जीती जा सकती है।

यदि तुम घृणा का जवाब घृणा से दोगे तो घृणा और बढ़ जायगी। घृणा का उत्तर घृणा से देना जलती हुई आग मे ईंधन झोंकना है जिससे आग और भी अधिक प्रज्वलित होती है। इस प्रकार घृणा को तुम और भी अधिक बढाओगे। इससे कोई लाभ तो होगा नहीं, हानि सब प्रकार की होगी। घृणा के स्थान में यदि तुम प्रेम करोगे तो घृणा समाप्त हो जायगी और वह तुम्हारे पास पहुँच भी न सकेगी। धीरे-धीरे घृणा के बदले प्रेम करके

तुम अपने शत्रु को अपने वश में कर लोगे । यदि घृणा का जवाब तुम घृणा से दोगे तो तुम्हारा पतन हो जायगा । यदि घृणा का उत्तर तुम प्रेम से दोगे तो केवल अपने को ही तुम ऊँचा न बनाओगे किन्तु उसको भी ऊँचा करोगे जो तुमसे घृणा करता है ।

फारसी के एक कवि ने कहा है, "हमेशा ढिठाई का उत्तर सज्जनता से और दुष्टता का उत्तर दयालुता से दो । दया का हाथ हाथी का बाल पकड कर उसे हांक सकता है । अपने शत्रु के साथ दया के साथ पेश आओ । शान्ति का विरोध करना पाप है ।" एक बौद्ध कहता है, "यदि कोई मूर्खता से मेरे साथ बुराई करता है तो मै बिना कुछ कहे उसके साथ भलाई करूँगा, जितनी अधिक बुराई वह मेरी करेगा, उतनी ही अधिक भलाई मै उसकी करूँगा ।" एक चीन निवासी का कथन है, "बुद्धिमान् पुरुष को यदि कोई हानि पहुँचावे तो उसके बदले मे वह लाभ पहुँचाता है ।" हिन्दू कहता है "बुराई के बदले भलाई करो । क्रोध को प्रेम से जीतो । घृणा, घृणा से शान्त नहीं होती किन्तु प्रेम से शान्त होती है ।"

बुद्धिमान पुरुष या स्त्री का कोई भी शत्रु नहीं होता । प्रायः लोगो को कहते सुनते हैं, "कोई परवाह नहीं, हम उसके साथ भी निबह लेंगे ।" क्या तुम निबह लोगे तो बताओ किस प्रकार निबह लोगे ? दो मे से एक ही ढंग से तुम निबह सकते हो । या तो जैसा वह करता है वैसा ही तुम भी उसके साथ करो । यदि ऐसा करते हो तो तुम अपने को गिराकर उसकी श्रेणी में रख रहे हो और इससे दोनो की हानि होगी । या तुम उससे अपने को बढकर सिद्ध करो । तुम घृणा के स्थान मे उससे प्रेम का बर्ताव करो, बुराई के

स्थान मे भलाई करो, और इस प्रकार उसे ऊँचा करके उसके साथ निबहो। लेकिन याद रक्खो जब तक तुम अपनी मदद नहीं करोगे तब तक तुम दूसरों की मदद नहीं कर सकते। यदि सेवा करते हुए तुम अपने को बिलकुल भूल जाओ तो जो सेवा तुम दूसरों की करते हो उससे भी अधिक तुमको लाभ होगा। यदि तुम दूसरो के साथ वैसा बर्ताव करते हो जैसा दूसरे तुम्हारे साथ करते हैं तो यह इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि तुममें घृणा और बुराई करने की शक्ति मौजूद है और तुम्हे जितना चाहिये उतना मिल रहा है। यदि तुम बुद्धिमान हो तो फिर कोई शिकायत तुम न करोगे। यदि तुम दूसरो के साथ भलाई करते हो तो तुम्हारा मनोरथ सिद्ध हो जाता है और तुम्हे विजय प्राप्त होती है। साथ ही तुम विरोधियों की भी सेवा करते हो, क्योंकि उन्हें तुम्हारी सेवा की अत्यन्त आवश्यकता है।

इस प्रकार तुम अपने विरोधी के रक्षक हो जाते हो और तुम्हारा विरोधी दूसरे भूले भटके और चिन्ताग्रस्त लोगो का रक्षक हो सकता है। कई बार तो हम जानते भी नहीं और लड़ाइयाँ होती रहती हैं। हमको अपने जीवन मे अधिक सज्जनता, अधिक सहानुभूति और अधिक दया की जरूरत है। तब फिर न हम दूसरो को दोषी ठहरावेंगे और न उनको गाली देंगे। बजाय दोषी ठहराने और गाली देने के हम अधिक से अधिक सहानुभूति करेंगे।

'एक दूसरे के प्रति सहानुभूति रक्खो, क्योंकि हमारा मार्ग बहुधा नीरस है, हम थक भी गये हैं और हमारा हृदय भी अत्यन्त संतप्त है। जब हमें यह ज्ञात

होता है कि हमारी कोई परवाह नहीं करता तो हमें बड़ा दुख होता है और हमें यह विस्मरण हो जाता है कि हम भी कभी खुश रहे होंगे।"

"एक दूसरे को अपने कोमल करों से गले लिपटाओ और प्रेम की मिठास से उन्हें अपनाओ। मीठे वचन बोलने से कभी न चूको जब कि हमें जीवन यापन करना है। मीठे वचन प्रायः स्वर्ग के अमृत रूपी पदार्थ के तुल्य है।"

जब हमे मालूम हो जाता है कि बुराइयाँ, गल्तियाँ और पाप सब मूर्खता से होते हैं तो जिस पुरुष मे भी हम इन विकारो को देखेंगे उसके साथ, यदि हम ठीक रास्ते पर हैं तो, दया और सहानुभूति करेंगे। हमारी दया प्रेम मे बदल जायगी और प्रेम सेवा मे दिखलाई पड़ने लगेगा। इस प्रकार का ईश्वरीय नियम है। कमजोरो को तंग करने की अपेक्षा हम उनको ऊपर उठावेंगे जब तक कि वह अपने स्वामी बनकर अपनी मदद न कर सकें। याद रखिये सारी उन्नति भीतर से होती है। जैसे-जैसे मनुष्य के भीतर ईश्वरीय चेतना पैदा होती है तैसे-तैसे वह ईश्वरीय नियमो को समझता जाता है। यदि अपने जीवन मे ईश्वरीय चेतनता अपने कार्यों द्वारा प्रकट करें तो इससे बढ़कर दूसरों मे ईश्वरीय चेतनता पैदा करने का दूसरा अच्छा साधन नहीं है।

हम दूसरो को किस प्रकार सुधारें—केवल कह कर नहीं प्रत्युत कार्य करके, केवल उपदेश देकर नहीं प्रत्युत उस उपदेश को कार्यान्वित करके; स्वयं उसी प्रकार का जीवन व्यतीत करके, सिद्धान्त की

जाते कहकर नही। जैसा हम बोवेंगे वैसा हम काटेंगे और जो चीज बोई जाती है वह उसी प्रकार की चीज पैदा करती है। हम किसी व्यक्ति को शस्त्र से प्रहार करके ही नहीं मार सकते प्रत्युत शत्रुतापूर्ण विचारो से हम उसे मारते हैं। शत्रुतापूर्ण विचारो से हम अपने शत्रु को केवल मारते ही नही किन्तु उन विचारो से हम अपनी भी हत्या करते हैं। बहुत से लोगों ने दूसरों की बुराई सोची और इस सोचने से ही वे बीमार पड गये। कुछ तो वास्तव मे ऐसा सोचते-सोचते मर भी गये हैं। संसार मे घृणा बोकर हम उसे नरक बना देते हैं। संसार मे प्रेम का बीज बोओ तो सारा ससार तुम्हारे लिये सुन्दर और गौरवपूर्ण हो जायगा।

जो प्रेम नही करते वे जीवित न रहने के बराबर हैं और यदि रहते हैं तो मुर्दा होकर। जो लोग संसार के सब प्राणियो से प्रेम करते हैं वे धन्य हैं, उनका जीवन सार्थक है और उन्हीं को जीवन का आनन्द और जीवन शक्ति बराबर मिलती है और बढती जाती है। इस प्रकार का जीवन उत्तरोत्तर विशाल और प्रभावशाली होता जाता है। जितना उदार पुरुष होगा या स्त्री होगी उतना ही उदार उनका प्रेम और मित्रता होगी। जितना सकीर्ण पुरुष होगा या स्त्री होगी और जितना ही स्वार्थपूर्ण उनका स्वभाव होगा उतना ही उनको लोगों से शत्रुता होगी। किसी भी मूर्ख के लिये ससार से द्वेष करना सरल है। संसार से प्रेम करना और ससार से मिलकर चलने के लिए एक उदार प्रकृति की आवश्यकता है। केवल वे ही स्त्री और पुरुष संसार से कटे-कटे रहते हैं जिनके विचार ओछे हैं, जो स्वार्थी हैं और जो अपना ही लाभ हमेशा देखा करते हैं। जिन स्त्री या

पुरुषो के हृदय उदार और स्वार्थ-रहित हैं वे कभी संकुचित हो ही नहीं सकते। छोटे विचारो का पुरुष वह है जो हमेशा अपने स्वार्थ के लिये कोशिश करता है। उदार हृदय वाला पुरुष ऐसा कभी न करेगा। संकीर्ण हृदय वाला पुरुष लोगो से मेल मिलाप बढ़ाने के लिये, लोगो से सत्कार पाने के लिये इधर-उधर दौड़ता फिरता है। उदार हृदय वाला घर ही मे बैठा रहता है और लोग उसकी ओर आकर्षित होते हैं। एक केवल अपने ही से प्रेम करता है और दूसरा संसार से प्रेम करता है। वह ससार भर से प्रेम करने के लिये लोगो में घुल मिल जाता है।

जितना अधिक एक पुरुष प्रेम करता है उतना ही अधिक वह ईश्वर के समीप पहुँचता है क्योकि ईश्वर अथाह प्रेम का सागर है। जब हम अपने को ईश्वर के समान मानने लगते हैं तो, ईश्वरीय प्रेम हममे इतना भर जाता है कि वह बह निकलता है और दूसरों के जीवन को भी यशस्वी बनाता है।

जिस समय हमें इस बात का ज्ञान हो जाता है कि हम और ईश्वर एक ही हैं उसी समय हम ठीक-ठीक अपना सम्बन्ध अपने भाइयों से स्थापित करते हैं। हम ईश्वरीय नियम के अनुसार चलते हैं और अपने जीवन को दूसरो की सेवा में लगा देते हैं। हमे आन्तरिक ज्ञान हो जाता है। तमाम जीवधारियो में एक ईश्वर का प्रतिबिम्ब है और हम उसी एक ईश्वर के भिन्न भिन्न अंग हैं, ऐसा होने पर हमे मालूम होता है कि बिना अपनी सेवा किये हम दूसरों की सेवा नहीं कर सकते। उसी समय हमे यह भी मालूम होता है

कि बिना अपनी हानि किये हम दूसरो को हानि नहीं पहुँचा सकते। उसी समय हमे यह भी मालूम होता हैं कि जो अपने ही लिये जीवित रहता है उसका जीवन बहुत ही सकुचित हो जाता है क्योंकि इस विस्तृत मानव क्षेत्र मे उससे कोई काम नही होता। किन्तु जो सेवा करता है वह अपने जीवन को लोगो के जीवन मे मिला देता है और इस प्रकार वह अपने जीवन के मूल्य को हजारो गुना बढ़ा लेता है और चारो ओर से उसे सुख ही सुख मिलता है, क्योकि सब मे वह अपने जीवन का अश ही देखता है।

सच्ची सेवा के बारे मे दो एक शब्द कहना जरूरी है। पिटर और जान एक बार गिरजे जा रहे थे। ज्योही वे फाटक के भीतर जाने वाले थे कि उनको एक गरीब लॅगडा मिला। उसने उनसे भिक्षा माँगी। दिन भर का भोजन देने और भविष्य मे उसको फिर दीन अवस्था मे छोड देने की अपेक्षा पिटर ने एक वास्तविक सेवा की जो उसके लिये और ससार भर के लिये लाभदायक थी। उन्होंने कहा, 'सोना और चाँदी तो मेरे पास नही है किन्तु जो कुछ मेरे पास है, उसे मै तुमको दे रहा हूँ।" ऐसा कहकर उन्होंने उसे एक मनुष्य बना दिया और उसे इस योग्य कर दिया कि वह अपने भोजन का प्रबन्ध स्वय कर सके। सबसे बड़ी सेवा जो हम दूसरो की कर सकते हैं, यह है कि उन्हे हम अपनी सहायता करने के योग्य बना दें। सीधे मदद देने से सम्भव है कि जिसको मदद दी जाय वह आश्रित बन जाय यद्यपि ऐसा होना कोई आवश्यक नही है। यह बात परिस्थितियो पर निर्भर है। किन्तु किसी को इस योग्य बना देना कि वह अपनी स्वयं मदद कर सके, उसे कमजोर बनाना नहीं है बल्कि उसको साहसी और

सबल बनाना है, क्योंकि ऐसा करने से उसका जीवन उदार और मजबूत होता है।

मनुष्य में ऐसा भाव उत्पन्न कर देना कि वह स्वयं अपनी सहायता कर सके, इससे बढ़कर उसके लिये और कोई दूसरी अच्छी सहायता नहीं हो सकती। मनुष्य अपने भीतर की सुप्त शक्तियों को जान ले, इससे बढ़कर ज्ञान देने का कोई दूसरा अच्छा साधन नहीं है। जब मनुष्य समझ ले कि हम और ईश्वर एक ही हैं तो समझो कि उसकी सुप्त शक्तियाँ जाग्रत हो उठीं। उस समय वह अपने को ईश्वर की ओर लगा देगा जिससे ईश्वर का काम और उसकी इच्छा उसी मनुष्य के द्वारा पूर्ण होती रहे।

इन्हीं विचारों से आज कल की सामाजिक समस्यायें भी हल हो सकती हैं। विश्वास रखिये, जब तक हम इन विचारों को पूर्ण रूप से समझ कर अपना जीवन उन्हीं के अनुसार न बनावेंगे तब तक सामाजिक समस्याओं का पूरा और चिरस्थायी हल नहीं हो सकता।

बुद्धि और भीतरी प्रकाश

ईश्वर मे अथाह बुद्धि है और जितना अधिक सम्पर्क हम ईश्वर से रक्खेंगे उतनी ही अधिक बुद्धि हमे मिलेगी और हमारे द्वारा प्रकाशित होगी। इस प्रकार हम ब्रह्माण्ड की तह तक पहुँच सकते हैं और उन विभूतियो का पता लगता सकते हैं जिनको बहुत से लोग नही जानते किन्तु जो जानी जा सकती हैं।

उत्तम बुद्धि और ज्ञान प्राप्त करने के लिये हमे किसी के द्वारा नही किन्तु सीधे ईश्वर पर विश्वास होना चाहिये कि वह हमारा पथ प्रदर्शक है। ज्ञान और बुद्धि के लिये हम दूसरो के पास क्यो जायँ? मनुष्यो की अपेक्षा हम सीधे ईश्वर से ही क्यो न प्राप्त करें? जिस स्रोत से ये चीजें मिलती हैं उसी के पास हम क्यो न जायँ? यदि किसी को बुद्धि चाहिये तो उसे सीधे ईश्वर से माँगना चाहिये। ईश्वर कहता है, "मागने के पहिले मै लोगो को दूँगा और बोलने के पहले मै उनकी बातो पर ध्यान दूँगा।"

इस प्रकार जब हम ईश्वर के पास सीधे जाते हैं तो फिर हम महान् पुरुषो, सस्थाओ और पुस्तको के दास नहीं रह जाते किन्तु यदि इनसे सचाई का कोई सुझाव हमे मिले तो उसके ग्रहण करने के लिये हमे हमेशा तैयार रहना चाहिये। ये हमे बुद्धि देने के स्रोत नही हैं किन्तु इनसे हमे बुद्धि मिल सकती है। ये हमारे मालिक नही हैं, हाँ, हमारे गुरू हैं। कविवर ब्राउनिग ने क्या ही खूब कहा है:—

सत्य हमारे भीतर है। तुम्हारा विश्वास किसी में भी क्यों न हो किन्तु सत्य बाह्य पदार्थों में निहित नहीं है। हमारे हृदय के भीतर सत्य का केन्द्र है और उसी मे वह पूर्णरूप से रहता है।

इससे बढ़कर शिक्षाप्रद उपदेश ससार में और दूसरा क्या हो सकता है कि "तुम अपने हृदय से सच्चे रहो।" यानी अपनी आत्मा के प्रति वफादार रहो, क्योंकि आत्मा के ही द्वारा ईश्वर हमसे बातचीत करता है। यह हमारा भीतरी पथप्रदर्शक है। यह वह प्रकाश है जो इस संसार मे हर एक व्यक्ति को प्रकाशित करता है। इसको अंतःकरण भी कहते हैं। यह आपसे आप बोलता है। यह हमारी आत्मा की आवाज है, यह परमात्मा की आवाज है। महात्मा ईसा ने कहा है, "तुम अपने भीतर एक आवाज सुनोगे जो कहेगी कि यह सही रास्ता है, इसी पर चलो।"

जब एलिजा पहाड पर थे तब बडी शारीरिक हलचल के बाद उन्होंने अपने भीतर की बहुत ही धीमी आवाज सुनी जो उनकी आत्मा की आवाज थी, जिसके द्वारा ईश्वर बोल रहा था। यदि हम अन्तःकरण की आवाज के अनुसार चलें तो वह और भी अधिक स्पष्ट तथा और भी अधिक खुलकर बोलेगी, यहाँ तक कि धीरे-धीरे जो वह कहेगी वह हमेशा ठीक ही हुआ करेगा। कठिनता तो यह है कि हम इस आवाज की बात को नहीं मानते और न उसके अनुसार काम ही करते हैं। तब हमारी दशा उस घर की तरह हो जाती है जिसमें दरारें पड गई हैं। कभी हम इधर खींचे जाते हैं और कभी उधर, यहाँ

तक कि किसी बात का हमारा निश्चय नही होता। मेरे एक मित्र इस भीतरी आवाज को इतने ध्यान से सुनते हैं और उसी के अनुसार इतनी तेजी से काम करते हैं और उसी आवाज के बल पर अपने जीवन को चलाते हैं कि वह हमेशा ठीक समय पर ठीक रीति से सब काम ठीक ठीक करते हैं। वह जानते हैं कि कब और किस प्रकार काम करना चाहिये। उनकी दशा उस घर की तरह नही रहती जो फट गया है।

किन्तु कुछ लोग पूछ बैठते हैं कि "क्या हमेशा अन्तःकरण के अनुसार काम करने से हम खतरे से बच सकते हैं? मान लो कि हमारा अन्तःकरण कहता है कि अमुक व्यक्ति को हानि पहुँचा दो तो?" हमे इसकी परवाह नही करनी चाहिये, क्योकि हमारी भीतरी आवाज अथवा ईश्वरीय आवाज हमसे कभी न कहेगी कि अमुक को नुकसान पहुँचा दो और न हमसे कोई ऐसा काम करने के लिये कहेगी जो ठीक न हो, जो सच न हो और जो न्यायपूर्ण न हो। यदि नुकसान पहुँचाने की आवाज आपको सुनाई पडे तो समझ लो कि वह ईश्वर की आवाज नही है। यह तो तुम्हारी नीच बुद्धि है जो ऐसा करने के लिये तुम्हे बाध्य कर रही है।

अपनी बुद्धि को दबाओ नही किन्तु ईश्वरीय तेज द्वारा उसे बराबर प्रकाशित करते रहो। ज्यों-ज्यों उसमे ईश्वर का प्रकाश भरता जायगा त्यों-त्यों हमारी बुद्धि हमको प्रकाश और शक्ति देगी। जब मनुष्य ईश्वर मे सर्वथा लीन हो जाता है तो वह ज्ञान और बुद्धि के साम्राज्य में प्रवेश करता है। परमात्मा मे वही लीन हो सकता है जो यह समझता है कि हमको

शक्ति ईश्वर से ही मिली है। जब मनुष्य इस महान् तत्त्व को समझ लेता है और अपने को ईश्वर की ओर लगा देता है जो बुद्धि का अथाह समुद्र है, तो वह असली शिक्षा के द्वार में प्रवेश करता है और वह रहस्य की बातें, जो उसे पहले मालूम नहीं थीं, अब मालुम होने लगती हैं। इसी प्रकार की शिक्षा मनुष्य को प्राप्त करनी चाहिये जो भीतर से विकसित होती है और जिसका सम्बन्ध ईश्वर से होता है।

यदि हम ईश्वरीय आवाज को सुनें तो जिन अमूल्य वस्तुओं की हमें जरूरत हो वे सब प्राप्त हो सकती हैं। इस प्रकार हम महात्मा हो सकते हैं और हर वस्तु की तह तक पहुँच कर उसे जान सकते हैं। कोई नये तारे नहीं हैं, कोई नये कानून नही हैं किन्तु यदि हम ईश्वर से खुलकर सम्पर्क रक्खें तो हम तारों को भी जान सकते हैं जो पहले नहीं जाने गये और इस प्रकार वे हमारे लिये नये हो जायँगे। जब हमें सचाई का ज्ञान हो जायगा तो हमें उन चीजों की जरूरत न रह जायगी जो बराबर बदलती रहती हैं। तब हम अपनी आत्मा ही में आनन्द ले सकते हैं। हम भीतर का दरवाजा खोल कर बाहर देख सकते हैं और जो चीज चाहें, एकत्र कर सकते हैं। यही सच्ची बुद्धिमानी है। ईश्वर सम्बन्धी ज्ञान का ही नाम बुद्धिमानी है। बुद्धिमानी भीतर से प्राप्त होती है। वह योग्यता से भी बडी है। बहुत सी वस्तुओं का ज्ञान तो अच्छी धारणा-शक्ति में परिश्रम करके प्राप्त होता है किन्तु बुद्धिमानी ज्ञान से कहीं ऊँची है और ज्ञान उसका एक अंश है।

जो बुद्धिमानी के साम्राज्य में प्रवेश करना चाहता है उसे अपनी बुद्धि के अहंकार को छोडना पडेगा। उसे एक बच्चे के सदृश होना होगा। पक्षपात और पहले से एकत्र की हुई धारणाएँ सच्ची बुद्धिमानी

मे विघ्न उत्पन्न करती हैं। घमंड से भरी हुई धारणायें हमेशा अपने को हानि पहुँचाती और बुरा प्रभाव डालती हैं। वे सचाई के फाटक मे घुसने से रोकती हैं।

चारो ओर हम धर्म के संसार मे, विज्ञान के संसार मे, राजनीति के क्षेत्र मे और समाज मे, बडे-बडे धुरन्धर विद्वान देखते हैं किन्तु वे अपने ही अभिमान और स्वार्थ मे इतने फँसे रहते हैं कि सचाई का प्रकाश उनमे देखने को नहीं मिलता और बढ़ने की अपेक्षा वे दिनोंदिन संकुचित होते जाते हैं और सचाई के ग्रहण करने की उनमे योग्यता ही नही रह जाती। संसार की उन्नति में सहायता पहुँचाने के स्थान मे वे रोडे अटकाते रहते हैं। किन्तु वे ऐसा हमेशा नहीं कर सकते। ऐसे लोग घायल और मुर्दा होकर पीछे रह जाते हैं और ईश्वर की सचाई का विजयी रथ धीरे-धीरे आगे बढ़ जाता है।

जब कि भाफ के इंजिन (Steam Engine) का प्रयोग हो रहा था और जब उसका इस्तेमाल पूरा-पूरा नही होने पाया था तो एक प्रसिद्ध अँगरेज वैज्ञानिक ने एक विस्तृत पुस्तिका लिखी थी जिसमे उसने सिद्ध किया था कि समुद्र मे स्टीमइंजिन का प्रयोग हो ही नहीं सकता, क्योंकि भट्टी मे जलाने के लिये पर्याप्त मात्रा मे कोयला ले जाना किसी भी जहाज के लिये बिल्कुल असंभव है। किन्तु दिलचस्प बात तो यह है कि जो जहाज इंगलैण्ड से अमेरिका पहले पहल गया उसमे सामान के अलावा इस विस्तृत पुस्तिका के पहिले संस्करण का एक भाग भी रक्खा हुआ था। उस पुस्तिका का एक ही संस्करण हो पाया था यद्यपि अब उसके कई संस्करण मिल सकते हैं।

यह वास्तव मे एक मनोरञ्जक बात मालूम होती है किन्तु सब से मनोरञ्जक बात उस मनुष्य की है जो जानबूझ कर सत्य का दरवाजा बन्द कर देता है। सत्य रूढ़ियो से, धर्मान्धता से अथवा किसी स्वीकृत धर्म से नहीं मिल सकता। सम्भव है, सत्य का मेल रीतिरिवाजो और विश्वासो से न खाय। इसके विरुद्ध

तुम्हारी आत्मा में कई झरोखे हों ताकि इस ब्रह्माण्ड की पूर्ण छटा उसे सुन्दर बनावे जो अगणित साधनों से दीप्तिमान है। वहां पर एक साधारण सिद्धान्त की छोटी सी खिड़की का काँच कितनी आभा की झलक दे सकता है। अन्धविश्वास के परदों को चीर दो; सुन्दर जालियों से रोशनी आने दो--वह रोशनी सत्य के समान विशाल तथा आकाश की तरह ऊर्ध्वगामी है। अपने कानों को सितारों के स्वर्गीय संगीत से तथा प्रकृति के निनाद से प्लावित करो। जिस प्रकार पौधे सूर्य की रोशनी को लेने के लिये बढते हैं, तुम्हारा हृदय भी सत्यम्, शिवम् को पाने के लिये उसी प्रकार अग्रसर हो। हजारों अदृश्य-शक्तियाँ अपने शान्ति-प्रदायक भवनों से तुम्हारी मदद करेंगी और इस लोक की तमाम शक्तियाँ तुम्हें बल प्रदान करेंगी। पूर्ण सत्य के ग्रहण करने में और अपूर्ण सत्य के बहिष्कार करने में भय न करो।"

अपनी बुद्धि के अभिमान, पक्षपात या पूर्व निश्चित सम्मति से मनुष्य अपने को सत्य के मार्ग से हटा लेता है किन्तु नियम कहता है

कि ऐसे व्यक्ति के पास सत्य जायगा ही नही। दूसरी ओर यदि कोई स्त्री या पुरुष सत्य का फाटक खुला रखता है तो एक बडा कानून यह भी है कि चारो ओर से सत्य बहकर उस स्त्री या पुरुष के पास जायगा। स्वतंत्र पुरुष ही सत्य का दरवाजा खोल सकते हैं, दूसरे नहीं। क्योंकि सत्य ही हमे स्वतंत्र बनाता है। जो लोग सत्य पर नहीं चलते, वे गुलामी की जंजीरों में बँधे रहते हैं, क्योंकि सत्य वहाँ हरगिज न जायगा जहाँ उसकी पूछ न हो अथवा जहाँ उसका सम्मान न किया जाय।

जहाँ सत्य को प्रवेश नहीं मिलता वहां उसके साथ जाने वाली महान् बरकतें ठहर नहीं सकतीं। वह वहाँ अपना एक दूत भी भेजता है जो शारीरिक, आध्यात्मिक और मानसिक कमजोरी, बीमारी और मृत्यु लेकर जाता है और अनिष्ट करने लगता है। जो पुरुष दूसरों की स्वच्छन्द सत्य की खोज मे बाधा डालेगा, जो दूसरों को हानि पहुँचाने की दृष्टि से सत्य का ढोंग करेगा वह डाकू से भी बदतर है। उससे अपार हानि होती है। जिस आदमी का जीवन वह अपने हाथ मे लिये हुए है उसको वह निश्चित रूप से भारी हानि पहुँचा रहा है।

ईश्वर के असीम सत्य को रखने और बाँटने के लिये क्या किसी ने किसी को नियुक्त कर रक्खा है? बहुत से लोग श्रद्धावश उपदेशक कहे जाते हैं किन्तु सच्चा उपदेशक दूसरों के लिए सत्य की खोज नहीं करेगा। सच्चा उपदेशक वह है जो दूसरों को आत्म-ज्ञान करा दे और उसके भीतर जो शक्तियाँ हैं उनकी जानकारी करवा दे जिससे वह सत्य की खोज स्वयं करने लगे। इसके अतिरिक्त और जो काम उपदेशक करें तो समझ लेना चाहिये कि वे अपने लाभ के लिये

कर रहे हैं। जो इस बात का ढोंग रचता है कि जो मै कहता हूँ वही सत्य है और उसके अलावा कोई सत्य नहीं है वह धर्मान्ध है, मूर्ख है।

पूर्वीय साहित्य मे मेढ़क की एक कहानी है। वह एक कुयें मे रहता था। उसके बाहर वह कभी नहीं गया था। एक दिन एक दूसरा मेढ़क, जो समुद्र मे रहता था, उस कुये मे गया। उसको सब चीजो के जानने की इच्छा थी, इसलिये वह कुये के भीतर गया। कुयें के मेढ़क ने पूछा, "तुम कौन हो और कहाँ रहते हो?" समुद्र के मेढक ने उत्तर दिया, "मै एक मेढ़क हूँ और समुद्र मे रहता हूँ।" कुएँ के मेढ़क ने पूछा, "समुद्र क्या चीज है और कहाँ है?" समुद्र के मेढ़क ने उत्तर दिया, "समुद्र पानी का बहुत बडा भण्डार है और यहाँ से दूर नहीं है।" कुयें के मेढ़क ने पूछा, "तुम्हारा समुद्र कितना बडा है?" समुद्र के मेढक ने कहा, "मेरा समुद्र बहुत ही बडा है।" कुयें वाले मेढ़क ने पास ही पड़े हुए एक छोटे पत्थर को दिखला कर कहा कि क्या समुद्र इतना बडा है? समुद्र के मेढ़क ने कहा, "इससे कहीं बडा है।" कुयें वाले मेढ़क ने उस तख्ते को दिखलाकर कहा, जिसमे वे दोनो बैठे हुए थे कि, क्या समुद्र इतना बडा है। समुद्र के मेढ़क ने कहा, "इससे कहीं अधिक बडा है।" कुयें के मेढ़क ने पूछा, "तो फिर कितना बडा है?" समुद्र के मेढ़क ने कहा, "मैं जिस समुद्र मे रहता हूँ वह तुम्हारे सारे कुयें से बडा है। तुम्हारे कुयें की तरह उसमे लाखो कुयें बन जायँगे।" कुयें के मेढ़क ने कहा, "बेवकूफ कहीं के। तुम धोखेबाज हो। तुम बडे झूठे हो। मेरे कुयें से चले जाओ। तुम्हारे ऐसे मेढ़को से मै कोई सम्बन्ध नहीं —— ——।"

"यदि तुम सत्य को जान लो तो सत्य तुमको स्वतन्त्र बना देगा।" यदि सत्य का दरवाजा बन्द कर दोगे और अपने ही अहंकार में भूले रहोगे तो तुम्हारा अहंकार ही तुमको मूर्ख बनाये रहेगा।" यह बात मै उन लोगो के लिये कह रहा हूँ जिन्हे अपनी प्रतिभा का बड़ा घमड है। मूर्खता से मानसिक विकास नही होने पाता। सत्य की ओर बेपरवाही करने से मानसिक उन्नति रुक जाती है और एक प्रकार की मूर्खता पैदा हो जाती है। आप उसको 'मूर्खता' भले ही न कहे। दूसरी ओर एक मूर्खता और है जो उन सब बातो को आँख बन्द करके मान लेने से पैदा होती है जिनको कोई एक विशेष व्यक्ति कह देता है, अथवा जो किसी एक विशेष पुस्तक मे लिखी होती है अथवा किसी एक विशेष संस्था मे पाई जाती हैं। वे ही लोग ऐसी ऐसी बातो को मानते हैं जो केवल बाहर देखते हैं, अपने भीतर के प्रकाश को नहीं देखते जिसकी उपासना करने से प्रकाश और भी अधिक स्पष्ट होता जाता है। वाल्ट व्हाइटमैन कहते हैं।

> *"इसी तरह से मै अपने को बन्धनो से विमुक्त करता हूँ। मै ही अपना पूर्णरूप से स्वामी हूँ। मै अपनी इच्छानुसार विचरण करता हूँ। मै ही दूसरो की बातो को सुनता हूँ और उनपर अच्छी तरह विचार करता हूँ। मैं ही बड़ी नम्रता से उनकी देख भाल करता हूँ और ग्रहण करके उनपर विचार करता हूँ। लेकिन ये सब बातें मैं किसी के बन्धन में जकडकर नही करता।*

इसके लिये खुशी मनाना चाहिये कि ईश्वर का असीम सत्य सब

के लिये खुला हुआ है। वह सबके लिये एक-सा है। जितना अधिक कोई उसे अपनावेगा उतना ही अधिक वह उसके अन्दर निवास करेगा।

'जिस बुद्धि से हम जीवन क्रम चलाते हैं उसे भी जानना आवश्यक है। हम जब ईश्वरीय नियम को समझ लेते हैं तो अपनी बुद्धि का प्रयोग भी ठीक-ठीक कर सकते हैं। संसार की वस्तुओं को अपनाने की विधि जब हमें मालूम हो जाती है तो वे सब हमारी हो जाती हैं।

"मैं इसे अटल सिद्धान्त मानता हूँ जिसका उल्लंघन कोई भी प्राणी नहीं कर सकता। हमारे भीतर वह शक्ति है जिसके द्वारा हम जो कुछ इच्छा करें वह सब प्राप्त कर सकते हैं।"

समय आने पर यदि हम निश्चय न कर सकें कि हमें क्या करना चाहिये अथवा किधर जाना चाहिये तो यह दोष हमारा है। यदि दोष हमारा है तो इस अप्राकृति अवस्था के निवारण की कुंजी भी हमारे ही हाथ में है। यदि हम सदा जागृत रहें और भीतरी प्रकाश तथा शक्ति को पहचान लें तो हमारी ऐसी दशा कभी हो ही नहीं सकती। हमारे भीतर रोशनी बराबर चमक रही है। हमें लगातार यही देखना है कि हमारे और रोशनी के बीच विघ्न डालने वाली कोई वस्तु उपस्थित न हो जाय। महात्मा ईसा ने कहा है, "हे ईश्वर, तुम्हीं हमारे जीवन के स्रोत हो; तुम्हारी रोशनी ही से हम में रोशनी है।"

एक बहुत ही पहुँचे हुये सज्जन के शब्दों को हम यहाँ उद्धृत कर रहे हैं, जो कभी अँधेरे में भटके नहीं और समय आने पर जो जानते

हैं कि हमे क्या करना चाहिये और उसे कैसे करना चाहिये । वे कहते हैं, "जब तुम खूब भटक चुको और तुम्हे यह न सूझे कि हम किस रास्ते से होकर जायें तो फिर तुम भीतरी आँखो से देखो और भीतरी कानो से सुनो । ऐसा करने से तुम्हें निर्विघ्न रास्ता मिल जायगा और इसी सीधे और प्राकृतिक रास्ते पर चलकर बिना किसी सन्देह के आगे बढ़ो।" आपत्ति काल मे जब चिन्ताओं ने हमें घेर रक्खा हो तो बाइबिल के एक आदेश को मानना चाहिये जिसे पढ़ते तो बहुत से लोग हैं किन्तु मानते बहुत कम हैं । वह आदेश यह है, "तुम अपने सब से भीतर वाले कोठे मे घुस जाओ और दरवाजा बन्द कर लो।" क्या इसका शाब्दिक मतलब यह है कि हम एक एकान्त कमरे मे दरवाजे की कुंजी लेकर बैठ जायें ? यदि वास्तव मे ऐसी बात होती तो खुली हवा, खुली जमीन और खुले समुद्र मे बैठने के लिये हमे क्या जरूरत थी ? महात्मा ईसा तो झीलों मे, जंगलों मे रहना कही अधिक पसन्द करते थे । वे नगर के घरो के छोटे-छोटे बँधे कमरो मे रहना पसन्द नही करते थे तथापि महात्मा ईसा के उपदेश इतने विस्तृत थे कि संसार के किसी भी स्थान मे बैठकर और उनको मानकर उनके अनुसार हम काम कर सकते हैं ।

एक बहुत ही बडे अन्तर्ज्ञानी के पास नगर के कार्य्यालय मे एक मेज थी जहां एक दूसरे सज्जन भी लगातार अपना काम करते थे और कभी-कभी जोर-जोर बातचीत भी करते थे किन्तु उस अन्तर्ज्ञानी के काम मे कोई बाधा नही पडती थी । यदि कभी कोई आवाज उसे सुन पडती थी तो वह निष्कपट पुरुष अपने ध्यान को चारो ओर से एकत्र कर अपने ही विचारों मे लीन हो जाता था । इससे उसे ऐसा आनन्द

आता था मानो किसी प्राचीन जंगल मे अकेला बैठा हो। उस शोर के बीच वह अपनी कठिनाई को लेकर बैठा रहता था और उसी के सुलझाने मे इतना डूबा रहता था कि जब तक उस कठिनाई को दूर करने का कोई उपाय उसे मालूम नहीं हो जाता था, तब तक वह ध्यान लगाये बैठा रहता था। कई वर्षों के बाद भी उसे वहा उस मेज के पास बैठने मे न तो कोई अडचन हुई और न निराशा। सत्य का आन्तरिक बोध हमारी दैनिक भूख को निवारण करता है। वह रोज-रोज का हमारा दैवी भोजन है। वह उस दिन का हमें पर्य्याप्त भोजन दे देता है। आन्तरिक बोध का अनुसरण हमे तुरन्त करना चाहिये, देरी करने से रुकावट पड जायगी और जितनी देरी हम करेंगे उतनी ही हम गलती करेंगे और हमारे विचारों मे एक भ्रम पूर्ण पर्दा पड जायगा और हम अपने मार्ग को ठीक-ठीक पहचान न सकेंगे।

ब्रह्माण्ड के नियम ने एक शर्त हम पर लगा रक्खी है। उसे हमें अवश्य मानना चाहिये। सब इच्छाओ को हटा दो, सत्य को जानने की केवल एक इच्छा अपने पास रक्खो और केवल एक ही निश्चय रक्खो और वह यह कि जो सत्य तुम्हे जान पडे उसे तुरन्त कर डालो। सत्य के प्रेम के सामने और दूसरी किसी बात का भी खयाल नहीं होना चाहिये। इस आदेश को मानो और इस बात को कभी न भूलो कि आशा और इच्छा ये दोनों दुलहिन और दुलहा हैं जो कभी एक दूसरे से अलग नहीं किये जा सकते। ऐसा विचार करने से तुम्हारा अन्धकारपूर्ण मार्ग प्रकाशपूर्ण हो जायगा, क्योंकि भीतर स्वर्ग होने से बाहर भी स्वर्ग मिलता है। इसको भीतरी 'शान्ति' प्राप्त करना कहते हैं। यह शान्ति भीतरी प्रकाश से मिलती है। वह प्रकाश

हर एक व्यक्ति को मिलता है जो इस संसार में उत्पन्न हुआ है। हम अन्तरात्मा की आवाज को सुने और इस प्रकाश से काम लेकर अपना पथ-प्रदर्शन स्वयं करें।

आत्मा दैवी है और वह ईश्वर मे लीन होने के लिये हम पर सब चीजें प्रकट कर देती है। जिस समय मनुष्य ईश्वरीय प्रकाश से अलग हो जाता है, सब चीजें उससे छिप जाती है। नहीं तो कोई भी चीज स्वयं छिपी नही रहती। जब आध्यात्मिक जागृति होती है तो शारीरिक और बौद्धिक कमी दूर हो जाती है। कमियों के दूर होने पर जब अनुभव होता है कि हम और ईश्वर एक हैं तो हम ऐसे स्थान मे पहुँच जाते हैं जहाँ भीतरी आवाज हमेशा हमसे बात चीत करेगी और यदि हम उसके कहने के अनुसार चलें तो वह हमको कभी धोखा न देगी और सब स्थानो मे हमको हमेशा दैवी प्रकाश और पथप्रदर्शन मिलता रहेगा। ऐसा ज्ञान होने से हमको मरने के बाद स्वर्ग न मिलेगा प्रत्युत इसी लोक मे, अभी, आज ही और हर दिन हमे स्वर्ग मिलेगा।

किसी भी मानव को बिना स्वर्ग प्राप्त किये नहीं रहना चाहिये। जब हमारे मन का झुकाव ईश्वर की ओर होता है तो हमको स्वर्ग आसानी के साथ प्राकृतिक रीति से उसी तरह मिल जाता है जैसे फूल खिलते है और हवा चलती है। वह समय पैसों से या कीमत से खरीदा नहीं जा सकता। वह एक विशेष शर्त से मिलता है जिसको संसार के अमीर-गरीब, राजा-रंक और स्वामी और सेवक सब पूरी कर सकते हैं। वह सबको समान रूप से प्राप्त है। यदि गरीब को वह पहले मिल जाता है तो वह राजाओं का सा सुन्दर और बलशाली जीवन

व्यतीत करता है। यदि नौकर को मिल जाता है तो वह अपने स्वामी से भी उत्कृष्ट जीवन व्यतीत करता है।

यदि तुम सर्वाङ्गपूर्ण उत्कृष्ट जीवन व्यतीत करना चाहते हो जो किसी भी लोक में प्राप्त किया जा सकता है तो तुम अपने को ईश्वर से अलग की भावना को दूर कर दो। समझो कि हम और ईश्वर एक हैं। तुम अपने को ईश्वर के समान समझोगे तो तुम को संसार भर की चीजें मिल जायँगी। विना किसी डरके जो तुम कर सकते हो, आज करो और कल फिर करने के लिये तैयार रहो। आज की मानसिक, आध्यात्मिक और शारीरिक जीवन की सामग्री प्राप्त कर लो और कल की कल प्राप्त करो। कल की सामग्री की जरूरत आज नही है। उसकी जरूरत कल पडेगी।

यदि मनुष्य ईश्वरीय नियम पर विश्वास करता है तो कानून उसे कभी धोखा न देगा। आधे मन से नियम पर विश्वास करने के कारण असन्तोषजनक और अनिश्चित परिणाम होता है। ईश्वर से बढ़कर कोई दृढ़ और निश्चयात्मक नही है। वह उसे कभी नहीं धोखा देगा जो उस पर आँख बन्द करके विश्वास करेगा। मनुष्य चाहे जहाँ रहे, चाहे जो कुछ करता रहे, चाहे जागता रहे और चाहे सोता रहे, यदि वह बराबर ईश्वर का स्मरण करता है तो उसका जीवन सार्थक होगा। जैसे जागते हुए हम उसे प्राप्त करते हैं वैसे ही सोते हुए भी हम उसे प्राप्त कर सकते हैं। सोते हुए भी ईश्वर की ओर से हमें प्रकाश और आदेश कैसे मिलते हैं इस पर हम विचार करेंगे।

सोते समय हमारा भौतिक शरीर आराम करता है पर हमारी अन्तरात्मा बराबर काम करती रहती है। शरीर की नीरोगता के लिये

सोना एक ईश्वरीय विधान है। जाग्रत अवस्था मे हमारा शरीर क्षय को प्राप्त होता रहता है, उसकी पूर्ति सोने से होती है। सोना प्रकृति का दिया हुआ क्षति पूरक साधन है। शरीर का जितना क्षय होना है उतने की पूर्ति के लिये यदि मनुष्य को काफी सोने को न मिले तो वह धीरे-धीरे कमजोर होता जायगा और ऐसी दशा मे कोई भी बीमारी शरीर के भीतर घुस सकती है। इसलिये न सोने के कारण जब शरीर थक जाय तो उस समय और समयो की अपेक्षा अधिक सोने की जरूरत है। शरीर उस समय अधिक थकता है जब बाहरी प्रभाव उस पर पडते हैं। जब वह मामूली ढंग से काम करता है तो थकान कम आती है। जब बाहरी प्रभाव शरीर पर पडते हैं तो वे शरीर के कमजोर हिस्सों को पहले धर दबोचते हैं।

जिन कामो मे हम अपने शरीर को लगाते हैं उनसे अधिक महत्वपूर्ण काम करने को हमें यह शरीर दिया गया है। जहॉ शरीर अपने मालिक को भी दबाकर रखता है वहॉ यह और भी अधिक लागू होता है। जितना अधिक हम अपनी मानसिक और आध्यात्मिक शक्ति का अनुभव करेंगे उतना ही हमारा शरीर इन शक्तियो के कारण हलका और बनावट में सुन्दर दिखलाई पड़ेगा। चूॅकि हमारा मन ऊॅचे-ऊॅचे विचारों से सम्पर्क रखता है और स्वर्गीय सुख के बीच में डूबा रहता है इसलिये अधिक खाना-पीना और दूसरी भोग की इच्छायें आप से आप नष्ट हो जाती हैं। भारी और निकृष्ट भोजन की इच्छा भी नही रहती है जैसे पशुओ का मास और शराब जो शरीर के विकारों को उत्तेजित करते हैं और जिनसे दिमाग को साफ और मजबूत होने मे सहायता नहीं मिलती। जितना अधिक शरीर

हलका और बनावट मे सुन्दर होता जाता है उतना ही कम शरीर का क्षय होता है और यदि होता है तो उसकी पूर्ति शीघ्र ही हो जाती है और शरीर हमेशा अच्छी अवस्था मे रहता है। जब शरीर की ऐसी स्वच्छ हालत रहती है तो कम सोने की आवश्यकता पडती है। जितना हम सोते भी हैं, वह हल्के शरीर के लिये आवश्यकता से अधिक है यद्यपि वह दूसरे निकृष्ट शरीरो के लिये काफी नहीं है।

अच्छे विचारो द्वारा जब शरीर हल्का हो जाता है अथवा जब मस्तिष्क का विकास उच्च शिखर पर पहुँच जाता है तो ईश्वर के साथ अपने सम्बन्ध को सोचने के लिये मन और आत्मा को काफी सहायता मिलती है। इस प्रकार शरीर मन की सहायता करता है, जिस प्रकार मन शरीर की सहायता करता है। यही सोचकर महाकवि ब्राउनिङ्ग ने कहा है:—

'हमे कहने दो कि सब अच्छी वस्तुयें हमारी हैं'।
आत्मा शरीर की उतनी ही मदद करती है जितनी
मदद शरीर आत्मा की करता है।"

सोना शरीर के आराम और उसके पुनर्निर्माण के लिये है। आत्मा को सोने की जरूरत नही है। जब सोने के समय शरीर आराम करता है तो आत्मा का काम उतने ही जोर से चलता रहता है जैसे जाग्रत अवस्था में शरीर का काम।

कुछ लोग ऐसे भी हैं जिनको आत्मा के काम की गहरी जानकारी होती है। वे कहते हैं कि हम सोते समय यात्रा करते हैं। कुछ ऐसे हैं जो सोते समय जाग्रत अवस्था के दृश्यो को देखते हैं, जो खबरें उनके

पास आई थीं उन्हे स्मरण करते हैं, और उन घटनाओं को स्मरण करते हैं जिनसे उनकी प्रसिद्धि हुई है।

बहुत से लोग ऐसा नही कर सकते। इसका परिणाम यह होता है कि लाभ के स्थान मे उनकी हानि हो जाती है। किन्तु वे कहते जाते हैं कि जितना हम ईश्वरीय नियमों को समझेंगे उसी के अनुसार हम जहाँ चाहें जा सकेंगे और जाग्रत अवस्था मे जो अनुभव हमने प्राप्त किया है उसको हम अपने मस्तिष्क मे संचित कर सकेंगे। इसमे हमे कुछ नही कहना है किन्तु सच्ची बात तो यह है कि सोते समय प्राकृतिक ढंग से हमे ईश्वरीय प्रकाश और आदेश मिल सकते हैं जो अधिकतर लोगों को नहीं मिलते और जिनसे हमारा बडा लाभ हो सकता है।

ईश्वर से सम्बन्ध रखने वाली हमारी आत्मा हमेशा काम करती है। जब हम सोते है तब भी वह काम करती है। इसी प्रकार जब शरीर आराम करता है तब मन भी आत्मा से प्रेरित होकर जाग्रत अवस्थाओ को सामने रखकर काम करता रहता है। ऐसा हो सकता है और कुछ लोग ऐसा वडे लाभ के साथ करते भी है। बहुत बार तो ऊँचे से ऊँचा आत्म-ज्ञान हमे आत्मा से इसी प्रकार मिलता है और यह ठीक भी है; क्योकि उस समय हमारा सम्बन्ध भौतिक संसार से सर्वथा टूट जाता है। मेरी जानकारी मे कुछ ऐसे लोग भी हैं जो सोने के समय बहुत काम करते हैं और उन्हे जैसा वे चाहते हैं, प्रकाश भी मिलता है। कभी कभी हम जब सोने के लिये जाते हैं तो यह इच्छा करके सोते हैं कि अमुक समय मे हम उठ जायँ और हम ठीक उसी समय उठ जाते हैं। प्रायः देखने मे आता है कि जो समस्यायें हम जाग्रत अवस्था मे नहीं सुलझा सके वे सोने के समय सुलझ जाती हैं।

हमारी एक पत्रकार बहन ने इसी प्रकार अपनी एक कठिन समस्या को सुलझाया था। उसको एक लेख लिखना था। उसने इसी प्रकार अपने ढंग पर लेख लिख लिया था। प्रबन्धक सम्पादक ने उससे प्रातःकाल तक एक बहुत ही बढ़िया लेख लिखने का आदेश दिया जिसमें, काफी बातें दी गई हों और जो काफी योग्यता से लिखा गया हो। वह ऐसा विषय था जिस पर उस बहन की जानकारी बहुत कम थी। लेख लिखने के लिये जो सामग्री चाहिये वह उसे बहुत प्रयत्न करने पर भी न मिली।

वह लिखने बैठ गई किन्तु अन्तरात्मा ने भी उसका साथ न दिया। ऐसा मालूम हुआ कि वह लेख न लिख सकेगी। निराश होकर उसने सो जाने का विचार किया। उसने लिखने की सामग्री अपने मन मे इस प्रकार जमाई कि सोने के समय उसको अधिक से अधिक सहायता मिल सके और ऐसा करके वह सो गई और प्रातःकाल तक खूब सोई। जब वह उठी तो लेख लिखने का पहला काम उसके सामने आया। वह सोचने लगी और आपको सुनकर आश्चर्य्य होगा कि उसके मष्तिष्क के सामने पूरा लेख आकर प्रस्तुत हो गया। बिना कपड़ा बदले ही उसने कलम उठाई और जैसा लेख वह चाहती थी वैसा ही उसने लिख लिया। ऐसा मालूम होता था, जैसे कोई बोलता जाता हो और वह बैठी लिख रही हो।

जो मस्तिष्क एक विषय की ओर लगा हुआ है वह उस ओर उसी प्रकार ध्यान से काम करता रहेगा जब तक कोई दूसरा विषय सामने न आ जाय। जब मनुष्य सोता है तो शरीर आराम करता है और मन तथा आत्मा अपना-अपना काम करते रहते हैं। जब मनुष्य

सोता है तो मन को एक काम मिल जाता है और वह उसी पर लगा रहता है, फिर जागने पर वह उसी का परिणाम उपस्थित करता है। कुछ को तो बहुत जल्द परिणाम निकल आता है और कुछ को देर लगती है। शान्ति और अभ्यास के साथ काम करते रहने से यह शक्ति बढ़ाई जा सकती है।

मन में खीचने की शक्ति होती है। वह लगातार काम करता है। अतएव जब हम सोते हैं तो जिन विचारो को सोच कर हम सोते हैं उन्ही के अनुरूप दूसरे विचारो को भी मन अपनी ओर खींचता रहता है। इस प्रकार जिस प्रकार के विचार हम पसन्द करते हैं उन्हीं को हम अपनी ओर खीचते हैं और सोते समय भी उनसे लाभ उठाते हैं। हमारी भीतरी शक्तियाँ सोने की अवस्था मे जागने की अवस्था की अपेक्षा अधिक चीज ग्रहण करती है। अतएव सोने के पहले मन मे जो विचार होते है उनकी अधिक देखरेख रखने की जरूरत है, क्योंकि उन्ही के अनुसार हम दूसरे विचारो को भी अपनी ओर खीचते है। ये सब बातें पूर्णतया हमारे अधिकार मे हैं।

सोने के समय चीजों को अधिक ग्रहण करने के कारण नियम को समझने और उसका उचित प्रयोग करने से हम अधिक लाभ उठा सकते हैं बनिस्बत जागने की अवस्था के जब भौतिक संसार का प्रभाव हमारे शरीर पर पड़ता रहता है। निम्नलिखित ढंग से अभ्यास करने पर बहुतो को लाभ होगा। जब किसी विशेष विषय की जानकारी की अथवा पथ प्रदर्शन की आवश्यकता हो या

जब तुम्हारे पास कोई ऐसा मसला हो जिस पर एक निश्चय पर न पहुँच रहे हो, तो सोने से पहले सबके लिए मन मे शुभकामना करो। ऐसा करके तुम एक अनुकूल वायुमण्डल उत्पन्न कर लेते हो और तुम्हे बाहर से भी अनुकूल वातावरण प्राप्त होता है।

इस प्रकार अपने को शान्ति के वातावरण मे करके तुम चुपचाप आवश्यक प्रकाश या आदेश के लिये इच्छा करो। मन से भय और आने वाली आपत्तियों को निकाल दो, क्योंकि शान्ति और आशा के वायुमण्डल में ही तुमको शक्ति मिल सकती है। मन में ऐसी आशा भर लो कि जब तुम प्रातःकाल उठोगे तो तुम्हे इच्छित फल मिलेगा। तब फिर प्रातःकाल उठकर संसार की किसी चिन्ता में फँसने के पहले कुछ समय तक अन्तर्ज्ञान प्राप्त करने के लिये शान्ति से बैठ जाओ। जब तुम्हें मालूम हो कि वह आ रहा है तो तुरन्त उसी के अनुसार काम करने लगो। जितना अधिक तुम इस प्रकार काम करोगे, उतनी ही प्रभावशाली शक्ति तुम में आवेगी।

यदि बिना किसी स्वार्थ के तुम किसी शक्ति को बढ़ाना चाहते हो अथवा अपना स्वास्थ्य ठीक करना चाहते हो और शरीर का बल बढ़ाना चाहते हो तो इसी प्रकार का विचार मन में लाओ। इससे तुम्हारी विशेष आवश्यकता या इच्छा के अनुसार तुम्हारे विचार भी उसी प्रकार के बन जायँगे। इस प्रकार तुम अपना झुकाव भीतर की ओर करोगे तो तुम अपना सम्बन्ध भीतर से स्थापित कर लोगे और तुम भीतरी शक्तियाँ लेकर काम करोगे। इससे अच्छा परिणाम मिलेगा। अपनी इच्छाओं के कहने में संकोच न करो। इस प्रकार तुम भीतर एक कम्पन पैदा करते हो जो प्रभावित होकर तुमको काम करने के लिये

प्रोत्साहित करता है और अन्त मे तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो जाती है। जो ईश्वरीय नियम के अनुसार चलता है वह किसी भी अच्छी वस्तु से वंचित नही रहता। जो स्त्री या पुरुष अपनी भीतरी शक्तियो का सदुपयोग करते हैं उनकी प्रत्येक इच्छा पूर्ण हो जाती है।

ज्योही तुम सोने लगो तो प्रेम, शुभ कामना और शान्ति के विचार मन मे लाओ। ऐसा करने से तुमको शान्ति देने वाली और तरोताजा करने वाली गहरी निद्रा आवेगी और तुम्हारी मानसिक, शारीरिक तथा आध्यात्मिक शक्ति बढेगी। इस प्रकार विश्व की उन सारी शक्तियों से तुम्हारा सम्बन्ध हो जायगा जिनसे शान्ति मिलती है।

एक हमारे मित्र देश सेवा के लिये संसार भर मे प्रसिद्ध है। उन्होंने मुझसे कहा है कि वे रात को कई बार एकाएक जाग पड़े और उनके काम से सम्बन्ध रखने वाली बहुत सी तरकीबें उनको अपने आप सूझ गईं। इसके बाद जब वे फिर लेट गये तो उन तरकीबो को कार्य्य रूप में परिणत करने के साधन भी उनको मालूम हो गये। इस प्रकार सोने मे ही उन्हे बहुत सी तरकीबें मालूम हो गई जो कभी भी जाग्रत अवस्था मे सोची नहीं जा सकती थीं और जिनके सफल होने पर संसार को बडा आश्चर्य्य हुआ। मेरे मित्र का हृदय बहुत ही कोमल है। वह अपने जीवन को ठीक ठीक ईश्वरीय नियम के अनुसार व्यतीत करता है और जिस काम मे उसने आत्मसमर्पण कर दिया है उसी की धुन मे वह हमेशा रहता है। उसको नही मालुम कि यह दैवीज्ञान उसको कहाँ से और किस प्रकार मिलता है। सम्भवतः कोई भी नहीं जानता, यद्यपि हर एक के अपने अलग अलग सिद्धान्त रहते हैं।

किन्तु यह बात निश्चित है कि जो ईश्वरीय नियम के अनुसार जीवन व्यतीत करते हैं, उनको दैवीज्ञान मिलता है।

ऊँचे दरजे के दैवीस्वप्न और दैवीज्ञान उन्हीं लोगों को मिलते हैं जो ईश्वरीय नियमो का पालन ठीक ठीक करते हैं। इस विषय के जानकार ने कहा है, "जब शरीर सोने के समय आराम करता है तो आध्यात्मिक ज्ञान का प्राप्त करना एक स्वाभाविक और साधारण चीज है और हम लोग उसे निश्चित रूप से प्राप्त कर सकते हैं। शर्त यह है कि हम बाहरी बातो को छोड़कर, जो इतनी आवश्यक नही हैं, भीतरी बातो की ओर अधिक ध्यान दें।" जो इस समय हम हैं और आगे चल कर जो कुछ हम होगे उसे हमारे विचारों ने ही बनाया है और हमारे विचार दिन की अपेक्षा रात को अधिक काम करते हैं क्योंकि जब हम सोते हैं तो हमारा ध्यान बाहर से खिंचकर भीतर की ओर हो जाता है और हमे ससार के भीतर देखने का अवसर प्राप्त होता है। अदृश्य ससार एक ठोस स्थान है। वह उन्हीं लोगों को प्राप्त होता है जिनका मानसिक और नैतिक स्तर ऊँचा रहता है। जब हमें बाहरी इन्द्रियो से जानकारी नहीं प्राप्त होती तो भीतरी इन्द्रियों द्वारा हमे सुझाव मिलता रहता है। जब लोगो की समझ मे यह बात आ जायगी तो सोने समय वे उसी विषय पर ध्यान लगा कर सोवेंगे जिसके बारे मे उनको पथप्रदर्शन की इच्छा हैं। मिस्रदेश के ऐसे लोग जिनमें फरोह (मिश्र का राजा) के गुण हैं, केवल स्वप्न देखते हैं और कुछ काम नहीं करते। उन लोगों के दूसरे कर्मचारी भी उसी प्रकार के हो जाते हैं किन्तु महात्मा जोसेफ के गुण जिनमें हैं वे लोग स्वप्न देखते हैं और उसको पूरा करके छोड़ते हैं।

फरोह में स्वप्न को पूरा करने की शक्ति क्यों नहीं थी? जोजेफ

च्यो एक पहुँचा हुआ फकीर था। वह केवल स्वप्न ही न देखता था प्रत्युत उसे और दूसरों के भी स्वप्नों को कार्य रूप मे परिणत करना पड़ता था। दोनों के जीवन चरित्र को पढ़िये। जो उन्नति करना चाहते हैं, वे ही जीवन चरित्र पढ़ते हैं। जीवन को काम में लगाने से ही हमें वास्तविक शक्ति मिलती है। जितना अधिक मनुष्य अपने को काम मे लगाता है उतना ही अधिक बल और आनन्द उसे मिलता है और उतना ही अधिक बल और आनन्द वह संसार को भी देता है। मनुष्य चाहे तो वह अपनी इच्छा से अधिक नरक, मे नही रह सकता है। जब वह चाहेगा कि अब मै नरक मे न रहूँगा तो विश्व की सारी शक्तियाँ भी उसे वहाँ रहने के लिये बाध्य नहीं कर सकती। कोई भी पुरुष जो स्वर्ग मे जाना चाहे, जा सकता है और जब वह ऐसा करने का सकल्प कर लेता है तो विश्व की सारी शक्तियाँ उसकी मदद करती हैं।

मनुष्य जब जागकर उठता है तो उसका दिमाग इतना शान्त रहता है कि उस समय वह हर बात को बिना किसी प्रयास के ग्रहण कर सकता है। भौतिक ससार से उस समय उसका नाता टूटा-सा रहता है और उसका दिमाग पहले की अपेक्षा अधिक स्वतंत्र और अपनी-असली हालत मे रहता है। उस समय दिमाग की अवस्था फोटो के एक नाजुक शीशे की तरह होती है जिस पर परछाहीं रूपी बाहरी प्रभाव आसानी से अकित हो जाते हैं। यही कारण है कि अच्छे से अच्छे विचार प्रातःकाल ही मस्तिष्क मे आते हैं जब दिन की चिन्ताओं का कोई प्रभाव उस पर नही पड़ता। यही कारण है कि बहुत से मनुष्य प्रातःकाल अच्छे से अच्छा काम कर सकते हैं।

प्रतिदिन के जीवन को सुव्यवस्थित बनाने के लिये यह अमूल्य

बात याद रखनी चाहिये कि प्रातःकाल मस्तिष्क सफेद कागज की तरह बिल्कुल साफ रहता है। ऐसे शान्त और बहुत सी चीजों को मस्तिष्क में अंकित करने वाले समय पर मन को ऊँचे और वांछित मार्ग पर लगाकर हम पूरा लाभ उठा सकते हैं और भले प्रकार काम शुरू करके दिन के काम को भलीभाँति कर सकते हैं।

प्रत्येक प्रातःकाल हम तरोताजा होकर काम शुरू कर सकते हैं। उस समय ऐसा मालूम होता है कि हम नये सिरे से काम शुरू कर रहे हैं। यह सब हमारे ही हाथ मे है। जब प्रातःकाल आ जाय तो पिछले दिन की हमें कुछ भी परवाह नहीं करनी चाहिये। इतना सोचना काफी है कि जिस प्रकार हमने बीते हुए कल को अच्छी तरह बिताया है उसी प्रकार आज के दिन को भी बितावें। उसी प्रकार जब तरोताजा करने वाला प्रातःकाल आ जाय तो आनेवाले कल की हमें कुछ परवाह न करनी चाहिये। आज हम जिस प्रकार रहेंगे उसी प्रकार हम कल भी रहेंगे, यह स्मरण रखना चाहिये।

"प्रत्येक दिवस नवीनता लिये हुए होता है और प्रतिदिन नये संसार की रचना होती हुई प्रतीत होती है। तुम दुखों और पापकर्मों से संतप्त हो गये हो अतएव यहाँ तुम्हारे लिये और मेरे लिये केवल सुखद आशा है।"

"अतीत की तमाम चीजें बीत चुकी हैं, कार्य हो चुके हैं और आँसू बहाये जा चुके हैं"

"अतीत की भूलें अतीत में ही रहने दो। अतीत के घावों की वेदना घावों के पुर जाने से मिट गई है।"

"उनकी परवाह न करो, क्योंकि हमारे पास कोई

उपाय नहीं है। बिगड़ी हुई बात को न तो हम बना सकते हैं और न हम क्षति की पूर्ति ही कर सकते हैं। ईश्वर बड़ा दयालु है। वह उन्हें क्षमा करें। केवल नये नये दिन हमारे है। आज का दिवस हमारा है, और केवल आज का ही दिवस हमारे हाथ में है।"

"यहाँ पर आकाश आभा से दीप्तिमान है; यहाँ पर पृथ्वी ने पुनर्जन्म लिया है। यहाँ पर थके हुए शरीर के भाग धीरे-धीरे सूर्य की रोशनी और प्रभात की शीतल वायु में तथा ओस के कणों में वृद्धि को प्राप्त होते हैं।'

· प्रत्येक दिवस नवीनता लिये हुए है। हे मेरी आत्मा, सुन और प्रसन्न हो। अतीत के दुःख और पापकर्म तथा भविष्य के दुखों की आशका होते हुए भी आज हमे साहसी बनकर पुनः जीवन प्रारम्भ करना होगा।"

इस नवीन दिन का केवल पहला घंटा बहुत ही मूल्यवान् और गौरव-पूर्ण होता है। उसमें अमरत्व के बीज भी निहित होते हैं। उसके बाद के भी घंटे वैसे ही महत्वपूर्ण होते हैं किन्तु उसके पहले जैसे नहीं जो बीत गये। इस रहस्य को समझ लेने से चरित्र ऊँचा होता। इस सिद्धान्त के समझ लेने से मनुष्य को उस ऊँचे से ऊँचे जीवन की प्राप्ति हो सकती है जिसका अनुमान लगाया जा सकता है।

इस रीति से ऊँचा जीवन हरएक को प्राप्त हो सकता है। कोई भी ऐसा नहीं है जिसे ऊँचा जीवन प्राप्त करने की उत्कट इच्छा न हो और वह कम से कम एक घंटे का भी ऊँचा जीवन व्यतीत न

कर सके। यदि कोई अभागा है तो वह भी सचाई के साथ परिश्रम करने से और इस नियम से कि समान को समान खीचता है, तुरन्त ऊँचे जीवन के समीप पहुँच जायगा। उसके बाद वह और भी समीप पहुँचता जायगा, यहाँ तक कि ऊँचा जीवन उसको बिना किसी कठिनता के स्वाभाविक रूप से मिलता रहेगा और दूसरो को ऊँचा जीवन प्राप्त करने के लिए परिश्रम करना पडेगा।

इस प्रकार विश्व की सबसे ऊँची और सबसे बढिया वस्तु के सम्पर्क मे मनुष्य हो जाता है और उसी से वह प्रेम करने लगता है और विश्व की सबसे ऊँची और सबसे बढ़िया वस्तु भी मनुष्य के सम्पर्क मे हो जाती है और उससे प्रेम करने लगती है। वह उसकी सब प्रकार से मदद करती है, क्योंकि उसने उससे पहले प्रेम स्थापित किया है।

पूर्ण शान्ति की प्राप्ति

ईश्वर से मैत्री रखना ही शान्ति है। हमारा सम्पर्क ईश्वर से हो तो शान्ति की बाढ आ जाती है, क्योकि ईश्वर से सम्पर्क रखना ही शान्ति है। इस सत्य के भीतर एक गहरा अर्थ छिपा हुआ है कि "मन का आध्यात्मिक होना ही जीवन और शान्ति है।" अपने को ईश्वर का अश मानने और इसी विचार मे निमग्न रहने से मन आध्यात्मिक हो जाता है और शक्ति प्राप्त करता है। हमारे इर्द-गिर्द हजारो स्त्रियॉ और पुरुष रहते हैं जो चिन्ताओ और विषयो से ऊब कर शान्ति के लिए इधर-उधर भटकते रहते हैं। उनके शरीर, उनकी आत्मायें और उनके मन सब परेशान रहते है। वे शान्ति की खोज मे दूसरे देशो को जाते है और ससार भर की यात्रा करते हैं किन्तु उनको शान्ति नही मिलती। वास्तव में इस प्रकार से न उनको शान्ति मिली है और न मिलेगी; क्योकि वे शान्ति की खोज वहॉ कर रहे हैं जहॉ शान्ति है ही नही। वे शान्ति की खोज बाहर करते हैं जब कि उसकी खोज उनको अपने भीतर करनी चाहिये। शान्ति वास्तव मे मनुष्य के भीतर रहती है। यदि किसी को अपने भीतर शान्ति नही मिलती तो बाहर कभी नहीं मिल सकती।

शान्ति बाहरी ससार मे नही रहती। उसकी स्थिति मनुष्य के हृदय मे है। हम शान्ति की खोज मे ऐसी बढिया सडकों पर भले ही घूमे, जिनके दोनो ओर सुन्दर-सुन्दर वृक्ष लगे हो, हम खूब बढ़िया भोजन भले ही करें, विषयो का अधिक से अधिक सेवन करें,

हम बाहरी द्वार भले ही खटखटायें, हम उसे ढूँढ़ते हुए इधर-उधर दौड़ा करें किन्तु वह हमे मिलेगी ही नही; क्योकि हम उसे ऐसे स्थानो मे ढूँढ़ रहे हैं जहाँ वह है ही नहीं। अन्तरात्मा की आज्ञा से जिस कम परिमाण में हम भोजन करेंगे या विषयो का सेवन करेंगे उतनी ही शान्ति और आनन्द हमे मिलेगा। किन्तु यदि हम इसके विरुद्ध करेंगे तो हमे बीमारी और दुःख का सामना करना पड़ेगा और हमे अपने जीवन से असन्तोष होगा।

ईश्वर मे मिलकर रहना ही तो शान्ति है। जिस प्रकार बच्चा अपनी सिधाई के कारण पिता का प्रेम-भाजन होता है उसी प्रकार बच्चे की तरह, सीधे रहकर हम भी ईश्वर के प्रेम-भाजन बन सकते है। मै ऐसे लोगो को जानता हूँ जिन्होंने समझ लिया है कि हम और ईश्वर एक ही हैं और इसीलिये वे हमेशा मारे हर्ष के फूले नहीं समाते। एक नवजवान कई वर्ष से बीमार था। नाड़ी-मण्डल की कमजोरी के कारण उसका स्वास्थ्य बिल्कुल खराब हो गया था। उसने सोच लिया था कि इस जीवन से मर जाना अच्छा है। संसार मे चारो ओर उसे निराशा ही निराशा दिखलाई पड़ती थी। कुछ वर्ष हुए, उसने अपने को और ईश्वर को एक ही तत्व समझना शुरू किया और उसने अपने को ईश्वर की मरजी पर सर्वथा छोड़ दिया। इससे आजकल वह बिल्कुल स्वस्थ है और जब मेरी उससे कभी भेंट होती है तो वह चिल्ला उठता है कि अरे, यह जीवन तो बड़ा ही सुखमय है।

हमारी पुलिस सेना मे मेरा परिचित एक अफसर है। उसने मुझसे कई बार कहा कि अपने काम से छुट्टी पाकर सायंकाल जब मै घर जाता हूँ तो इतनी तेजी के साथ ईश्वर से समता की तीव्र कल्पना होती है कि

मै ईश्वरीय तत्व से भर जाता हूँ और मारे प्रसन्नता के उछलने लगता हूँ ।

जिसको यह ईश्वर मिल जाता है वह निडर हो जाता है, क्योंकि वह समझता है कि ईश्वर मेरा रक्षक है और इसीलिये वह अपने को निर्भय समझता है । उसके लिये ये वाक्य सच उतरते हैं, "जो हथियार तुम्हारे विरुद्ध उठाया जायगा वह कुंठित हो जायगा । तुम्हारे घर के पास कोई आपत्ति नहीं आयेगी । खेत के पत्थरों से भी तुम्हारी मित्रता हो जायगी और खेत के पशु भी तुमसे मिलकर रहेंगे ।"

ऐसी स्त्रियों और पुरुषो का जीवन बडा आकर्षक रहता है । जिस समय हम डर का अनुभव करते है तो डर के घुसने के लिये हम दरवाजा खोल देते हैं । कोई भी जानवर किसी पुरुष को हानि नहीं पहुँचा सकता यदि वह उससे न डरे । डरते ही वह अपने लिये भय मोल लेता है । कुत्ते सदृश कुछ ऐसे जानवर हैं जो भय को पहचान लेते हैं और इसलिये हानि पहुँचाने का साहस करते हैं । जितना अधिक हम अपने को ईश्वर के समान समझेंगे उतने ही अधिक हमको शान्ति मिलेगी और उन घटनाओं का हम पर कोई प्रभाव न पडेगा जो हमको परेशान करती रहती हैं । हम फिर लोगो से भी निराश नही हो सकते, क्योंकि हम उनके भावो को ठीक ठीक समझते हैं । हम सीधे उनके हृदयो मे पहुँच जाते और उनकी भावनाओं को जान लेते हैं ।

एक दिन मेरे एक मित्र के पास एक सज्जन गये, और बहुत ही अधिक शिष्टाचार दिखलाकर उसका हाथ पकडकर बोले, "मुझे आपको देखकर बडी प्रसन्नता हुई है ।" मेरे मित्र ने उनकी भावनाओ को

तुरन्त ताड लिया और आँख से आँख मिलाकर बोले, "नहीं, आप भूल कर रहे है। मुझे देखकर आपको प्रसन्नता नही हुई। आप तो बहुत घबराये हुए है। आपके चेहरे तक से घबराहट टपक रही है।" सज्जन ने उत्तर दिया—"आपको मालूम है कि आजकल शिष्टाचार का युग है, इसलिये कभी कभी तो हमे वह भाव दिखलाना ही पडता है जो वास्तव मे हमारे हृदय मे नहीं रहता।" मेरे मित्र ने उनके चेहरे की ओर एक बार फिर देखा और कहा, "आप फिर भूल कर रहे है। मेरी एक बात याद रखिये, हृदय मे कुछ और आप दिखला रहे है कुछ, ऐसा न करके यदि आप सच सच बात करे तो आपका सदा हित होगा और आत्माभिमान बढ़ेगा।"

जब हमे लोगो की सच्ची पहचान हो जाती है तो हम उनसे निराश होना छोड देते हैं। हम उन्हे योही छोड़ देते है, यद्यपि इससे कुछ हमे निराशा भी होती है। आगे या पीछे उनका पतन अवश्य होता है। इस प्रकार कभी कभी अपने मित्रो से हम अन्यान्य करते है। जब हम ईश्वर का साक्षात्कार कर लेते हैं तो मित्रो या शत्रुओं द्वारा फैलाई हुई झूठी खबरे या उनके बुरे बर्ताव का हम पर कोई प्रभाव नहीं पडता। जब हमको विश्वास हो जाता है कि हम अपने जीवन और काम में धैर्य, सत्य और न्याय को बरत रहे हैं जो कि विश्व मे व्याप्त है और जो सबको मिलाते और सब पर शासन करते रहते है और जिनका विस्तार संसार में कभी न कभी आगे पीछे होता है तो आपत्ति ऐसी वस्तु हमारे सामने आ ही नहीं सकती और यदि आ भी जाय तो भी हम बड़े शान्त रहते हैं।

जिन कारणों से शोक, दुःख और वियोग होता है वे उपस्थित ही

न हो सकेंगे, क्योंकि निर्मल बुद्धि होने से हम सब वस्तुओं को ठीक-ठीक देख सकेंगे और हमारा सम्बन्ध उनसे ठीक रहेगा। मित्र की मृत्यु हो जाने से हमारी आत्मा को दुःख न होगा, क्योंकि आत्मा कभी मरता नही। मृत्यु तो इस पाच भौतिक शरीर की होती है। हम लोग कुछ इसी जन्म मे ईश्वर के अंश नही है, प्रत्युत सदा के लिये उस के अंश हैं। हम ईश्वर की तरह अविनाशी है। मनुष्य जानता है कि पाच भौतिक शरीर के नष्ट हो जाने से आत्मा का नाश नही होता। बहुत ही शान्ति के साथ ठढे दिल से वह आत्मा के अमरत्व का अनुभव करता है और जो कमजोर हैं उनसे वह कह सकता है :—

"प्यारे मित्रों, बुद्धि से काम लो और रोती हुई आँखो के आँसुओं को पोंछ डालो। जिसे तुमने अर्थी पर सुला दिया है, वह एक भी अश्रु का पात्र नहीं है। वह एक साधारण घोंघे की तरह है जिसके अन्दर की मोती निकल गई है। घोंघा कुछ नहीं था, उसे वहीं छोड़ दो; मोती—यह आत्मा सब कुछ है और वह यहाँ पर स्थित है।"

मृत्यु के बारे मे वह समझता है कि आत्मा असीम है, उसकी कभी मृत्यु होती नही और आध्यात्मिक सम्बन्ध शरीरी शरीरी के साथ अथवा शरीरी और अशरीरी के साथ सब के लिये संभव है। जितना अधिक मनुष्य का आध्यात्मिक जीवन होगा उतना ही अधिक उसका अध्यात्मिक सम्पर्क हो सकता है।

जिन चीजों को हम चाहते हैं वे हमारे पास आ जाती हैं। प्राचीन समय के लोग देवदूतों को देखना चाहते थे और देवदूत उन्हें

दिखलाई पड़ते थे। कोई कारण नही कि यदि देवदूत उनको दिखलाई पड़ते थे तो हमें क्यों न दिखाई पड़ें। कोई कारण नहीं कि यदि देवदूत उनके पास रहते थे तो वे हमारे पास क्यों नही रह सकते ? जिन नियमों से विश्व का शासन चल रहा है वे जैसे पहिले थे वैसे ही वे अब भी हैं। यदि देवदूत हमारे पास नही आते तो इसका कारण यह है कि हम उनको बुलाने का ठीक ढंग नहीं जानते। हम उन दरवाजो को बन्द कर देते हैं जिनमें होकर उन्हे आना चाहिये।

ईश्वर की ओर हमारा झुकाव जितना ही अधिक होगा उतनी हीं अधिक शान्ति हमें मिलेगी जिसको साथ लेकर हम जहाँ चाहे जा सकते हैं ? ईश्वर की ओर हमारा जितना अधिक झुकाव होगा उतना ही अधिक लोग हमारी ओर खिंचेंगे और उनको हम शान्ति दे सकेंगे। इस प्रकार हम शान्ति की मूर्ति बन जायँगे और जहाँ जांयगे, चारो ओर शान्ति फैलाते जायँगे। दो एक दिन की बात है, मैंने एक स्त्री को एक आदमी का हाथ पकड़े हुए देखा जिसके चेहरे से ईश्वर की कान्ति टपक रही थी। स्त्री ने उस आदमी से कहा, "आपके देखने से ही मुझे बड़ा आनंद मिलता है। कुछ घंटों से मुझे बड़ी निराशा और चिन्ता हो रही थी किन्तु आपको देखकर सारी चिंताएँ भाग गई।" हमारे चारों ओर कुछ ऐसे पुरुष हैं जो लोगों को बरकत और सुख बाँटते रहते हैं। उनकी उपस्थिति से दुख सुख में, भय साहस में, निराशा आशा मे और निर्बलता सबलता मे परिणत हो जाती है।

जिसे आत्मा का साक्षात्कार हो जाता है और जिसे शान्ति का केन्द्र मिल जाता है वह शान्ति को लिये घूमता रहता है। विश्व भर में शान्ति का केन्द्र ईश्वर है जो सब जगह व्याप्त है और जिससे विश्व

का सम्पूर्ण काम हो रहा है। जिसको शान्ति का यह केन्द्र मिल जाता है वह अपने को और ईश्वर को समान समझता है और वही जीवित प्राणी है, क्योंकि ईश्वर ही जीवन है।

इस प्रकार का बली आध्यात्मिक पुरुष हुआ करता है। उसकी शक्ति का केन्द्र ईश्वर है। उसने अपनी पेटी विश्व को शक्ति देने वाले ईश्वर में बाँध रक्खी है। अतएव उसे चारो ओर से शक्ति मिलती है। ईश्वर मे उसका केन्द्र होने के कारण वह अपनी शक्ति को समझता है, अतएव जो विचार उससे निकलते हैं वे शक्ति से परिपूर्ण रहते हैं। और इस नियम से कि समान का समान खींचता है, वह अपने विचारों द्वारा उन सबके विचारो को अपनी ओर खीचता है जिनके विचारो मे शक्ति होती है। इस प्रकार उसका सम्बन्ध विश्व के शक्तिशाली विचारों के साथ बना रहता है।

"जिसके पास है उसको दिया जायगा।" यह एक प्राकृतिक नियम का बर्ता जाना ही है। उसके दृढ़, स्थिर और शक्तिशाली विचार उस पर चारों ओर से सफलता की वर्षा करते हैं और उसको चारो ओर से सहायता मिलती ही है। जिन चीजो को वह देखता है और जिन चीजों को वह आदर्शवत् रखता है वे उसके शक्तिशाली विचारों से उत्पन्न हुई हैं जो भौतिक पदार्थों का स्वरूप धारण करके उसके सामने उपस्थित हो जाती हैं। अदृश्य शक्तियाँ भीतर ही भीतर अपना काम करती रहती हैं जो आगे या पीछे दृश्यमान हो जाती हैं।

भय और असफलता के विचार ऐसे मनुष्य के पास नहीं फटकते। यदि आते भी हें तो वे उसके मन से शीघ्र बाहर निकल जाते हैं, क्योंकि बाहर के विकारो का प्रभाव उस पर नहीं पड़ता। कुत्सित

विचार उसका कुछ नही कर सकते । उसके मन मे दूसरे ही प्रकार के विचार पैदा होते हैं। अतएव भय, हिचकिचाहट और निराशा के कमजोर करने वाले और असफलता लाने वाले विचार उस पर कोई प्रभाव नहीं डालते । जिसके विचार गिरे हुए होते हैं उसकी शक्ति ही खराब नहीं हो जाती, अथवा उसका शरीर ही कमजोर नहीं हो जाता, अथवा उसके लकवा ही नही मार जाता, प्रत्युत ससार में ऐसे ही ऐसे लोगो के साथ उसका सहवास भी हो जाता है। उसका सहवास जितना खराब होता है उतना ही अधिक वह कमजोर, भयभीत और कुत्सित विचारो का हो जाता है। उसकी शक्ति तो नही बढती, हॉ उसकी कमजोरी अवश्य बढ़ती जाती है। यह सच है कि जैसे उसके विचार होते हैं वे ही विचार वह उन लोगों मे भी फैला देता है जिनके साथ वह रहता है। यदि उनमें कुछ अच्छे गुण भी होंगे तो वे उसके सम्पर्क से नष्ट हो जायँगे। यह तो एक स्वाभाविक नियम ही है जो काम कर रहा है— अर्थात् समान को समान खींचता है। सफलता प्राप्त न होने की आशंका से जो कुछ गुण उसके पास है उसे भी वह जनता के सन्मुख रखने मे संकोच करता है। इसका परिणाम तो केवल यही निकल सकता है कि इस आशंका के लिये उसे बहुत मूल्य चुकाना पडेगा ।

दृढ़ विचार भीतर से भी दृढ़ होते हैं और बाहर से भी लोगों को अपनी ओर खीचते हैं। कमजोर विचार भीतर से भी कमजोर होते हैं और बाहर से भी कमजोर होते हैं। साहस से शक्ति बढ़ती है और भय से कमजोरी बढ़ती है। साहस से सफलता मिलती है और भय से असफलता हाथ लगती है। साहसी स्त्री और पुरुष ही परिस्थितियों को अपने वश मे करते हैं और संसार उनका लोहा मानता है। डरपोक स्त्री

और पुरुष ही जरा-जरा सी परिस्थितियों के बदलने पर नाचते रहते हैं और भय तथा शंकाओं से कमजोर होकर जर्जर हो जाते हैं।

मनुष्य जो कुछ है, उसका बनाने वाला वह स्वयं है। मनुष्य जो कुछ होना चाहता है, उसका निश्चय करना उसके हाथ में है। जो वस्तु इस भौतिक जगत में दिखलाई पड़ती है वह पहिले अदृश्य रूप से विचार जगत मे होती है। विचार-जगत कारण होता है और भौतिक जगत कार्य। कार्य हमेशा कारण के अनुरूप होता है। जैसा मनुष्य विचार-जगत में सोचता है वैसा ही वह भौतिक जगत मे करता है। यदि वह भौतिक जगत में कुछ परिवर्तन चाहता है तो उसे विचार जगत मे परिवर्तन करना होगा। उपरोक्त सिद्धान्त का अनुभव कर लेने से हजारों स्त्री और पुरुष, जो निराश हो रहे हैं, सुखी और सम्पन्न हो सकते हैं। इस सिद्धान्त का अनुभव कर लेने से हजारों स्त्री पुरुषों को, जो इस समय बीमार और दुखी हैं, स्वास्थ्य और सुख मिल सकता है। इस सिद्धान्त का अनुभव कर लेने से हजारों अशान्त और व्याकुल स्त्री-पुरुषों को शान्ति और आनन्द मिल सकता है।

हमारे चारों ओर ऐसे हजारों लोग हैं जो भय से व्याकुल रहते हैं। उनकी आत्मा महान् होने के स्थान में गिरी हुई होती है। उनकी शक्तियाँ नष्ट हो जाती हैं। उन्हे हर स्थान में भय ही भय दिखलाई पड़ता है। कमी का भय, भूख का भय, जनता की सम्पति का भय, मित्रों की सम्पति का भय, आज जो हमारे पास है वह कल कहीं नष्ट न हो जाय इसका भय, बीमारी का भय और मृत्यु का भय आदि नाना प्रकार के भय हमको घेरे रहते हैं। भय लाखों स्त्रियों और पुरुषों का एक स्वभाव सा हो गया है। चारों ओर भय ही भय

दिखलाई पड़ता है। चारों ओर से भय हमारे मत्थे मढ़ सा दिया जाता है। हमारे प्रेम का नाश हो जायगा, हमारा धन नष्ट हो जायगा, हमारी नौकरी चली जायगी, हमारा पद छिन जायगा, ऐसे-ऐसे भयों से अपने को हमेशा परेशान करने से जो हमारे पास है भी उसे हम बड़ी शीघ्रता से खो बैठते हैं।

भय से कोई लाभ तो होता नहीं, उल्टे हमारी भारी हानि हो जाती है। कोई सज्जन कहते हैं, "भाई बात तो ठीक कहते हो कि भय करना बुरा है किन्तु हम करें क्या। भय तो हमारी नस-नस में समाया हुआ है।" 'हम करें क्या', ऐसी बातें कह कर तुम अपनी हीनता प्रकट करते हो और अपने को जानते नहीं हो। अपनी ताकत को पहचानने के पहले तुम्हें अपने को जानना चाहिये। जब तक तुम अपने को नहीं जानोगे तब तक अपनी ताकत को भली भाँति बुद्धिमानी के साथ इस्तेमाल भी नहीं कर सकते। ऐसा मत कहो कि हम अपने को जान नहीं सकते। यदि तुम ऐसा कहोगे तो अपने को कभी न जान सकोगे। यदि तुम ऐसा सोचो कि हम अपने को जान सकते हैं और इसी धारणा के अनुकूल काम करो तो किसी न किसी दिन तुम अपने को अवश्य जान जाओगे। वर्जिल जानता था कि मल्लाह बाजी जीत लेंगे। उसने उनके बारे में कहा था, "मल्लाह दौड़ जीत लेंगे, क्योंकि उनको अपनी जीत का विश्वास है। मन की यह भावना उनके दिलों में उत्साह पैदा करेगी और दौड़ जीतने के लिये उनको शक्ति और साहस देगी।"

इसलिये हमेशा यह सोचो कि 'हम कर सकते हैं'। इसे बीज-स्वरूप मान लो। उसको अपने मन में बो दो, उसको पानी देते जाओ

और उसकी रक्षा करते रहो। समय पाकर वह खूब बड़ा हो जायगा और चारो ओर से उसे ताकत मिलेगी। इस समय आपकी भीतरी आध्यात्मिक शक्ति व्यर्थ बिखरी हुई है, वह एक जगह एकत्रित हो जायगी। बाहर से भी शक्ति मिलेगी। निर्भय, मजबूत और साहसी लोगो से भी सहायता मिलेगी। इस प्रकार ऐसे विचारो को तुम अपनी ओर खीचोगे और उन्ही से सम्बन्ध रक्खोगे। यदि तुम सचाई से डटे रहो और तुममे उत्कंठा रहे तो सब भय तुम्हारे दिल से दूर हो जायगा। कमजोर के स्थान मे तुम सबल हो जाओगे और परिस्थितियों का गुलाम होने की अपेक्षा तुम उनके स्वामी बन जाओगे।

हमे अपने दैनिक जीवन मे अधिक विश्वास की आवश्यकता है। हमे उस शक्ति पर अधिक विश्वास की आवश्यकता है जो सब की भलाई के लिये काम करती है। हमे ईश्वर पर अधिक विश्वास की आवश्यकता है। हम तो ईश्वर के प्रतिबिम्ब रूप हैं। हमको अपने ऊपर अधिक विश्वास करने की आवश्यकता है। हमारी हानि भले ही हो जाय, हमारे ऊपर आपत्तियो के बादल भले ही मँडराते रहे, किन्तु हमारा यह विश्वास है कि "जो महान् शक्ति सारे ब्रह्माण्ड का काम चला रही है" वही हमारी भी रखवाली कर रही है। उससे हमे महान् शक्ति मिलेगी। जिस प्रकार संसार का काम अच्छी तरह मे चल रहा है उसी प्रकार हमारा भी काम अच्छी तरह चलेगा। जिसका मन ईश्वर में लगा हुआ है उसको वह शान्ति के साथ रक्खेगा।

ईश्वर से बढ़कर कोई दृढ और सुरक्षित नही है। हमें अपना सम्बंध ईश्वर से पूर्णरूप से स्थापित कर लेना चाहिए जिससे उसकी आभा हमारे द्वारा बाहर निकलने लगे। इससे हमे अनुभव होगा कि हममें

कितनी बड़ी ताकत आ रही है। इस प्रकार हम ईश्वर के साथ काम करेंगे और वह हमारे साथ काम करेगा। अन्त में हम निष्कर्ष निकालेंगे कि जिनके हृदय में सब के लिये प्रेम और भलाई मौजूद है उनके लिये सब बराबर सहायता पहुँचाते रहते हैं। हमारे सब भय और दुःख, जो पहले हमारे जीवन को दुखी बनाये हुए थे अब श्रद्धा मे परिवर्तित हो जायँगे और यदि श्रद्धा का ठीक-ठीक अर्थ समझा गया तो उसके सामने कोई आपत्ति ठहर नहीं सकेगी।

जड़वादिता से मनुष्य के हृदय में निराशा होती है और वास्तव में उससे निराशा पैदा ही होनी चाहिये। ईश्वरवादिता पर विश्वास जो हममे और सब वस्तुओ मे अपना काम कर रहा है और जिससे मनुष्य मे ईमानदारी आती है, हममे आशा पैदा करता है। आशा से शक्ति मिलती है। जिसका सब कुछ ईश्वर है वह केवल सब तूफानो का ही सफलता पूर्वक सामना नही करता बल्कि वह अपने मे एक शक्ति का अनुभव करता है और तूफान को उसी प्रकार शान्ति से देखता है जैसे वह सुन्दर मौसम को देखता है क्योंकि उसको पहले से ही विश्वास हो जाता है कि यह तूफान मेरा कुछ कर नही सकता। वह जानता है कि तूफान के पीछे ईश्वर का सहायता पहुँचाने वाला हाथ है। वह ईश्वर की इस प्रतिज्ञा को स्मरण रखता है—"ईश्वर पर भरोसा करो, उसकी आज्ञा की प्रतीक्षा करो, और वह तुम्हारी इच्छा हर प्रकार से पूरी करेगा।" जो इस प्रतिज्ञा पर विश्वास करते हैं उनको सब कुछ दिया जायगा। इससे स्पष्ट ईश्वर की ओर से और कौन सी बात हो सकती है।

जितने अधिक विश्वास के साथ हम ईश्वर पर भरोसा करके

अपना काम करेंगे उतनी ही कम चिन्ता हमें उसके फल की रहेगी। इस सिद्धान्त का पूर्णरूप से अनुभव कर लेने से हमें पूर्ण शान्ति मिलेगी। वह शान्ति हमारे वर्तमान जीवन को सुखी करेगी और भविष्य में भी सहायता करती रहेगी। संसार की झंझटों और अशान्तियों के बीच जो इस प्रकार ईश्वर पर चित्त लगाये बैठा है वह कह सकता है :—

'मैं शनैः शनैः कार्य करता हूँ, क्योंकि आतुरता से क्या लाभ? मै अनादि के बीच खड़ा हुआ हूँ। जो मेरा है उसे मैं जान लूंगा।"

'रात्रि मे शयन करूं अथवा दिन में जागूं, जिन मित्रों की खोज में मैं हूँ वे मुझे ढूंढ़ रहे हैं। मेरी नौका को तूफान विचलित नहीं कर सकता है न मेरे भाग्य के ज्वार-भाटे को कोई पलट सकता है।"

"समुद्र अपनी कहानी जानता है। वह ऊँची पहाड़ियों से जो झरने निकलते है उनको अपनी ओर खींचता है। उसी प्रकार अच्छाइयॉं शुद्ध आनन्दमय आत्मा में प्रवेश करती हैं।"

"रात्रि के समय सितारों से आकाश आच्छादित हो जाता है। समुद्र मे ज्वार भाटा आता है। काल, स्थान, समुद्र और पहाड़ कोई भी मुझे अपने स्वरूप से विचलित नहीं कर सकता।"

पूर्ण शक्ति प्राप्त करना

शक्ति ईश्वर से उत्पन्न होती है और जितना ही अधिक हम उससे अपना सम्बन्ध रक्खेंगे उतना ही अधिक हमको शक्ति मिलेगी। ईश्वर के साथ सम्बन्ध रखने से हमे सब चीजें मिल सकती हैं। शक्ति प्राप्त करने का सबसे बडा रहस्य यही है कि हम अपना सम्बन्ध उस ईश्वर के साथ स्थापित करें जिससे संसार के सब काम होते हैं। जितना अधिक सम्बन्ध हम ईश्वर से रक्खेंगे उतना ही अधिक हम ऊपर उठेंगे और हममे असीम शक्ति आवेगी।

शक्ति प्राप्त करने के लिये इधर उधर क्यो मारे-मारे फिरते हो? शक्ति के लिये इस अभ्यास के करने अथवा उस अभ्यास के करने मे अपना समय क्यों नष्ट करते हो? पहाड़ के इधर-उधर के रास्तों और घाटियों में घूमने की अपेक्षा पहाड की चोटी पर क्यों नही चढ़ जाते? सब धर्मशास्त्रो मे बतलाया गया है कि अमुक पुरुष बडा शक्तिशाली है। कौन शक्तिशाली है? जडवादी नहीं, किन्तु ईश्वर को सब कुछ मानने वाला। बहुत से पशु मनुष्य से कहीं बडे और मजबूत होते हैं किन्तु उन पर भी वह अपना अधिकार जमा सकता है, शारीरिक शक्ति से नहीं किन्तु मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियों द्वारा जो उसे ईश्वर की ओर से मिली हैं।

जो भौतिक जगत में नही हो सकता वह आध्यात्मिक जगत मे हो सकता है। जो मनुष्य अपने को ईश्वर समझता है और उसी के अनुसार रहता है वह उस मनुष्य से शक्ति मे कहीं आगे है जो अपने

को केवल जडवादी समझता है। ससार के धर्मशास्त्र उन महात्माओ के चरित्रो से भरे हुए हैं जिन्होंने विचित्र विचित्र चमत्कार दिखलाये है। यह जरूरी नहीं है कि ऐसे महात्मा किसी मुख्य समय और मुख्य स्थान मे उत्पन्न हो। चमत्कारो का कोई युग नहीं है कि वे बस अब हो गये और अब न होगे। जो होगया वह अब भी उन्हीं नियमों और शक्तियो द्वारा हो सकता है। इन चमत्कारो को उन लोगो ने करके नहीं दिखाया था जो आजकल के मनुष्यो से बडे थे बल्कि उन लोगो ने दिखलाया था जो थे तो हमारी तरह किन्तु जो अपने और ईश्वर को समान समझते थे और इसीलिये वे ईश्वर के दूत (पैगम्बर) कहलाये। उनके द्वारा ऊँची शक्तियाँ काम कर रही थीं।

तो चमत्कार है क्या? क्या यह कोई अलौकिक वस्तु है? अलौकिक इस अर्थ मे है कि वह साधारण मनुष्य की शक्ति से परे है। बस, चमत्कार का यही अर्थ है। जो मनुष्य अपनी भीतरी शक्तियों को पहचानता है, जो मनुष्य अपने को ईश्वर ही समझता है उसको ईश्वरीय नियम साधारण मनुष्यो से कहीं अधिक सहायता देते हैं। वह इन ईश्वरीय नियमो से काम लेता है। लोग उसके काम मे वह चीज देखते हैं जिसे वे स्वयं नहीं कर सकते। इसी को वे चमत्कार कहते हैं और जो उसे करके दिखलाता है उसे वे अलौकिक पुरुष या महात्मा कहते हैं। यदि वे उन्हीं ईश्वरीय नियमो को समझ लें और उनसे पैदा होने वाली शक्तियों को भी समझ लें तो वे उसी मनुष्य की तरह चमत्कार करके दिखला सकते हैं। जिस प्रकार विकासवाद के सिद्धान्तानुसार हम नीचे से ऊपर को उठते हैं, हम जड़वादिता की ओर से ईश्वरवादिता की ओर

जाते हैं उसी प्रकार बीते हुए समय के चमत्कार आजकल की मामूली और स्वाभाविक वस्तु हो सकते हैं। जिसे आज हम चमत्कार कहते हैं वह आगे चलकर एक मामूली काम हो सकता है। सृष्टि का क्रम इसी प्रकार चलता रहता है। ईश्वरीय दूत ऐसा काम करता है जो अलौकिक दिखलाई पड़ता है। वह ईश्वरीय शक्तियों का साक्षात् करता है इसलिये साधारण मनुष्यों से निराला दिखलाई पड़ता है। किन्तु जो ईश्वरीय शक्ति एक मनुष्य को मिल सकती है वह दूसरे मनुष्य को भी प्राप्त हो सकती है। हरएक के जीवन में वे ही नियम काम करते रहते हैं। हम चाहें तो ताकतवर बन जायें और हम चाहें तो अपने को निकम्मा बनाये रहें। जब मनुष्य समझ लेता है कि अब मुझे उन्नति करनी है तो वह उन्नति करने लगता है और उसमें कोई रोक नहीं होती। हाँ, यदि वह स्वयं अपने में बन्धन रखना चाहे तो रख सकता है। भलाई हमेशा ऊपर उतराती रहती है, क्योंकि भलाई का ऊपर उतराना एक स्वाभाविक गुण है।

'परिस्थिति' के बारे में हम लोग बहुत सुना करते हैं। परिस्थिति मनुष्य पर हावी नहीं हो सकती, मनुष्य को स्वयं परिस्थिति पर हावी रहना चाहिये। प्रायः हमें अनुभव होता है कि जब हम किसी एक स्थान में कार्यवश पड़े रहना चाहते हैं तो वहीं पड़े रहते हैं किन्तु उसी शक्ति द्वारा, जो हमारे पास रहती है, यदि हम चाहें तो उसी पुरानी परिस्थिति में एक नवीन और विचित्र परिस्थिति उत्पन्न कर सकते हैं।

यह बात वंशपरम्परा के प्रभावों के बारे में भी कही जा सकती

है। लोग प्रायः कहा करते हैं कि वंशपरम्परा के प्रभाव क्या दूर किये जा सकते हैं? ऐसे प्रश्न वे ही करते हैं जो अपने को नहीं जानते। यदि हम यही विश्वास किये बैठे रहें कि वंश परम्परा के प्रभाव वैसे ही बने रहेंगे तो जरूर वे वैसे ही बने रहेंगे। जिस समय हमे अपनी मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियों का अनुभव हो जायगा उसी समय हमको अतीव हानि पहुँचाने वाले ये वंशपरम्परा के प्रभाव गायब हो जायँगे।

"ऐसी कोई वस्तु नहीं है जिस पर कि हम विजय न प्राप्त कर सकें। यह मत कहो कि बुरी चित्तवृत्ति जन्म से प्राप्त होती है या कोई जन्म संघाती प्रवृत्ति तुम्हें जीवन पर्यन्त व्यर्थ ही दण्ड दे सकती है।"

"तुम्हारे पूर्वजों के अन्दर महान् और अनादि इच्छा-शक्ति निहित है। वह भी तुम्हारी ही सम्पदा है। वह सुदृढ़, सुन्दर और दैवी है और निस्सन्देह जो प्रयत्न-शील है उन्हें वह सफलता प्रदान करती है।"

"ऐसा कोई उच्च स्तर नहीं है जिस पर तुम न पहुँच सको। भविष्य की तमाम विजय तुम्हारी ही तो है चाहे तुम्हारा कोई दोष क्यों न हो। तुम्हें चेतना शून्य नहीं होना चाहिये और न अपने काम में रुकना चाहिये परन्तु ईश्वर की शरण तुम्हें जाना चाहिये।

"संसार में ऐसी कोई वस्तु नहीं है जिससे कि आत्मा-बाजी न लेजा सके। अपने को उस महान् विश्वात्मा

का एक अंश समझो। तुम्हारी आत्मशक्ति के सामने कोई नहीं ठहर सकता है। तुम्हारी आत्मा का दैवी स्वरूप सर्वोत्तम है।"

कुछ ऐसे लोग भी होते हैं जो हमेशा अपने को दूसरो से हीन समझते हैं। वे दूसरो के सामने हमेशा मुँह लटकाये रहते हैं। यदि तुम्हे मनुष्य बन कर संसार में जीवित रहना है तो अपने को हीन मत समझो। तुम्हारे भीतर जो ईश्वरीय शक्ति है उसका सम्मान करो और वंश परंपरा से चली आती हुई रीति रिवाज और मनुष्यकृत नियमो का कोई प्रभाव अपने ऊपर न पडने दो। उनके कोई वास्तविक सिद्धान्त नहीं होते। जो सिद्धान्त की बातें हैं उन्हें बुद्धिमान् सहृदय स्त्री पुरुष मानेंगे। तुम्हारा व्यक्तित्व तुम्हे असीम शक्ति देता है। पुराने रीति रिवाज और आचार विचार के हाथ मत बिक जाओ, क्योंकि उनको उन लोगो ने चलाया है जिनमें अपने व्यक्तित्व को कायम रखने की शक्ति नहीं, थी, क्योंकि वे समाज का मुँह देखकर काम करते थे। यदि अपने व्यक्तित्व को इस प्रकार बेंच दोगे तो तुम्हारी दशा और भी खराब हो जायगी। तुम धीरे-धीरे गुलाम हो जाओगे और समय आवेगा जब वे लोग भी तुम्हारा सम्मान न करेंगे जिनको प्रसन्न करने का तुम प्रयत्न करते हो।

यदि तुम अपना व्यक्तित्व कायम रखते हो तो अपने मालिक बन जाते हो और यदि तुम दूरदर्शी और बुद्धिमान हो तो तुम्हारी दशा ऐसी अच्छी बन जायगी जिससे तुम्हें बडा लाभ होगा। संसार के लोग तुम्हारा स्मरण करेंगे और तुम्हारा सम्मान करेंगे। किन्तु यदि तुमने

भी वैसा ही किया जैसा सब करते चले आये हैं और वही कमजोरी तुमने भी दिखलाई तो तुम्हारा सम्मान नही होगा। अपना व्यक्तित्व कायम रखने से सभी श्रेणियो के लोग तुम्हारा सम्मान करेंगे। एक धीर पुरुष सब श्रेणियो के लोगो को और समाज के मुखियो को अपनी ओर खीच लेता है और साधारण लोग तो उस पर पूर्ण विश्वास ही करने लगते हैं।

संसार मे सबसे श्रेष्ठ और सबसे अधिक सन्तोषजनक सिद्धान्त यह है कि हम अपने ऊपर विश्वास करें और अपने व्यक्तित्व का सम्मान करें। किसी ने कहा है कि परिस्थितियों के दास बनकर रहना अच्छा नही है। तो अच्छी नीति है क्या ? अच्छी नीति यह है कि सबसे पहले, सबसे अन्त मे और हमेशा अपने ऊपर विश्वास करो।

> *"सबसे उत्तम बात तो यह है कि तुम स्वयं सच्चे रहो। इसका परिणाम यह होगा कि जिस प्रकार रात के बाद दिन का होना निश्चित् है, उसी प्रकार तुम भी किसी के प्रति झूठे न हो सकोगे।"*

जब हम ईश्वर की सहायता लेते रहते हैं और हमारे जीवन का क्रम एक सिद्धान्त द्वारा चलता है तो फिर हमे क्या परवाह कि लोग हमसे अप्रसन्न हो जायेंगे अथवा वे हमारी क्या टीका टिप्पणी करेंगे। विश्वास रक्खो ईश्वर हमारी रक्षा हर समय करेगा। यदि हम दूसरो को प्रसन्न करने की कोशिश करेंगे तो कभी उनको प्रसन्न न कर सकेंगे और जितना अधिक हम प्रयत्न करेंगे उतना ही अधिक विपरीत और दुखदाता वे हो जायेंगे। तुम्हारे जीवन का शासन तुम्हारे और

ईश्वर के बीच की बात है, इसलिये तुम्हारे जीवन पर किसी और स्थान से प्रभाव पडे तो समझ लो कि तुम गलत रास्ते पर जा रहे हो। जब ईश्वर का साम्राज्य हमारे हृदय मे है और हम ईश्वर मे ही लीन हो जाते हैं तो हम स्वयं ईश्वर स्वरूप बन जाते हैं और दूसरो को भी दासता से मुक्त करते हैं।

जब हमे शान्ति का केन्द्र मिल जाता है तो हममे एक विचित्र सरलता आ जाती है जो हमारे व्यक्तित्व को मोहक और प्रभावशाली बनाती है। उस समय अपने को प्रभावशाली बनाने का कार्य समाप्त हो जाता है, क्योंकि प्रभावशाली वे ही अपने को बनाते हैं जो कमजोर हैं और जिनमे अपनी कोई शक्ति नही है। लोगों को प्रभावशाली बनाने का आज कल ऐसा रोग हो गया है जो इस बात का सूचक है कि उनमे अपनी कोई योग्यता नहीं है। इस सम्बन्ध मे मुझे एक ऐसे मनुष्य का स्मरण आ रहा है जो एक पुँछकटे घोडे पर सवार होकर निकलता है। उसके चरित्र मे बहुत सी कमजोरियाँ हैं जिनके कारण लोगो को अपनी ओर करने मे वह अपने को असमर्थ पाता है। तब वह अपने घोडे की दुम आरी से काट देता है और उसी पर बैठ कर निकलता है जिससे उस कटी दुम को देखकर उस ओर लोगो का ध्यान जाय जिसे वह अपने किसी गुण से खींच नही सकता।

किन्तु जो अपना प्रभाव जमाने की कोशिश करता है वह दूसरो को मूर्ख बनाने के स्थान मे स्वयं मूर्ख बन जाता है। बुद्धिमान् और दूरदर्शी स्त्री पुरुष उस मनुष्य को बखूबी पहचान लेते हैं जो उन पर अपना प्रभाव जमाना चाहता है। वे उसके मतलब को

भी ताड़ लेते हैं। "वह पुरुष महान् है जो जैसा स्वभाव से है वैसा ही रहता है और जो दूसरों को अपना स्मरण तक नहीं कराता।"

जिन स्त्री पुरुषों में भीतरी असली शक्ति रहती है वे लोगों को बहुत ही कम काम करते दिखलाई पड़ते हैं किन्तु वास्तव में वे काम करते हैं बहुत। वे ईश्वर की ऊँची विभूतियों के साथ काम करते रहते हैं और इसलिये उनका काम अधिक होता है। उनका काम ऊँचे स्तर पर होता है। वे ईश्वर में इतने निमग्न रहते हैं कि उसकी कृपा से उनका काम अपने आप हो जाता है और वे जिम्मेदारी से बचे रहते हैं। उनको कोई चिन्ता नही होती। वे इसलिए चिन्ता रहित होते हैं कि ईश्वर उनके द्वारा काम करता रहता है और वे ईश्वर को अपना सहयोग बराबर देते रहते हैं।

ऊँचीशक्ति प्राप्त करने का रहस्य यह है कि तुम भीतरी शक्ति को बाहरी काम मे जोरो से लगा दो। क्या तुम एक चित्रकार हो? तो तुम भीतरी शक्ति को चित्रकारी मे जितना अधिक लगाओगे उतने ही बड़े चित्रकार हो जाओगे। जो शक्ति तुम्हारी आत्मा से निकलेगी वही शक्ति पक्की है और उससे बढ़कर शक्ति तुमको कहीं बाहर से नहीं मिल सकती। अपनी आत्मा को ईश्वर मे लगाना चाहिये जहाँ से सब शक्तियाँ मिलती हैं। क्या तुम एक व्याख्याता हो? तो ईश्वर से तुम अपना सम्पर्क जितना अधिक रक्खोगे उतना ही वह तुम्हारे द्वारा भाषण देगा और उतना ही अधिक लोगो पर उसका प्रभाव पड़ेगा और तुम उनके चरित्र को सुधार सकोगे। यदि तुम हाथ-पैर पटक कर केवल ऊपरी भाव से भाषण दोगे तो तुम दुर्जनो के नेता कहलाओगे। यदि तुम सच्चे हृदय से भाषण दो जैसे ईश्वर की आवाज ही तुम्हारे द्वारा

बोल रही है और साथ ही शारीरिक अंगों का प्रयोग भी करो तो तुम बहुत बडे व्याख्यान दाता हो जाओगे। तुम ईश्वरमय होकर जितना बोलोगे उतने ही बडे वक्ता होगे।

यदि तुम गायक हो तो ईश्वरमय हो जाओ और ईश्वर को ही भीतर से गाने दो। बिना ईश्वरमय हुए तुम्हें परिश्रम भी घोर करना पडेगा और वैसा सुन्दर गा भी न सकोगे। परिश्रम भी करो और ईश्वर पर भरोसा भी करो तो इतना मनमोहक गाना तुम गाओगे कि उसका प्रभाव सुनने वालों पर ऐसा पडेगा कि वे वाहवाह की झडी लगा देंगे।

गरमी के दिनों मे जब मेरा खेमा जंगल के बीच लगाया जाता है तो कभी कभी मै दिन निकलने के पहले बड़े तडके जागकर खाट पर बैठ जाता हूँ। पहले बिलकुल सन्नाटा रहता है। फिर यहाँ वहाँ पारी पारी से चिडियो की आवाज सुनाई पडती है और जैसे जैसे प्रभात होता जाता है, चहचहाना बढ़ जाता है। धीरे-धीरे तमाम जंगल एक विशाल स्वर से गाने लगता है। फिर ऐसा मालूम होता है कि सारे वृक्ष, घास के पौधे, झाडियाँ, आकाश और पृथ्वी सब इस स्वर मे अपना स्वर मिला रहे हैं। जैसे जैसे मैं सुनता जाता हूँ तैसे-तैसे मेरे मन मे विचार आता है कि संगीत सीखने का कैसा अच्छा अवसर उपस्थित है। हम इन चिडियों से गाना सीखते तो कैसा अच्छा होता। जिस शक्ति से प्रेरित होकर ये चिडियाँ गा रही हैं उसी शक्ति से प्रेरित होकर यदि हम भी गाते तो हम कितने अच्छे गायक होते और ससार को किस प्रकार हिला देते।

क्या तुम्हें मालूम है किन किन परिस्थितियों मे पड़कर सके (Sankey) महोदय ने अपना ९६ वॉ भजन गाया था? उसके बारे मे एक प्रतिष्ठित समाचार पत्र लिखता है, "डेनवर मे हाल ही मे एक बडी सभा हुई थी। उसमे ६६ वॉ भजन गाने के पहले उन्होंने उसकी जन्म कथा बताई थी। उनकी कविताओ मे से सब से अधिक गौरव इस ६६वॉ भजन ने ही उनको प्रदान किया था। वे कहते हैं—मै ग्लासगो से एडिनबरा को श्री मूडी के साथ रवाना होकर एक किताब वाले की दूकान मे ठहरा। वहॉ से एक पेनी देकर एक धार्मिक पत्र खरीदा और हम लोग फिर गाडी मे बैठ गये। मैं पत्र पढने लगा।" मेरी दृष्टि उस पत्र के कोने में प्रकाशित मेरी कुछ कविताओ पर पडी। श्री मूडी की ओर मुँह करके मैंने कहा—मुझे अपना भजन मिल गया। किन्तु मूडी महोदय काम मे लगे हुए थे अतएव उन्होंने मेरी बात नहीं सुनी। मुझे उन पदो के सरगम निकालने का समय नही मिला इसलिये मैंने उन्हें अपनी गाने की पुस्तक मे चपका लिया।

एक दिन एडिनबरा मे एक बडी सभा हुई। उसमे डाक्टर बोनर का "अच्छा गंडरिया" पर प्रभावशाली भाषण हुआ। व्याख्यान समाप्त हो जाने पर मूडी महोदय ने मुझे गाने के लिये बुलाया। मैंने २३ वें भजन को गाने का विचार किया जिसको मैंने कई बार गाया था। इसके बाद मेरा विचार हुआ कि जो भजन मुझे मिला है उसी को क्यो न गाऊँ। इसके बाद तीसरी बार विचार यह आया कि उसे मै कैसे गा सकता हूँ। उसका सरगम तो मुझे मालूम ही नहीं है। फिर चौथा विचार आया कि चाहे जो हो उसी को गाना चाहिये। मैंने भजन को अपने सामने रख लिया, बाजे पर हाथ रक्खा और गाना आरम्भ

कर दिया। उस समय मुझे यह बिलकुल न मालूम हुआ कि मै गाते-गाते कहाँ पहुँचूँगा। मैने पहला चरण गाया, सब लोग बैठे हुए थे। मैने फिर साँस भरी और दूसरा चरण उसी प्रकार गाया। मैने कोशिश की और सफल हुआ। जब मै अपना ६६ वाँ गाना समाप्त कर चुका तो सभा समाप्त हो गई। लोग कहने लगे कि सके महोदय कहते हैं कि यह उनके जीवन का बहुत ही महत्वपूर्ण समय था। मूडी महोदय नें कहा कि ऐसा गाना मैनें पहले कभी नही सुना। वह गाना हरएक सभा मे गाया गया और अब संसार भर मे उसके गाने का प्रयत्न हो रहा है।'

अन्तर्ज्ञान हो जाने पर हम कभी असफल नही हो सकते। जब हमें अन्तर्ज्ञान नहीं होता तो किसी को भी ऊँची सफलता नहीं मिलती।

क्या तुम एक लेखक हो? तो एक नियम याद रक्खो जिससे तुम्हें लिखने मे सफलता मिल सकती है। वह यह है "अपने हृदय की ओर देखो और फिर लिखो। सचाई और निर्भयता से काम लो। तुम्हारी आत्मा से जो उद्‌गार निकलें उन्ही के अनुसार लिखो।" स्मरण रक्खो, लेखक मे जितना माद्दा है उससे अधिक वह नही लिख सकता। यदि वह अधिक लिखना चाहता है तो उसे उसके उपयुक्त होना भी चाहिये। वह तो अपने विचारों का लेखक है। एक प्रकार से वह अपने ही को पुस्तक मे लिख देता है। जो कुछ वह है उससे अधिक वह लिख नहीं सकता।

यदि लेखक महान् आत्मा है, जिसका उद्देश्य ऊँचा है, जिसकी भावनायें ऊँची हैं और जिसको हमेशा दैवज्ञान होता रहता है तो वह प्रतिभापूर्ण लेख लिख लेता है जिसमे प्रत्येक पाठक को भी वही दैवी

ज्ञान मिलता है जो लेखक को मिला था। जो विचार पंक्तियो के बीच लिखे गये हैं वे पंक्तियां मे लिखे हुए अक्षरो से कही अधिक महत्वपूर्ण हैं। लेखक की आत्मा उसके लेख मे शक्ति भरती है। इसी शक्ति की बदौलत साधारण श्रेणी से उठकर वह ऊँची श्रेणी में आ जाता है और उसको २५ या ३० फीसदी लाभ अधिक मिलता है। उसी शक्ति के कारण उस पुस्तक के कई सस्करण हो जाते हैं और दूसरी ९९ पुस्तको का केवल एक ही सस्करण होता है।

यह वही ईश्वरीय शक्ति है जिसे महान् व्यक्तित्व रखने वाला लेखक अपनी पुस्तक मे भरता है और जिसके कारण पाठक लोग उसे जल्दी खरीदते हैं। पुस्तक के अधिक प्रचार का कारण उसके लेखक का व्यक्तित्व होता है। जब लोग किसी अच्छी पुस्तक को देखते है तो उनकी शिफारिस से भी उस पुस्तक का अधिक प्रचार होता है। यही कारण है कि पुस्तक के महत्व को देखकर एक पाठक उसी पुस्तक की कई प्रतियाँ दूसरों के लिये भी खरीद लेता है। इमरसन ने कहा है, "एक अच्छी कविता संसार के बुद्धिमान् लोगों के पास जाती रहती है जो उसे बडी प्रसन्नता के साथ पढ़कर अपने बुद्धिमान् पडोसी के पास भेज देते हैं। इस प्रकार वह कविता बुद्धिमान् और उदार पुरुषो को अपनी ओर खींचती रहती है और उनकी सहानुभूति से अपना प्रचार स्वय कर लेती है।"

ऐसे महान् व्यक्तित्व वाले लेखक यह नही चाहते कि जो हम लिखते हैं उसकी गणना साहित्य मे हो जाय। वे इसलिए लिखते हैं कि वे लोगो के दिलो तक पहुँच जायें, उनको कुछ वास्तविक तत्व दे,

जिससे उनका जीवन ऊँचा, मधुर और सुन्दर हो- और लोग, ईश्वर की खोज करके अपने जीवन को शक्तिशाली बना सकें। यदि वे, ऐसा कर सके तो उनके लेखों की गणना साहित्य मे अपने आप हो जाती है। यदि वे परिश्रम करते तो कदाचित् उनके लेखो की गणना इतनी कभी न होती।

दूसरी ओर एक ऐसा मनुष्य है जो पुरानी लकीर को छोडना नही चाहता। वह पुराने शास्त्रो के नियमों को आँख बन्द करके मानता है। उसने अपने को ऐसा बाँध रक्खा है कि उसमे विचार करने की मौलिकता ही नही रह गई। आधुनिक बड़े लेखकों मे से एक ने कहा है, "मेरी पुस्तक देवदार के वृक्ष की तरह महकेगी और भौरे आदि कीडों की तरह शब्द करेगी। मेरी खिड़की के ऊपर रहने वाला अबाबील पक्षी उस डोरे या तिनके के द्वारा प्रचार करेगा जिसे वह मेरे जाल में, मुँह मे दाब कर ले आता है।" ऐ बुद्धिमान् मनुष्य, देवदार को प्राप्त करना, महक और कीडों की भनभनाहट सुनना अच्छा है किंतु कुछ बडे और निर्भय लेखकों के ग्रन्थ पढ़ना और उनसे सूत्ररूप में, थोडा-सा साहित्यिक ज्ञान प्राप्त कर लेना अच्छा नहीं है। "उन लोगों से क्या लाभ जो ठीक वही करना चाहते हैं जो पहले हो चुका है और जो यह नहीं समझते कि प्रतिदिन हमें उन चीजो को सीखना चाहिये जो नहीं बताई गई थीं।"

शेक्सपियर पर जब यह दोष लगाया गया कि वह अपने लेखकों का ऋणी था तो लैण्डर महोदय ने उसका उत्तर इस प्रकार दिया था—"ऐसा होते हुए भी शेक्सपियर मौलिक लेखकों का भी मौलिक लेखक था। वह मुर्दादिलों में जान फूँक देता था। इस

प्रकार का मनुष्य संसार के साथ नही चलता; वह तो संसार को अपने साथ चलाता है।"

मै ईश्वर का लेखक होना पसन्द करूँगा क्योकि यह मेरा वास्तविक अधिकार है। किन्तु किसी अलंकार वेत्ता के बँधे हुए नियमों को मानना अथवा किसी समालोचक की राय को स्वीकार करना पसन्द न करूँगा। संसार के लोगो, मै तुम्हे कुछ ऐसी वस्तु देना चाहता हूँ जिससे तुम्हारे दैनिक जीवन के संघर्ष का बोझ कुछ हल्का हो जाय, तुम्हारे जीवन को कुछ मिठास और आशा मिले और तुम्हारा विचारहीन और पशुवत जीवन विचार एवं दया से पूर्ण और नम्र बन जाय। मै चाहता हूँ कि इससे तुम्हारी कमजोर और सिकुडी हुई सुप्त शक्तियॉ फिर जाग्रत हो कर प्रभावशाली बन जायँ, जिसे देखकर तुम्हें स्वयं आश्चर्य हो। संसार के लोगो, मैं तुम्हे कुछ ऐसी वस्तु देना चाहता हूँ जिससे तुम्हे प्रत्येक की दैवी प्रवृत्ति का ज्ञान हो जाय और तुम भी अपनी दैवी प्रकृति का अनुभव करने लगो। ऐसा होने से तुम्हें धन, यश और शक्ति मिलेगी। यदि मै इसमे सफल हुआ तो फिर मुझे इस बात की चिन्ता न रहेगी कि लोग मेरी प्रशंसा करते हैं या बुराई। यदि लोग मेरी बुराई करेंगे तो वह ऐसा ही होगा जैसे किसी देवदार के जंगल मे बसन्त ऋतु की सुन्दर हवा में स्वर्गीय गायन का शब्द गूँज रहा हो और उसके नीचे सडे हुए बॉस के टुकडो को कोई पृथ्वी पर दे मारे।

क्या तुम गिरजा घर का सचिव या किसी प्रकार के धार्मिक उपदेशक हो? यदि हो तो जितना अधिक तुम मनुष्यकृत धार्मिक सिद्धान्तो की अवहेलना करो, जिन्होने मनुष्यो को अभी तक गुलाम

बना रक्खा है और जितना अधिक तुम ईश्वर की और जाओ उतना ही अधिक लोग तुम्हारा सम्मान करेंगे और तुम्हारी बातों को मानेंगे। इस प्रकार जितनी अवहेलना तुम करोगे उतना ही दूसरे पैगम्बरो की परवाह न करके स्वयं पैगम्बर बनने का प्रयत्न करोगे। तुम्हारे लिये उसी प्रकार रास्ता खुला हुआ है जिस प्रकार किसी के लिये भी अभी तक खुला हुआ था।

यदि तुम संसार में अँगरेजी बोलने वाली जाति मे पैदा हुए हो तो सम्भवतः तुम एक ईसाई हो। ईसाई होने का अर्थ यह है कि तुम महात्मा ईसा के उपदेशों के अनुयायी हो। तुमको उन्ही कानूनो के अनुकूल चलना चाहिये जिनको वे मानते थे। तुमको भी उसी प्रकार का जीवन, व्यतीत करना चाहिये जिस प्रकार का जीवन वे व्यतीत करते थे। उनके उपदेशो का तत्व यह था कि मनुष्य अपने परमपिता ईश्वर से मिल कर रहे। वे अपने को और ईश्वर को समान समझते थे और इसका ज्ञान उन्हें पूर्ण रूप से हो गया था, इसीलिये वे महात्मा ईसा कहलाये। इसी कारण उन्हें ईश्वरीय शक्तियां मिलीं। इसी के कारण उन्होने ऐसे वचन कहे जो मनुष्य के मुख से कभी नही निकले।

उन्होने अपने लिये किसी ऐसी चीज का दावा नहीं किया जिसका दावा उन्होने सब के लिये न किया हो। जिन बडे-बडे कामो को उन्होंने किया वे अलोकिक नहीं थे। वे तो उनकी शक्ति के अनुरूप स्वाभाविक रूप में किये गये थे। उन्होने कहा था जो काम मैं कर रहा हूँ वे सब के लिये साध्य हैं और हर युग मे हो सकते हैं। किन्तु उनको करने के लिये एक शक्ति चाहिये जो सब को मिल सकती है। उन्होंने स्वयं कहा है कि सत्य के एक उपदेशक और निर्देशक की हैसियत से

जो कुछ उन्होंने किया उसे उन्होने यह सिद्ध करने के लिये नहीं किया कि केवल उन्ही मे ईश्वरीय शक्ति थी। महात्मा ईसा के जीवन काल और उनकी विभूतियो से मनुष्य जाति के इतिहास का युग प्रारम्भ हुआ। उनके जन्म और उनकी विजयों से मानवी कार्यों का एक विशिष्ट काल शुरू हुआ। उन्होंने ससार को एक नया आदर्श दिया और उनके तीन अन्तरग शिष्यो ने जब उनके करिश्मे देखे तो वे पृथ्वी पर डर कर अवाक् गिर पडे और उनकी प्रशंसा करने लगे।

परमपिता के साथ अपनी समानता का पूर्ण अनुभव करके, प्रतिकूल परिस्थितियों पर अपना अधिकार करके और हमे बता कर कि जो ईश्वरीय नियम हमारे लिये हैं वे ही उनके लिये भी थे, उन्होंने हमारे सामने एक आदर्श रक्खा है। हमे उसका अनुसरण तुरन्त करना चाहिये। उसके बिना हमारा कल्याण नही हो सकता। उन्होने पहले अपनी इन्द्रियों पर विजय प्राप्त किया जिसे लोग उनको देखकर कर सकते हैं। ईश्वर की समता के सिद्धान्त का स्वयं अनुभव करके और फिर दूसरो को बतलाकर महात्मा ईसा सम्भवतः संसार के सबसे बडे उद्धारक हो गये हैं।

ईसा की देह को देखकर उनके जीवन और उनके उपदेश का पता नही चल सकता। यह भूल बडे-बडे महात्माओ के प्रायः सभी चेलो ने की है। यदि आप उन लोगो मे हैं जो निर्जीव ईसा के उपदेशों का प्रचार कर रहे हैं तो मेरा आप से यही जोर देकर कहना है कि ईश्वर के लिये, महात्मा ईसा के लिये ऐसे उपदेशों का प्रचार करके आप जनता के समय को और अपने समय को नष्ट न करें और

उनको रोटी के स्थान मे पत्थर और जीवित सत्य के स्थान मे मुरदा सत्य न दें।

पुरानी बात को भूल जाओ और जीवित ईसा के उपदेशो का प्रचार करो। अपने भीतर ईश्वर का दर्शन करो। इस दर्शन मे जो आनन्द और शक्ति है उसका अनुभव करो। उसकी खोज उसी प्रकार करो जिस प्रकार महात्मा ईसा ने की थी। ऐसा करने पर तुम भी अधिकार के साथ अपनी बात कह सकोगे, और दूसरे भी इस सत्य की खोज मे तुम्हारी सहायता से लाभ उठावेंगे। यही इसका बडा मूल्य है।

आजकल गिरजाघरो से अनास्था हो रही है। कारण यह है कि वहाँ के उपदेशको पर महात्मा ईसा के उपदेशो का असली प्रभाव नहीं पडा है और वे नीरस पुराने धर्म के सिद्धान्तो की उधेड बुन मे लगे रहते हैं। उनका विशेष प्रयत्न यही रहता है कि लोग धर्म के पीछे मरने के लिये तैयार रहे। जर्मनो की एक कहावत है; "दूसरो के पास पहले न जाओ।" हमको ऐसे मनुष्यो की आवश्यकता है जो हमे पहले यह सिखावें कि जीवित किस प्रकार रहना चाहिये। वास्तव में मनुष्य पहिले जीवित रहता है और फिर मरता है। यदि हमे पहले जीवित रहना आ जाय तो हम शान्ति के साथ मरेंगे भी। वास्तव में यही एक तरीका है जिससे जीवन क्रम ठीक-ठीक चल सकता है।

लोग खोखली बातो से ऊब रहे हैं, इसलिये अब गिरजाघर खाली हो रहे हैं। यह देखकर बहुत से मूर्ख कहते हैं कि धर्म अब मर रहा है। अरे धर्म मर रहा है? वास्तव में जो पैदा हुआ है वह कैसे मर सकता है। लोगो के लिये तो धर्म का जन्म अब हो रहा है। वे प्रत्येक दिन

के धर्म की असलियत को अब समझ रहे हैं। नाम मात्र के धर्म की जगह हम अब असली धर्म को ग्रहण करने लगे हैं। अरे, धर्म मर रहा है? ऐसा सोचना ही असम्भव है। धर्म मनुष्य की आत्मा का वैसा ही अग है जैसे आत्मा ईश्वर का अंग है। जब तक ईश्वर और आत्मा जीवित हैं तब तक धर्म मर नही सकता।

ईश्वर को धन्यवाद है कि बहुत से रीति रिवाज और बहुत से धार्मिक सिद्धान्त शीघ्रता के साथ समाप्त हो रहे हैं। वे पहले इतने कभी नहीं समाप्त हुए जैसे अब हो रहे हैं। वे दो तरीकों से समाप्त हो रहे हैं। प्रथम तो बहुत से लोग ऐसे धर्म से घृणा करने लगे हैं और उसके बिना ही रहना चाहते हे। वे उसे उसी प्रकार छोड रहे हैं जिस प्रकार वृक्ष पतझड की ऋतु मे पत्तियाँ छोड देता है। दूसरे, बहुत से ऐसे लोग भी हैं जिनको ईश्वरीय स्फूर्ति भीतर से मिल रही है। वे अपने भीतर ही ईश्वर को पाते हैं जिसमे अद्वितीय सुन्दरता है और जिसमें उनको मुक्ति देने की शक्ति है। यह नया धार्मिक जीवन पुराने धार्मिक जीवन को ढकेल रहा है जिस प्रकार बसन्त ऋतु मे वृक्ष पुरानी पत्तियों को ढकेल कर नई पत्तियाँ धारण करता है। जिस गति से पुरानी पत्ती सदृश पुराना धर्म हट रहा है उसे देखकर बडी प्रसन्नता होती है।

गिरजाघरों मे रोटी के स्थान पर पत्थर, और अन्न के स्थान पर भूसी मिलने के कारण जिन लोगों को गिरजाघरों से अनास्था हो रही है उनका स्थान उन लोगो को ग्रहण कर लेने दो जिन्हे अपने भीतर ही ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त हो रहा है और फिर उन लोगों से पूछो जो चिल्लाते हैं कि क्या वास्तव मे धर्म नष्ट हो रहा है? "जलता हुआ कोयला ही दूसरे कोयलों को प्रज्वलित

करता है, मुरदा कोयला नहीं।" पाखंडी धर्मध्वजियो के स्थान उन लोगों को जरा ग्रहण कर लेने दो जिन्होंने अपने भीतर ही सच्चा ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त कर लिया है, जिनके पास लोगों को एक मूल्यवान् और महत्वपूर्ण ईश्वरीय सन्देश देने की सामग्री है और जो उस सन्देश को इस प्रकार लोगो को देते हैं कि उसे सुनकर वे मन्त्र-मुग्ध हो जाते हैं, तब हम देखेंगे कि वे इधर-उधर बिखरे हुए गिरजे जिनमें आजकल बहुत कम लोग जाते हैं—सच्चे धार्मिक लोगो से खचाखच भर जायँगे और वहाँ बैठने का स्थान भी न मिलेगा। "ऊपर का ढक्कन हट जाने दो जिससे उसके भीतर से मोती निकल जाय।" हमें अब किसी और अन्तर्ज्ञान की जरूरत नहीं है। जो अन्तर्ज्ञान हममें है उसे ही प्रज्वलित करना है। तभी नये-नये लोग आगे आते जायँगे, इसके पहले नहीं।

जान पल्स फोर्ड (Puls ford) कहते हैं, "संसार भर मे लोग अब यह नहीं चाहते कि बाबा आदम के समय से चले आते हुए धर्म पर, हाथ पटक पटक कर, व्याख्यान दिये जायँ। उसमें इनको अब आनन्द नहीं मिलता। वे तो ईश्वर का वह महत्वपूर्ण स्पर्श चाहते हैं जिसका अनुभव करते ही वे मुग्ध हो जायँ और उनको रोमांच हो जाय जैसा उनको पहले कभी न हुआ था। मैं अपने अनुभव से कह सकता हूँ कि यह ईश्वरीय स्पर्श हमारी आत्मा के स्वभाव के उसी प्रकार अनुकूल है जिस प्रकार आकाश के ग्रहों को देखने के लिये जून का महीना। प्रातःकाल की हवा से जिस प्रकार वृक्ष खिल उठते हैं और बढ़ते हैं उसी प्रकार ईश्वर के स्पर्श से प्रत्येक मनुष्य अपनी बुद्धि के अनुसार विकसित होता है। ईश्वर के स्पर्श को

छोड़कर और कोई भी अन्य वस्तु आत्मा के भीतरी केन्द्र को नहीं हिला सकती। ईश्वर के स्पर्श से ही मनुष्य तुरन्त सचेत हो जाता है, उसकी इन्द्रियाँ नये ढंग से काम करने लगती हैं, उसकी भावनायें बदल जाती हैं और उसकी बुद्धि, उसके प्रेम तथा उसकी कल्पना मे नवीनता आ जाती है। जितना अधिक परिवर्तन होता है उसे वह जानता भी नहीं। ईश्वर को अपार शक्ति देते देखकर वह स्वयं आश्चर्य करने लगता है। उसका स्वभाव इतना बदल जाता है कि उसे देखकर वह स्वयं मूक हो जाता है। उसको विश्वास हो जाता है कि भविष्य मे अभी बहुत सी आश्चर्यजनक घटनायें उसके जीवन मे होने वाली हैं। ईश्वर के अस्तित्व और मोक्ष की आशा करने का इससे बढ़कर और दूसरा क्या सबूत हो सकता है जिसकी ओर मै अपने भाइयो का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। जिस समय ईश्वर के स्पर्श से तुम्हारी अन्तरात्मा जाग्रत हो उठेगी जिस समय तुम्हारी सुप्त शक्तियाँ फिर हरी भरी हो जायँगी उस समय तुम स्वर्ग का आनन्द भोगोगे और तुम्हे अपने भीतर ईश्वर का उसी प्रकार स्पष्ट ज्ञान होगा जिस प्रकार तुम्हारी इन्द्रियो को बाहरी संसार का ज्ञान होता है। तुम्हारे जीवन का भीतरी अनुभव और ईश्वर की असीम कृपा तुम्हारे समीप आती जायगी और तुम्हारा यह ईश्वरीय अनुभव बाहरी संसार और प्रकृति के अनुभव से कहीं ठोस होगा।"

विश्व मे शक्ति का एक ही स्रोत है। तुम चित्रकार हो चाहे वक्ता, गायक हो या लेखक, धार्मिक उपदेशक हो अथवा कोई और, स्मरण रक्खो ईश्वरीय शक्ति के साथ मिलकर काम करने मे ही वह शक्ति प्राप्त होती है जो तुम्हारे द्वारा काम करती रहे और तुम्हारे द्वारा बराबर

प्रकाशित होती रहे। यदि तुम इसमें असफल होते हो तो तुम हर बात में असफल होते हो। यदि तुम इसमें असफल होते हो तो तुम्हारा काम तीसरे या चौथे दरजे का होगा। सम्भव है, दूसरे दरजे का भी हो जाय किन्तु पहले दरजे का कभी नहीं हो सकता। स्वामी बनना तो तुम्हारे लिये नितान्त असम्भव होगा।

जितनी शक्ति का अनुभव तुम अपने मे करोगे उतना ही जोरदार तुम्हारा काम होगा। जब तक तुम केवल अपने शरीर और मस्तिष्क से काम लेते रहोगे, तुम्हारी शक्ति सीमित रहेगी और जब तक जीवित रहोगे, बहुत आगे न बढ़ सकोगे किन्तु जब तुम अपने को और ईश्वर को समान समझोगे और तुम्हारा झुकाव ईश्वर की ओर होगा ताकि उसकी शक्ति तुमको मिलती रहे तो एक प्रकार से तुम्हारा जीवन ही बदल जायगा और तुमको वह अपूर्व शक्ति मिलेगी जो दिन पर दिन बढ़ती जायगी। तब तुम अपने मे दस मनुष्यों की शक्ति प्राप्त करोगे क्योंकि तुम्हारा हृदय शुद्ध है।

"हे परमेश्वर, जन्म के संस्कार से ही मै निरन्तर आपके ही साथ हूँ। ईश्वरीय शक्तियाँ इस तथ्य को पृथ्वी की जहां तक सीमा है वहाँ तक घोषित कर रही हैं।"

"मैं इस जन्मजात अमरत्व के अधिकार के विषय में सोचता हूँ तो मेरा व्यक्तित्व गुलाब के फूल की तरह खिल उठता है और यह भावना सुगन्धित धूप

के धुयें की तरह मेरे चारों ओर तथा मेरे ऊपर छाई रहती है।"

"मैं अपने अन्तःस्तल में हर्षोल्लास का दिव्य संगीत सुनता हूँ, और मुझे यह दैवी संगीत स्वर्गीय वाणी से मुखरित हुआ प्रतीत होता है।"

"और अन्तर्हित ईश्वर की शक्ति की तरह एक शक्ति मेरे में भी प्रतीत होती है। वह मुझे भव्य दीवाल की तरह घेरे हुये है और मुझें लघुत्व से महत्व की ओर ले जाती है।"

— — —

सब वस्तुओं की प्रचुरता

उन्नति का सिद्धान्त

संसार की समस्त वस्तुये ईश्वर की ही कृपा से प्राप्त होती हैं। जो इस बात का अनुभव किया करता है कि हम और ईश्वर एक ही हैं वह चुम्बक की तरह ससार भर की उन वस्तुओ को अपनी ओर खींच लेता है जिनकी वह इच्छा करता है।

यदि कोई यह सोचता रहता है कि मै गरीब हूँ तो वह गरीब ही रहता है और सम्भावना यही है कि वह हमेशा गरीब रहे। यदि वह सोचता है कि मै धनी हूँ तो ऐसा वातावरण उत्पन्न हो जाता है कि वह धनी ही हो जाता है। आकर्षण का सिद्धान्त विश्व मे लगातार काम करता रहता है। एक सिद्धान्त तो इस सम्बन्ध का ऐसा हैं जो कभी नही बदलता और वह यह है कि "समान को समान खीचता है।" यदि हम और ईश्वर एक हैं जो कि सब वस्तुओ के प्राप्त करने का स्रोत है तो जितना अधिक हम इस समानता का अनुभव करेंगे उतना ही जल्द वह सब चीजें हम को आपसे आप मिल जायेंगी जिनको हम चाहते हैं। इस प्रकार हमे एक ऐसी शक्ति मिल जाती है जिसके द्वारा हम अपने अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न कर लेते हैं और हम जो चाहे प्राप्त कर सकते हैं।

ससार मे सत्य अब भी स्थिर है। वह खोज करने से प्राप्त होता है। उसी प्रकार सब वस्तुये संसार मे अब भी मौजूद हैं। उनको प्राप्त

करने के लिये केवल शक्ति की आवश्यकता है। ईश्वर सब चीजें अपने हाथ मे लिये हुए खड़ा है। वह निरन्तर कहता है, "मेरे बच्चो, हर प्रकार से मुझमे विश्वास करो तो मै जिन चीजो को लिये खड़ा हूँ वे सब तुम्हे मिल जायँगी।" वह सब को बडी उदारता से देता है और बुरा-भला कार्य नहीं करता। जो लोग उस पर विश्वास करके उससे मॉगते हैं उनको वह बडी उदारता से सब चीजें देता है। वह जबरदस्ती किसी को अच्छी चीजें नही देता।

गरीबी और ईश्वर भक्ति के बारे मे जो पुरानी धारणा चली आ रही है वह बिलकुल गलत है और जितनी जल्द हम उसे भूल जायँ उतना ही अच्छा है। जब शरीर और आत्मा का विचार उत्पन्न हुआ तो वैराग्य का आविर्भाव हुआ। उसी प्रकार देवभक्ति और गरीबी का भी विचार उन लोगो के दिलो मे पैदा हुआ जिनका जीवन विकृत और एकाङ्गी है। सच्ची ईश्वर भक्ति और सच्ची बुद्धि मानी मे कोई अन्तर नही है। जो बुद्धिमान है और अपनी उन शक्तियो का प्रयोग करता है जो उसे ईश्वर से मिली हैं तो उसके सामने विश्व का कोष हाथ जोडे खडा रहता है। जब कि हमारी मॉग उचित और बुद्धिमत्ता-पूर्ण होती हैं तो उसकी पूर्ति अवश्य होती है। जब मनुष्य इन ऊँची बातो को समझ लेता है तो गरीबी की उसको जरा भी चिन्ता नही होती।

क्या तुम नौकरी से निकाल दिये गये हो? यदि तुम यही सोचते रहो कि अब हमे जल्दी नौकरी नही मिलेगी तो सभव है तुम्हे जल्दी नौकरी न मिले और यदि मिले भी तो कम वेतन वाली। याद रक्खो, तुममे वह शक्तियाँ मौजूद हैं जिनको यदि तुम जानलो, तो परिस्थितियों पर

तुम्हारा अधिकार हो जायँ और जो आपत्तियाँ तुम्हे दिखलाई पड रही हैं वे थोडे ही दिनों के लिये क्यों न हों, उनपर भी तुम विजय प्राप्त करलो। यदि तुम इन शक्तियों से काम लो तो तुम मे वह चुम्बक की शक्ति आ जायगी जो अनुकूल वायुमण्डल को अपनी ओर खींचेगी और तुम ईश्वर को धन्यवाद देने लगोगे कि जिस वायुमण्डल में हम पहले थे उससे इस समय का वायुमण्डल कही अच्छा है।

जो ईश्वर विश्व को उत्पन्न करता है और उस पर शासन करता है तथा जो ईश्वर सारे ब्रह्माण्डों का स्वामी है वही तुम में है और तुम्हारे द्वारा काम कर रहा है। इसे तुम अच्छी तरह समझो। विचारो में बडी शक्ति छिपी हुई है जिसका कोई अनुमान नहीं कर सकता किन्तु उनका प्रयोग बुद्धिमानी से करना चाहिये। यदि तुम विचार करो कि हमारी परिस्थितियाँ ठीक हो और हम उचित ढंग से सब काम ठीक समय पर करें तो तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी। शर्त यह है कि तुम उस विचार को कमजोर न होने दो और उसे आशा के जल से सींचते जाओ। इस प्रकार तुम अपना विज्ञापन मनोविज्ञान और अध्यात्म के समाचारपत्र में करते हो जिसका प्रचार सीमित न होकर विश्व के कोने में होने लगता है। यह ऐसा विज्ञापन है जिसकी आयोजना ठीक ठीक की गई तो वह उस विज्ञापन से कहीं अधिक मूल्यवान होगा जिसे तुम आज कल के समाचार पत्रों में प्रकाशित करवाते हो और जिसे तुम प्रचार का एक बड़ा साधन समझते हो। जितना अधिक तुम ईश्वरीय सिद्धान्तों और ईश्वरीय शक्तियों का अनुभव करोगे उतना ही अधिक तुम्हारा आध्यात्मिक विज्ञापन जोर पकडता जायगा।

यदि तुम समाचार पत्रो के "चाहिये" स्तम्भों को देखना चाहते हो तो साधारण रीति से उनको न देखो। अपनी ऊँची आध्यात्मिक शक्तियों से काम लो और उसे ऊँची निगाह से देखो। हाथ मे समाचार पत्र लेकर सोचो—क्या यह विज्ञापन ऐसा है कि मुझे उसके लिये प्रार्थना-पत्र भेजना चाहिये और फिर उसे पढ़ो तो एकदम तुम्हे बात समझ मे आ जायगी। उस पर विश्वास करो। उससे डिगो नहीं। यदि ऐसा करोगे तो विज्ञापन पढ़ते ही तुमको भीतर मे आदेश मिलेगा। यह आदेश आत्मा का होगा जो भीतर से तुमसे बातचीत कर रही है। वह जब जैसा कहे, उसी के अनुसार काम करो।

यदि तुम्हे ऐसी परिस्थिति का सामना करना पडे जो तुम्हारे अनुकूल नहीं है और तुम उससे उत्तम परिस्थिति चाहते हो तो जब तुम उसका सामना करने लगो तो ऐसा सोचो कि क्या यह परिस्थिति मेरी उन्नति का मार्ग है जिसमे से होकर मुझे उत्तम अवस्था प्राप्त करनी है। इस विचार पर विश्वास करो, उस पर डटे रहो और जिस परिस्थि त पर हो उसका बहादुरी और सचाई के साथ सामना करो। यदि तुम सचाई के साथ उसका सामना नहीं करते हो तो उससे तुम्हारी उन्नति न होगी और उत्तम परिस्थिति में जाने की अपेक्षा तुम और अधिक खराब परिस्थिति मे पड़ जाओगे। और यदि तुम सचाई से उसका सामना करते हो तो उसमे से निकल कर तुम एक उससे अच्छी परिस्थिति मे पहुँच जाओगे—जिससे तुमको बड़ी प्रसन्नता होगी और तुम ईश्वर के आभारी होगे।

उन्नति का यही सिद्धान्त है। जब आपत्ति सामने आ जाय तो घबराओ नही, उसका बहादुरी से सामना करो और उससे अच्छी

परिस्थिति प्राप्त करने की कोशिश करो। यदि ऐसा विचार करोगे तो तुम्हारी प्रबल और सुप्त शक्तियाँ जाग्रत हो उठेंगी और वे उन वस्तुओं को तुम्हारे सामने उपस्थित कर देंगी जिनकी अभी तक केवल कल्पना ही कल्पना है। कल्पनाओं में शक्तियाँ निहित रहती हैं। यदि कल्पनाओं के बीजो को अच्छी तरह बोया जाय और उनको भलीभाँति सींचा जाय तो फिर उनमें सफलता रूपी बड़ा वृक्ष उत्पन्न होता है।

किसी बात की शिकायत न करो। अपने समय को ऐसी बातों में लगाओ जिनसे तुम्हारी वर्तमान परिस्थिति में सुधार हो। ऐसे-ऐसे उपाय सोचो जिनके द्वारा तुमको सफलता मिले। अपने को सफल बनाओ। विश्वास करो कि शीघ्र ही तुम्हें सफलता मिलेगी। सफलता पर पूरा पूरा विश्वास करो। उसको आशा से बराबर सींचते रहो। इस प्रकार तुम अपने को चुम्बक पत्थर बना लोगे जो उन चीजों को अपनी ओर खींचेगा जिनको तुम चाहते हो। अपने विश्वास को दृढ़ रक्खो। ऐसा करके तुम ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर दोगे जिससे तुमको उसका अच्छा फल मिलने लगेगा। इस प्रकार तुम विश्व की दृढ़ से दृढ़ शक्तियों से लाभ उठा लोगे। यदि तुम ऐसी वस्तु प्राप्त करना चाहते हो जिससे तुम्हारा हित होता हो, जिससे तुम्हारे जीवन का दृष्टिकोण विस्तृत होता हो, और जिससे दूसरों को अधिक लाभ पहुँचने की संभावना हो तो इस विचार को दृढ़ता से पकड़े रहो ताकि समय आने पर, ठीक ढंग से ठीक साधनों द्वारा ऐसा मार्ग तुमको मिल जाय जिससे तुमको मनवाञ्छित पदार्थ मिल सके।

मैं एक नवलवान स्त्री को जानता हूँ जिसको कुछ समय हुआ कुछ रुपयों की बड़ी आवश्यकता थी। वह उस रकम को एक अच्छे काम

मे लगाना चाहती थी। उसने सोचा कि कोई कारण नहीं कि इस शुभ काम के लिये मुझे रुपया न मिले। उसे अपनी भीतरी शक्तियों का पूर्ण विश्वास था। उसने यही रुख पकडा कि मुझे रुपया अवश्य मिलेगा। प्रातःकाल वह ध्यान लगाकर कुछ समय के लिये चुपचाप बैठ गई। इस प्रकार उसने ऊँची आध्यात्मिक शक्तियो से अपना तार मिलाया। दिन डूबते डूबते एक सज्जन उससे मिले जिसके घराने से वह परिचित थी। उन्होंने उससे पूछा कि हम लोग कुछ काम कराना चाहते हैं, क्या तुम करोगी? उसको यह सुनकर आश्चर्य हुआ कि ये लोग एक खास तरह का काम मुझसे क्यों कराना चाहते हैं। उसने सोचा, "यह ईश्वर की ओर से मॉग आई है, इसे स्वीकार करके इसके परिणाम को देखना चाहिये।" उसने काम स्वीकार कर लिया और उसे मन लगाकर किया। जब वह काम समाप्त कर चुकी तो उसे इतना अधिक रुपया मिला जिसकी वह आशा नहीं करती थी। उसने सोचा कि जितना काम मैंने किया है उससे अधिक मुझे रुपया मिला है। उसने कहा, इतना रुपया मैं न लूँगी। उन्होंने कहा कि तुमने इतना अधिक काम किया है जिसके सामने यह रुपया कुछ भी नहीं है। इस प्रकार जिस अच्छे काम के लिये वह धन चाहती थी उसके लिये उसको जरूरत से ज्यादा धन मिल गया।

ईश्वरीय शक्तियों से सफलता पूर्वक काम लेने के बहुत से उदाहरणों में से यहॉ पर मैंने केवल एक का ही उल्लेख किया है। इस उदाहरण से एक शिक्षा भी मिलती है—हाथ जोड कर इस बात की आशा न करो कि चीज आप से आप तुम्हारी गोद मे आकर गिर पड़ेगी किन्तु उसके लिये तुम्हें अपनी ईश्वरीय शक्तियों से काम लेना होगा

तब वह चीज तुम्हें अवश्य मिलेगी। जो काम सामने आवे उसे मन लगाकर करो। यदि इससे तुमको सन्तोष न हो तो ईश्वरीय शक्ति का आह्वाहन करो। इससे तुम्हारा मार्ग पहले से भी अधिक सुखद होगा। संसार की अच्छी से अच्छी वस्तुओं के प्राप्त करने का सुलभ उपाय यह है कि पहले मन में उनकी कल्पना करो। यही कल्पनायें बाद मे असली वस्तुयें हो जाती हैं। यदि तुम सचाई के साथ महल मे रहने की कल्पना करो तो तुम्हें रहने के लिये महल मिलेगा। ऐसी इच्छा करने का यह मतलब नही कि तुम दूसरे की शिकायत करके अपनी इच्छा की पूर्ति करो। इस प्रकार की इच्छा तभी पूर्ण होगी जब तुम संसार मे अहङ्कार छोडकर शान्ति के साथ नम्र होकर रहो और एक टीन की रकाबी मे यह सोचकर भोजन करो कि आगे चलकर संभव है चाँदी की रकाबी में भोजन करने को मिले। तुम उन लोगों से न तो ईर्ष्या करो और न टर्राओ जो चाँदी की थाली मे भोजन करते हैं। टर्राने से बैंक रूपी तुम्हारे मस्तिष्क से धन रूपी शक्तियो का क्षय होगा।

एक मेरा मित्र है जो भीतरी शक्तियों से भलीभांति परिचित है और उनसे अपने जीवन के हर पहलू में काम लेता है। उसका सुझाव इस विषय में इस प्रकार है—यदि तुम भालू की गोद मे लेटे हुए हो और वह तुम्हारा आलिङ्गन कर रहा है तो उसके मुँह की ओर देखो और हँसो तथा हर समय उसी की ओर निहारते रहो। यदि तुम अपना सारा ध्यान भालू की ही ओर लगाये रहो तो संभव है, भालू तुम्हें छोडकर चला जाय। उसी प्रकार यदि तुमने आपत्ति के सामने सिर झुका दिया तो आपत्ति तुमको खा जायगी किन्तु यदि भीतरी शक्तियों के सहारे तुम उससे लोहा लेते रहे तो आपत्ति तुम्हारे सामने सिर

झुकावेगी और उसके स्थान मे तुमको सम्पत्ति मिलेगी। जब तुम्हारे सामने आपत्ति आवे तो बहुत ही शान्ति के साथ उसको पहिचान लो और बजाय डरने, रोने और चिल्लाने के उसी समय अपनी भीतरी शक्तियों से काम लो तो वह भाग जायगी।

सच्ची सफलता का पूर्ण रहस्य विश्वास है। जब हमे विश्वास हो जाता है कि सफलता और असफलता मनुष्य पर ही निर्भर है, बाहरी परिस्थितियों पर निर्भर नहीं है, तो हम में वे शक्तियाँ आ जायँगी जो बाहरी परिस्थितियो को बदल देंगी और हमे सफलता प्रदान करेंगी। जब हमे इन ईश्वरीय शक्तियों का अनुभव होता है और हम ईश्वरीय सिद्धान्तो के अनुकूल चलते हैं तो हम भीतरी जाग्रत शक्तियो को काम में लगा देते हैं और सफलता हमारे पास ही हाथ जोडे खडी हो जाती है। हम अपना एक ऐसा केन्द्र तैयार कर लेते हैं जिससे इधर-उधर मारे-मारे फिरते रहने की अपेक्षा हम घर ही मे बैठे-बैठे अपने अनुकूल परिस्थितियाँ तैयार कर सकते हैं। यदि हम इस केन्द्र को खूब मजबूत बना लें और उसी पर डटे रहें तो चीजें आप से आप हमारे पास लगातार आती रहेगी।

आज कल बहुत से लोग ऐसी चीजो के प्राप्त करने की कोशिश करते हैं जो उनको आपसे आप मिल सकती हैं और उन्ही कोशिशों का अपने दैनिक जीवन मे उपयोग करते हैं। जिस सत्य की चर्चा हम यहाँ कर रहे हैं उसके भीतर निहित सिद्धान्तो पर हम जितना विचार करते हैं उतना ही हमें विश्वास हो जाता है कि हम उनको व्यवहार मे ला सकते हैं और वास्तव मे यदि कोई व्यवहार मे लाने योग्य वस्तु है तो ये ही सिद्धान्त हैं।

कुछ ऐसे लोग हैं जिन्हें इस बात का घमण्ड है कि हम लोग बड़े व्यावहारिक हैं। किन्तु जो अपने को व्यावहारिक नहीं समझते वे संसार की जानकारी मे सबसे बड़े व्यावहारिक होते हैं और जो अपने को लगाते हैं वे व्यावहारिक बहुत कम होते हैं। कुछ बातों में ये अभिमान करने वाले व्यावहारिक हो सकते हैं किन्तु जहाँ तक सम्पूर्ण जीवन की सफलता का सम्बन्ध है, वे अपने को पूर्ण अव्यावहारिक सिद्ध करते हैं।

यदि किसी मनुष्य को संसार का राज्य मिल जाय किन्तु यदि उसे अपनी आत्मा का ज्ञान न हो तो इतने बड़े राज्य से उसको क्या लाभ? हमारे चारों ओर हजारों ऐसे मनुष्य हैं जिन्हें वास्तव में जीना नहीं आता, उन्होंने सच्चे जीवन की बारहखडी भी नहीं सीखी है। वे वास्तव मे अपने संचित किये हुए चंचल द्रव्य के दास रहते हैं। वे सोचते हैं कि हमारा अधिकार द्रव्य पर है किन्तु द्रव्य उनपर अधिकार जमाये रहता है। उनमें अपने पडोसियों की और संसार के लोगों की सेवा करने का कोई भाव नहीं रहता। वे जब मरते हैं तो गरीब हो कर फिर जन्म लेते हैं। मरते समय एक कौडी भी वे अपने साथ नही ले जा सकते। इसलिये दूसरे जन्म में वे दरिद्र और नंगे रहते हैं।

अच्छे अच्छे काम करना, चरित्र बल को बढ़ाना, आत्मा की शक्ति का अनुभव करना और भीतरी शक्तियों की खूबियों को पहचानना ये सब चीजें सशक्त जीवन के लक्षण हैं। ये सब भगवान् की कृपा से हमको मिलते हैं किन्तु इन धनिकों को दूसरे जन्म मे ये चीजें नहीं मिलतीं। उनकी दशा इससे भी खराब होती है। जो आदतें इस जीवन मे पड़ जाती हैं वे दूसरे जीवन में साधारणतया नहीं बदलतीं।

यदि इस जन्म मे किसी को कोई झक होती है तो वही झक दूसरे जन्म मे भी होती है। यह नहीं समझना चाहिये कि मरने पर हमारी परिस्थिति अच्छी हो जाती है। ईश्वरीय नियम जैसा बरता जायगा वैसा ही उसका फल होगा, जैसा हम बोवेंगे वैसा ही काटेंगे, केवल इसी जीवन मे नहीं प्रत्युत इसके बाद भी।

जो इस जन्म मे धन का दास है वह दूसरे जन्म में भी उसी का दास रहेगा किन्तु दूसरे जन्म में अपनी इच्छा पूर्ण करने के लिये उसके पास धन न होगा। धन मे आसक्ति होने के कारण वह अपना प्रेम कुछ समय तक दूसरी चीजो मे न लगा सकेगा और द्रव्य के अभाव के कारण उसकी इच्छा उसको बराबर परेशान करती रहेगी। सभव है, वह जब देखे कि मेरी सन्तान बुरी तरह से मेरे धन का दुरुपयोग कर रही है तो उसकी परेशानी बढ़ जाय। वह अपनी सम्पत्ति अपने लड़कों के नाम लिख देता है किन्तु यह तो लिखता नहीं कि इसका उपयोग किस प्रकार करना चाहिये।

इसलिये यदि हम सोचें कि धन हमारा है तो यह हमारी कितनी मूर्खता है। यदि सैकड़ों एकड़ भूमि के चारों ओर दीवाल उठवा कर कहें कि यह ज़मीन मेरी है तो यह उसकी कितनी मूर्खता है क्योंकि भूमि तो वास्तव मे ईश्वर की है। हम जिस वस्तु को रख ही नहीं सकते वह हमारी कैसे हो सकती है ? जो चीजें हमे मिलती हैं उन पर अधिकार तो किया ही नहीं जा सकता, गाड़ने की बात बहुत दूर रही। वे हमें इसलिए मिलती हैं कि हम उनका उचित प्रयोग बुद्धिमानी के साथ करें। हम तो केवल कारिन्दे हैं और कारिन्दे की हैसियत से हमे जवाब देना होगा कि जो

हमको दिया गया है उसका उपयोग हमने किस प्रकार कियाहै । 'जैसा हम बोते हैं वैसा ही काटते हैं' । इस कहावत के अनुसार हमें भोगना पडेगा ।

जिसको अन्तर्ज्ञान हो गया उसे अधिक द्रव्य संचित करने की आकांक्षा नही होती और न उसे जरूरत से अधिक किसी वस्तु के रखने की इच्छा ही होती है । जब वह अपने भीतरी धन का अनुभव कर लेता है तो बाहरी धन उसके लिये बहुत जरूरी नहीं रह जाता । जब उसे मालूम हो जाता है कि मेरे भीतर इतनी शक्ति है कि मै जब चाहूँ, उसकी सहायता से अपनी मनोवांछित वस्तु प्राप्त कर सकता हूँ तो वह अपार धन संचित नही करना चाहता जिसके पैदा करने मे अपने जीवन का बडा अमूल्य समय नष्ट करना पडता है और बडी चिन्ता करनी पडती है । दूसरे शब्दो मे वह पहले बादशाहत प्राप्त करने की कोशिश करता है, अन्य वस्तुयें तो उसे फिर पर्य्याप्त संख्या मे अपने आप मिल जाती है ।

महात्मा ईसा ने कहा है कि "धनी पुरुष का स्वर्ग जाना उसी प्रकार दुर्लभ है जिस प्रकार सुई के छेद से ऊँट का निकलना ।" जिसके पास कुछ नहीं है उसके पास सब कुछ है । यदि मनुष्य आवश्यकता से अधिक अपना सब समय धन संग्रह करने और उसे गाडने ही में लगा दे तो उसे वह बादशाहत प्राप्त करने का समय कहाँ मिलेगा जिसके प्राप्त हो जाने पर उसे सब पदार्थ अपने आप मिल जाते हैं ।

लाखो रुपये पैदा करना, और उसके रक्षा की हमेशा चिन्ता करना अच्छा है अथवा ऐसे सिद्धान्तो और शक्तियों की जानकारी प्राप्त करना अच्छा है जिनके द्वारा समय समय पर हमें सब वस्तुयें, जितनी हम चाहे, मिलती रहें ?

जो इस ईश्वरीय साम्राज्य मे प्रवेश करता है उसे धन संग्रह करने का वह पागलपन नहीं होता जो आजकल संसार के अधिकतर लोगो पर सवार रहता है। वह धन से उसी तरह घृणा करता है जैसे वह किसी शरीर की घृणित बीमारी से। जब हमे ईश्वरीय शक्ति प्राप्त हो जाती है तो हम अपने वास्तविक जीवन की ओर अधिक ध्यान देते है। हम फिर अपार धन संग्रह की ओर ध्यान नही देते जो हमारी सहायता करने की अपेक्षा हमारे रास्ते मे रोडा अटकाता है। बीच का मार्ग ही सब से उत्तम होता है जिससे जीवन की सारी समस्यायें हल होती हैं।

धन की एक सीमा होती है जिसके बाहर उसकी आवश्यकता नही होती। जब उसकी आवश्यतका नही होती तो वह सहायता देने के बदले दुख देने लगता है और वरदान के स्थान मे अभिशाप बन जाता है। हमारे चारों ओर ऐसे मनुष्य दिखलाई पडते हैं जिनका विकास संकुचित हो जाता है। यदि वे जीवन के उस भाग का उपयोग बुद्धिमानी के साथ करते जिसे उन्होंने अपार धन सग्रह करने मे नष्ट कर दिया है तो उनका जीवन सम्पन्न, सुन्दर और सदा सुखमय रहता।

मनुष्य यदि जीवन भर कमाये और 'शुभ कामों' के लिये भी अपना द्रव्य छोड जाय तब भी उसका जीवन आदर्श जीवन नही कहा जा सकता। यह तो एक बहाना हुआ। जिसको ठीक जूते की जरूरत है उसे ऐसे जूते देने से क्या लाभ जो हमारे लिये बेकार हो गये हो। जो मनुष्य ईमानदार है और ईमानदारी से अपनी गृहस्थी का पालन कर रहा है; उसके पॉव यदि जाडे के दिनो मे ठिठुर रहे हो तो उसे जूते देना प्रशंसनीय है। जूते देने के साथ ही यदि मै अपने को

भी उस पर न्योछावर कर रहा हूँ तो उसे दूना उपहार मिलेगा और मुझ पर दूनी ईश्वरीय कृपा होगी।

जिनके पास धन है उससे उनको अपना जीवन और चरित्र, जब तक जीवित रहें, बनाना चाहिये। इससे बढ़ कर धन का और कोई उपयोग हो ही नहीं सकता। इस प्रकार उनका जीवन सम्पन्न और विशाल होगा। समय आने वाला है जब अपार सम्पत्ति छोड कर मरना मनुष्य के लिये अपमान जनक माना जायगा।

बहुत से लोगों के जीवन, जो राजप्रसाद मे रहते हैं, उन गरीबों से कहीं तुच्छ हैं जिनके पास रहने को एक झोपडी भी नहीं है। मनुष्य के पास राजप्रसाद भले ही हो और उसमें वह भले ही रहे किन्तु राजप्रसाद भी उसके लिये एक दरिद्रालय ही है।

जो चीज गडी हुई है और जिससे कोई लाभ नहीं पहुँच रहा है उसे नष्ट करके प्रकृति उसे दूसरी नवीन चीज बना देती है जिसका उपयोग किया ही नहीं जा सकता। प्रकृति के दो विधान है—(१) कीडे और (२) मोर्चा। इन्हीं को ईश्वर के भी दो विधान कह सकते हैं। एक ईश्वरीय सिद्धान्त और भी काम कर रहा है। वह यह है कि जो धन को गाडना है उसकी ईश्वरीय शक्तियाँ और उसका सारा सुख कुण्ठित हो जाता है।

पुराने दकियानूसी विचारों मे लगे रहने के कारण बहुत से लोग सुख से वंचित रहते हैं। यदि वे दकियानूसी विचार छोड़ दें तो उनके स्थान मे उनमे नये विचार पैदा होंगे। धन को गाडने मे किसी न किसी प्रकार की हानि अवश्य होती है और उसको बुद्धिमानी के साथ खर्च करने मे लाभ ही लाभ होता है।

यदि वृक्ष अपनी मूर्खता से लोभवश पुरानी ही पत्तियों को धारण किये रहे जो अपना काम कर चुकी हैं और उसमे पतझड न हो तो वसन्त ऋतु मे नवीन पत्तियो द्वारा वह हराभरा किस प्रकार हो सकता है ! वह तो धीरे-धीरे क्षीण होकर सूख जायगा। यदि वृक्ष पहले से ही मर चुका है तो वह भले ही पुरानी पत्तियो को धारण किये रहे, क्योंकि नई पत्तियाँ तो उसमें निकलेंगी ही नहीं। किन्तु जबतक वृक्ष में सक्रिय जीवन है तबतक यह आवश्यक है कि वह पुरानी पत्तियो को गिराता जाय जिससे उनके स्थान मे नई पत्तियां निकलती रहे।

विश्व का नियम है कि उसमे प्रत्येक वस्तु की प्रचुरता रहे अर्थात् यदि विघ्न न पडे तो प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति प्रचुरता से होती रहे। अतः जीवन को पूर्ण और सशक्त बनाने के लिये आवश्यक है कि हम बराबर अनुभव करते रहें कि हम और ईश्वर एक हैं। इस प्रकार के अनुभव से जिन चीजों की आवश्यकता होगी वे प्रचुर परिमाण मे आपको मिलती रहेंगी।

अतएव चीजों का अम्बार लगाने से नहीं प्रत्युत उनको बुद्धिमानी से खर्च करने से नई चीजें हमारे पास काफी तादाद मे आती रहेंगी। इससे पुरानी चीजो के मुकाबिले में हमारी आवश्यकताओ की पूर्ति कहीं अच्छी तरह हो सकेगी।, इस प्रकार ईश्वर की सबसे मूल्यवान् वस्तुयें हमको ही न प्राप्त होती रहेगी प्रत्युत हमसे दूसरे लोग भी उन मूल्यवान् वस्तुओ को प्राप्त करते रहेगे।

—:o:—

मनुष्य किस प्रकार पैगम्बर, सिद्ध, ऋषि और उद्धारक हुए हैं

मैंने अभी तक अत्यावश्यक सत्य की विवेचना की है और अपनी बुद्धि से जो मै समझ सका हूँ उसे आपके सामने रक्खा है। बडे-बडे आत्मज्ञानी पुरुषों के उपदेशो से मैंने कोई सम्बन्ध नही रक्खा। आइये अब उसी सत्य का विवेचन संसार के बडे बड़े विचारकों और महात्माओं के आदेशों तथा विचारो के दृष्टिकोणो से करें।

आपको स्मरण होगा कि अभी तक जो मैंने इन पन्नों मे लिखा है उसका तत्व यही है कि हम अपने को और ईश्वर को एक समझें और सदा उसी से अपना नाता जोडे रहे। मनुष्य जीवन का मुख्य ध्येय यही है। महात्मा ईसा ने कहा था, "हम और हमारे पिता ईश्वर एक ही हैं।" देखिये, कितने विश्वास के साथ उन्होंने अपनी समता ईश्वर से की है। उन्होंने फिर कहा, "जो मै कह रहा हूँ वह अपनी ओर से नहीं कह रहा हूँ किन्तु उस पिता की ओर से जो हमारे हृदय में रहता है। ससार के सब काम उसी से होते हैं।" उन्होंने कितनी स्पष्टता से अनुभव करके बताया है कि वे बिना ईश्वर की सहायता के कोई काम कर नहीं सकते। उन्होंने फिर कहा, "मेरे पिता काम करते हैं और उनके साथ मै भी काम करता हूँ। मेरे पिता शक्ति देते हैं। उसे प्राप्त करके मै उसी की सहायता से काम करता हूँ।"

महात्मा ईसा ने फिर कहा, "सबसे पहले तुम ईश्वर के साम्राज्य और उसकी न्याय परायणता की खोज करो । और चीजें तो तुम्हे आपसे आप मिल जायँगी । उन्होंने यह कह कर हमे अँधेरे मे नहीं रक्खा । उन्होंने इसको स्पष्ट करते हुए फिर कहा, "यहाँ वहाँ मत भटको, आसमान की बादशाहत तो तुम्हारे दिल मे है ।" उनके उपदेशानुसार ईश्वर की बादशाहत और आसमान की बादशाहत एक ही चीज हैं । यदि उनका उपदेश यह है कि आसमान की बादशाहत हमारे दिलो में है तो क्या उनकी यह आज्ञा नहीं है कि हम अनुभव करें कि हम और वे एक ही हैं । जैसे-जैसे तुम्हे इस एकता का अनुभव होगा वैसे-वैसे तुम्हे ईश्वर की बादशाहत मिलेगी और जब तुम्हे ईश्वर की बादशाहत मिल जायगी तो और दूसरी चीजें तो तुमको आप से आप मिल जायँगी ।

एक फिजूल खर्च पुत्र की कहानी महात्मा ईसा के महत्व पूर्ण उपदेश का बढ़िया उदाहरण है । जब वह विषयो का पूर्ण भोग कर चुका और जब उसने अपना सारा धन भोग-विलास मे उड़ा दिया तथा जब उसको मालूम हुआ कि मै दिन ब दिन पशुता की ओर जा रहा हूँ, तब उसे होश आया । उसने कहा, "मै अब सँभलूँगा और ईश्वर की शरण जाऊँगा ।" दूसरे शब्दों मे जब वह विषयों से ऊब गया जिनके लिये उसने संसार का चक्कर लगाया था तो उसकी आत्मा ने स्वयं उससे कहा, "तुम निरे पशु नहीं हो । तुम पिता ईश्वर के पुत्र हो । उठो और अपने पिता ईश्वर की शरण जाओ जिसके हाथ मे संसार भर की चीजें हैं ।" महात्मा ईसा ने फिर कहा था, "संसार के किसी व्यक्ति को अपना पिता न कहो । जो आसमान मे है

वहीं तुम्हारा एक मात्र पिता है।" यहाँ उन्होंने अनुभव किया था कि हमारे वास्तविक जीवन का सम्बन्ध ईश्वर से है। हमारे पिता और हमारी मातायें तो ईश्वर के कारिन्दे हैं जिन्होंने हमको यह शरीर दिया है और जो हमको रहने के लिये घर देते हैं। किन्तु वास्तविक जवन तो हमें ईश्वर से मिलता है जो हमारा असली पिता है।

एक दिन महात्मा ईसा से कहा गया कि आपके माता और भाई बाहर खडे हैं। वे आपसे मिलना चाहते हैं। उन्होंने उत्तर दिया, "कोन मेरी माता है और कौन मेरे भाई। जो मेरे पिता की इच्छा के अनुसार काम करेगा, जो कि आसमान में रहता है, वही मेरा भाई है, वही मेरी बहन है और वही मेरी माता है।"

बहुत से लोग अपने रिश्तेदारों मे बुरी तरह गुलाम बन कर फँसे रहते हैं। स्मरण रखिये वास्तव मे वे हमारे रिस्तेदार नही हैं जिनसे हमारा सम्बन्ध खून से है; हमारे सगे रिश्तेदार तो हैं वे जिनका और हमारा सम्बन्ध मन, आत्मा और बुद्धि से है। हमारे रिश्तेदार वे लोग भी हो सकते हैं जो दुनिया के दूसरी ओर रहते हैं और जिनको हमने कभी देखा भी नहीं है। उनका और हमारा सम्बन्ध 'समान को समान खींचता है' इस ईश्वरीय सिद्धान्त के अनुसार इस जन्म या दूसरे जन्म मे स्थापित हो सकता है।

जब महात्मा ईसा ने हुक्म दिया कि पृथ्वी पर किसी को पिता न कहो, तुम्हारा पिता तो वह है जो आसमान में रहता है तब उन्होंने हमे यह महत्व पूर्ण विचार दिया कि 'ईश्वर सब का पिता है।' यदि ईश्वर हम सब का समानरूप से पिता है तो फिर हम सब एक दूसरे के भाई हैं। किन्तु एक विचार इससे भी ऊँचा है। वह यह है कि मनुष्य

और ईश्वर में कोई अन्तर नहीं है, वे एक हैं। जब हम और ईश्वर समान हैं तो संसार भर के प्राणी भी एक दूसरे के समान हैं। हम जब इस सिद्धान्त का अनुभव कर लेते हैं कि हम सब समान हैं और ईश्वर तथा हम समान हैं और जब हम अपने मन को ईश्वर में लगाते हैं तो हम मनुष्य मात्र को ईश्वर और अपनी समानता का अनुभव कराते हैं और उनको ईश्वर की ओर एक कदम खींच ले जाते हैं।

महात्मा ईसा ने ईश्वर से हमारा सच्चा सम्बन्ध बताया और कहा, "जब तक तुम ईश्वर के छोटे-छोटे बच्चे न हो जाओगे तब तक आसमान की बादशाहत में तुम्हारा प्रवेश नही हो सकता है।" जब उन्होने कहा, "मनुष्य केवल रोटी खाकर जीवित नहीं रहता प्रत्युत हरएक शब्द से जीवित रहता है जो ईश्वर के मुख से निकलता है" तब उन्होंने एक बडे महत्व की सच्ची बात कही जिसको हमने अभी तक पूर्ण रूप से नहीं समझा है। उन्होंने बताया कि यह पाच भौतिक शरीर केवल भोजन से कायम नहीं रहता बल्कि यह शरीर और उसके काम बहुत कुछ ईश्वर के साथ उसके सम्बन्ध पर आश्रित हैं। धन्य हैं वे जिनके हृदय शुद्ध हैं, क्योंकि उन्हे ईश्वर का दर्शन होगा। दूसरे शब्दों में धन्य हैं वे जो ससार भर में केवल ईश्वर को ही मानते हैं क्योंकि ऐसा करने से उनको ईश्वर का दर्शन होगा। मनु भगवान् ने कहा है, "धन्य है वह जो संसार भर के प्राणियों मे एक ही ईश्वर के प्रतिबिम्ब को देखता है और सब के साथ समान बुद्धि रखता है।" अथानेशियस (Athanasius) ने कहा था, "हम इसी शरीर से देवता हो सकते हैं।" यही सत्य हमको गौतम बुद्ध के जीवन और

उपदेश से मिलता है। उन्होने कहा था, "लोग चारों ओर जंजीर में बँधे हुए दिखलाई पड रहे हैं, क्योकि उन्होंने 'अहन्ता' (मैपन) का अहंकार अभी तक अपने दिलों से नहीं निकाला है।" भिन्नता को दूर करके ईश्वर मे समता रखने की भावना हमको उनके उपदेशो में दिखलाई पडती है। ईश्वर के साथ एकता स्थापित रखने की भावना ही हमको मध्यकालीन सब महात्माओं के उपदेशो मे मिलती है।

हमारे युग मे ही एमेनुयल स्वेडन बर्ग (Emanuel Sweden Borg) नाम के बडे महात्मा हुए है जो कहते थे कि ईश्वर के प्रेम की नदी बह रही है, उसमें से निकाल कर प्रेम को तुम भी अपने मे भर लो। फ्रेण्ड्स (Friends) के धर्म और उनकी पूजा का तत्व भीतरी प्रकाश को प्राप्त करना है। जितना अधिक हम ईश्वर के सम्पर्क मे रहेंगे उतना ही अधिक प्रत्यक्ष रूप से वह हमारी आत्मा से वातचीत करेगा। कॉनकार्ड (Cancord) मे रहने वाले आत्मज्ञानी महात्मा को भी उसी सत्य के दर्शन हुए थेजब उन्होने कहा था। "हम सब जीवनरूपी विशाल समुद्र की छोटी छोटी नालियाँ हैं।" जब उन्होंने अपनी नाली को समुद्र की ओर पूर्ण रूप से खोल दिया तो वे आत्मज्ञानी हो गये।

हम जब इतिहास के पन्नों को पलटते हैं तो मालूम होता है कि जिन स्त्री और पुरुषों ने असली चतुराई और वास्तविक शक्ति के साम्राज्य मे प्रवेश किया है और जिन्हें सच्चा सुख और शान्ति मिली है वे सबके सब ईश्वर के सम्पर्क में रहा करते थे। डैविड (David) बडे मजबूत और शक्तिशाली थे। वे जैसे जैसे ईश्वर की आवाज को अपने भीतर सुनते थे वैसे वैसे वे ईश्वर का गुणनुवाद करके उसको

आराधना करते थे और अपनी भीतरी आवाज की आज्ञा से काम करते थे। जब वे ऐसा नहीं कर पाते थे तो मारे दुःख के चिल्लाने लगते थे। यही बात हर एक राष्ट्र और हर एक जाति के बारे मे कही जा सकती है। जब तक इसरायल देश के लोग ईश्वर पर विश्वास करते थे और उसकी आज्ञानुसार काम करते थे तब तक वे बडे ही सुखी, सन्तुष्ट और शक्तिशाली थे और उनका कोई कुछ बिगाड़ नही सकता था। किन्तु जब उन्होने अपने बल पर भरोसा करना शुरू किया और ईश्वर को भुला दिया, जिससे सब को शक्ति मिलती है, तब वे पराजित होकर गुलाम बन गये।

इस अमिट सिद्धान्त में कितना सत्य भरा है— 'वे लोग धन्य हैं जो ईश्वर का शब्द सुनकर उस पर अमल करते हैं।" उनको ऐसा करने से संसार की सब वस्तुयें मिल जाती हैं। ईश्वर के सम्पर्क मे रहकर हम वास्तव मे अपनी बुद्धिमानी का परिचय देते हैं।

इतिहास के जितने बडे-बडे पैगम्बर, सिद्ध, ऋषि और उद्धारक हुए हैं उन सब को प्राकृतिक रीति से शक्ति मिली थी। उन्होने अपनी और ईश्वर की समता का पूर्ण अनुभव किया था। ईश्वर व्यक्ति विशेष की कद्र नही करता। वह पैगम्बर, सिद्ध, ऋषि और उद्धारक नही पैदा किया करता। वह तो मनुष्य पैदा करता है। किन्तु जहाँ तहाँ जब कोई व्यक्ति उस ईश्वर से अपनी एकता का अनुभव कर लेता है, जिसने उसे पैदा किया है और उसी एकता पर वह जीवित रहता है, तो वही व्यक्ति पैगम्बर, सिद्ध, ऋषि या उद्धारक कहलाता है। ईश्वर जातियो की भी कद्र नहीं करता। जहाँ तहाँ जब कोई जाति ईश्वर की आराधना करती है तो वह सुख का जीवन व्यतीत करती है।

चमत्कार (करिश्मे) दिखलाने का कोई युग नही था। कोई यह नही कह सकता कि अमुक युग मे चमत्कार दिखलाये गये थे और अब नही दिखलाये जा सकते। हर युग में और सब देशो मे, परिस्थितियो के अनुकुल होने पर चमत्कार दिखलाये गये हैं। जैसे वे पहले दिखलाये गये थे वैसे ही अब भी उन्ही स्थानो मे दिखलाये जा रहे हैं, जहाँ ईश्वरीय सिद्धान्तो को मानकर लोग चलते हैं। सुनते हैं वे बड़े जबरदस्त आदमी थे और ईश्वर के स थ चलते फिरते थे। बात यह है कि वे ईश्वर के साथ चलते फिरते थे इसीलिये वे जबर-दस्त आदमी कहलाते थे। जबरदस्त होने का कारण भी मौजूद है और उसका परिणाम भी मौजूद है।

ईश्वर किसी को सुखी नहीं बनाता। जो ईश्वर के अस्तित्व को मानता है और उसी के नियम के अनुसार चलता है वही सुखी होता है। सालोमन (Solomon) से कहा गया कि तुम्हे जो माँगना हो माँगलो। उन्होने बुद्धि माँगी। उन्होंने समझ लिया कि बुद्धि के मिल जाने से मुझे सब कुछ मिल जायगा। हमने सुना है कि ईश्वर ने फरोह (Pharaoh) को निर्दय बना दिया। इस पर मैं विश्वास नहीं करता। फरोह ने अपने को स्वयं निर्दय बना लिया और दोष थोपा गया ईश्वर के ऊपर। जब उसने अपने को निर्दय बना लिया और ईश्वर के कहने की अवहेलना की तो प्लेग की बीमारी उत्पन्न होगई। उसके कार्यों का कारण भी प्रत्यक्ष था और फल भी। यदि उसने ईश्वर की आज्ञा का पालन किया होता तो प्लेग न होता।

हम अपने पक्के मित्र हैं और हमी अपने कट्टर शत्रु हैं। जिस

क्रम से हम अपने भीतरी शक्तियो के अनुकूल चलेंगे उसी क्रम से अपने मित्र होंगे और जिस अनुपात से हम अपनी भीतरी शक्तियो की अवहेलना करेंगे उसी अनुपात से अपने और सब के शत्रु होंगे। जब हम ईश्वरीय शक्तियो से अपना सम्पर्क स्थापित करते हैं तो हममे वे शक्तियाँ प्रवेश करती हैं और हम उन शक्तियो को लिये हुए घूमते हैं और लोगो के उद्धारक हो जाते हैं। इस प्रकार हम सब एक दूसरे के उद्धारए बन जाते हैं। इसी तरह तुम भी संसार के एक उद्धारक बन सकते हो।

सब धर्मों का मूल सिद्धान्त

विश्व का धर्म

विश्व के सब धर्मों मे जो एक ही मूल तत्व पाया जाता है उसी की सचाई पर हम यहाँ विचार कर रहे हैं। उसी तत्व को हम सब धर्मों में पाते हैं और सब लोग हमारी इस बात से सहमत हैं। यह एक ऐसा सत्य है जिसको सभी लोग स्वीकार करते हैं चाहे वे एक ही धर्म के अनुयायी हो या भिन्न-भिन्न धर्मों के। लोग छोटी-छोटी बातो मे झगडा करते हैं। वे अनावश्यक बातों पर अपने व्यक्तिगत विचारों के बारे में कलह करते हैं। किन्तु मूल तत्व पर, जो कि सब धर्मों मे पाया जाता है, वे मिल जाते हैं। झगड़े अनावश्यक छोटी-छोटी बातो पर होते हैं किन्तु आवश्यक बडी-बडी बातो में उनका मेल रहता है।

एक स्थान में रहने वाले कई धर्मों के लोग आपस में लडते झगडते हैं किन्तु जब देश पर कोई बडी आपत्ति आती है, जैसे बाढ अकाल और महामारी, 'तो लोग छोटे-छोटे झगडो को भूल जाते हैं और आपत्ति को हटाने के लिये सब लोग कन्धे से कन्धा मिलाकर काम करते हैं। अपरिपक्व विकास वाली आत्मा लडती-झगडती है किन्तु परिपक्व आत्मा प्रेम और सेवा के बड़े-बडे कामो में सबको एकता के सूत्र में बाँध लेती है।

देश प्रेम बडी सुन्दर चीज है। अपने देश से प्रेम करना अच्छा है। किन्तु दूसरे देशों की अपेक्षा अपने देश से ही अधिक प्रेम मैं क्यो करूँ? ऐसा करके मै अपने हृदय की संकीर्णता प्रगट करता

हूँ और सम्भव है, समय आने पर अपने देश प्रेम की परीक्षा होने पर मै असफल हो जाऊँ। मैं जिस प्रकार अपने देश से प्रेम करता हूँ उसी प्रकार और देशो से भी प्रेम करूँ तो मैं अपने स्वभाव की उदारता प्रगट करूँगा । इस प्रकार का देश प्रेम उत्तम होता है और उस पर हमेशा-भरोसा किया जा सकता है।

हम लोग स्वीकार करते हैं कि हम लोगो के जीवन और शक्ति का उद्गम स्थान ईश्वर है और वह हम सब के द्वारा काम कर रहा है। इस विचार मे किसी का भी मतभेद नही है। ईश्वर के सम्बन्ध मे और भी बहुत से विचार हैं जिनमें मत-भेद है। हममे बड़े बडे धर्मात्मा और सच्चे भक्त हैं। वे ईश्वर पर ऐसे ऐसे दोष लगाते हैं जिन्हें कोई भी स्वाभिमानी स्त्री या पुरुष अपने ऊपर लगाया जाना पसन्द न करेगा। वे इस विचार से प्रसन्न होते हैं कि ईश्वर अपने बच्चो से किस प्रकार कुपित, ईर्ष्यालु तथा प्रतिशोध की भावना रख सकता है? इन भावनाओ के प्रदर्शन से हमारी श्रद्धा की भावना उन पुरुषो और नारियो के प्रति कम हो जाती है, फिर भी हम इन भावनाओं का आरोप ईश्वर पर करते हैं।

एक सच्चा उदार-धर्मी धर्म का एक बहुत बडा पोषक होता है। उदारधर्मी प्राणिमात्र के सेवक हैं। महात्मा ईसा बहुत ही बड़े उदारधर्मी थे। वे कट्टर पन्थियों के उपदेशों के प्रबल विरोधी थे। महात्मा ईसा विशेष रूप से विश्व के महात्मा थे, किसी खास धर्म के महात्मा नही थे। जान बपटिस्ट खास सम्प्रदाय के महात्मा थे। जान एक विशेष प्रकार का वस्त्र पहनते थे, एक विशेष प्रकार का खाना खाते थे और एक खास सम्प्रदायक के अनुयायी थे। उन्होंने स्वयं कहा था कि मेरे

धर्म की अवनति हो और ईसा के धर्म की उन्नति। ईसा ने कोई सीमा नहीं बाँधी थी। वे अपने को किसी सीमा से नहीं बाँधना चाहते थे। वे सर्वथा विश्व के थे। उन्होंने जो शिक्षायें दीं वे किसी खास समय के लिये नहीं थी, वे तो सब समय के लिये थीं।

जो महान् सत्य सब धर्मों में मौजूद है वह मानवी जीवन का एक बहुत ही बड़ा कार्य है। इस पर हम सब लोग सहमत हैं। उसे जीवन का एक मुख्य कार्य बना लेने पर हम देखेंगे कि छोटे-छोटे मतभेद, संकीर्ण विचार और उपहासास्पद नासमझी, तुच्छ होने के कारण, इस प्रकार हवा हो जायगी कि एक यहूदी कैथलिकों के गिरजाघर में प्रार्थना कर सकेगा और एक कैथोलिक यहूदियों के जमाव में ईश्वर की प्रार्थना कर सकेगा। इसी प्रकार एक ईसाई किसी बौद्ध मन्दिर में और एक बौद्ध किसी गिरजाघर में जा सकेगा। अथवा सब लोग अपने घर में या किसी पहाड़ी पर या दिन में काम करते हुए ईश्वर की प्रार्थना कर सकेंगे। सच्ची आराधना के लिये केवल ईश्वर और हमारी आत्मा की जरूरत है। उसके लिये किसी खास समय और मौसम की जरूरत नहीं। कहीं भी और किसी भी समय ईश्वर और मनुष्य मिल सकते हैं।

यह विश्व के धर्म का एक मुख्य सिद्धान्त है जिससे सब सहमत हो सकते हैं। यह बहुत बड़ी सच्चाई है जो हमेशा टिकेगी किन्तु बहुत सी बातें ऐसी हैं जिनके बारे में सब लोग सहमत नहीं हो सकते। ये व्यक्तिगत और अनावश्यक बातें हैं जो समय पाकर धीरे-धीरे समाप्त हो जायँगी। ईसाई पूछता है, "क्या ईसा को आत्मज्ञान नहीं हुआ था?" जी हाँ, हुआ था; किन्तु एक उन्हीं को आत्मज्ञान नहीं हुआ था। बौद्ध पूछता है, "क्या बुद्ध को आत्मज्ञान नहीं हुआ था?" जी

हाँ, हुआ था किन्तु अकेले उन्हीं को आत्मज्ञान नहीं हुआ था। ईसाई पूछता है, "क्या हमारी इजील दैवी भावना से भरी हुई नहीं है?" जी हाँ, है किन्तु और भी धार्मिक पुस्तकें दैवी भावना से ओतप्रोत हैं। एक ब्राह्मण पूछता है, "क्या वेद दैवी भावना से भरे हुए नहीं हैं?" जरूर हैं, किन्तु और भी दूसरी धार्मिक पुस्तकें दैवी भावना से परिपूर्ण हैं। तुम जो कहते हो कि हमारी धार्मिक पुस्तक दैवी भावनाओं से भरी हुई है, यह तुम्हारी भूल नहीं है किन्तु तुम्हारा यह कहना गलत है कि दूसरी धार्मिक पुस्तको मे दैवी भावनाएँ नहीं हैं।

दैवी भावनाओ से परिपूर्ण धार्मिक पुस्तकें उसी एक उद्गम स्थान ईश्वर से उत्पन्न हुई हैं जो उन्हीं आत्माओ के द्वारा बातचीत करता है जो उधर आकृष्ट हैं। कुछ लोगों को दूसरो से अधिक आत्मज्ञान होता है किन्तु जो जितना ही अधिक ईश्वर मे मन लगाए हुए है उसको उतना ही अधिक आत्मज्ञान होता है। हेब्रू भाषा की धार्मिक पुस्तको मे एक आत्मज्ञानी लेखक कहता है, "बुद्धि ईश्वरीय शक्ति की साँस है जो सभी युगो मे पवित्र आत्माओ के भीतर घुसकर उनको ईश्वर और पैगम्बरों का मित्र बनाती है।"

हम उन संकुचित विचार वाले कट्टर पंथियों मे न हो जो कहते हैं कि सर्वशक्तिमान् ईश्वर संसार के एक कोने में और एक विशेष युग में अपने को मुट्ठी भर बच्चो मे प्रकट करता है। इस विधि से ईश्वर काम नही करता। ईसाइयो की धर्म पुस्तक इंजील मे लिखा है—"सचाई के बारे मे ईश्वर किसी खास व्यक्ति की मुरव्वत नहीं करता। वह प्रत्येक जाति के उन लोगो से प्रसन्न होता है जो ईश्वर की आराधना करते हैं और ईमानदारी से काम करते हैं"

सचाई के ख्याल से हमे यह परवाह नहीं करनी चाहिये कि हम किस विशेष धर्म को मानते हैं। सब से बडी बात यह होनी चाहिये कि हम उस धर्म के सिद्धान्तो को कितनी सचाई से मानते हैं।

यदि सचाई से अधिक प्रेम करें और स्वार्थ का ख्याल छोड दे तो हमे दूसरों को अपना मतावलम्बी बनाने की चिन्ता न रहेगी; किन्तु जो उनके विचार हैं उन्ही के द्वारा हम उन्हे ईश्वर तक पहुँचने मे उन साधनों द्वारा मदद करेंगे जो उनके सबसे अधिक अनुकूल होगे। चीनी कहता है, "हमारे धर्म गुरु का उपदेश है कि हम अपने हृदय को शुद्ध रक्खें।" यदि हम विचार करें तो हमको मालूम होगा कि जो योग्य धर्म गुरु हैं उन सब का भी यही उपदेश है।

समस्त मुख्य मुख्य धर्मों के सिद्धान्त एक ही हैं। अन्तर केवल छोटी छोटी बातो मे रहते हैं जिन्हे नाना प्रकार के लोग निकाला करते हैं। मुझसे कभी-कभी लोग यह पूछते हैं कि तुम्हारा धर्म क्या है? मुझे यह सुनकर आश्चर्य्य होता है। अरे ससार मे केवल एक ही तो धर्म है और वह है जीवित ईश्वर का धर्म। नाना प्रकार के लोगो द्वारा चलाये हुए एक ही धर्म मे नाना प्रकार के पन्थ हैं किन्तु वे इतने महत्वपूर्ण नहीं हे। जैसे-जैसे हमारी आत्मा का विकास होगा वैसे-वैसे छोटी-छोटी अन्तर डालने वाली बातें दूर हो जायँगी। आजकल पन्थ ता अनेक हैं किन्तु असली धर्म एक ही है।

जब हम यह बात भूल जाते हैं तो असली धर्म के तत्व से हम हट जाते हैं और धार्मिक पाखंड में पडे रहते हैं। हम पाखंड मे जिस मात्रा मे पडे रहते हैं उसी मात्रा मे हम अपने चारो ओर चहारदीवारी उठाते हैं जिससे दूसरे हमसे अलग हो जाते हैं और हम भी बाहर

निकल कर सत्य का अनुभव नही कर सकते । सत्य तो विश्वव्यापी होता है।

फारसी के एक विद्वान् ग्रन्थकर्ता ने कहा है, "ससार मे केवल एक धर्म है। जिस मार्ग को मै पकड़ता हूँ वह उसी बडे मार्ग मे मिल जाता है जो ईश्वर के समीप जाता है। ईश्वर ने जो कालीन फैलाया है वह बहुत लम्बा चौडा है। उसमे उसने बहुत ही सुन्दर रंग भरा है।" बौद्ध कहता है। "पवित्रात्मा हर धर्म का मान करता है, मेरे धर्मानुसार ऊँच-नीच और अमीर-गरीब मे कोई अन्तर नही है। आसमान की तरह मेरे धर्म मे सब के लिये स्थान है और पानी की तरह वह सब को साफ करता है।" चीनी कहता है, "विशाल हृदय वालो को सब धर्मो मे सत्य मिलता है और संकीर्ण हृदय वालो को सब धर्मो मे अन्तर ही अन्तर दिखलाई पडता है।" हिन्दू कहता है, "सकीर्ण हृदय वाला पूछता है कि यह मनुष्य हमारी जाति का है या दूसरी जाति का किन्तु ईश्वर भक्त प्रेमी सारे ससार को अपना घर समझता है।" वेदी के फूल कई रगो के होते हैं किन्तु पूजा तो एक ही प्रकार की होती है। स्वर्ग के राजप्रासाद मे कई दरवाजे हैं। हरएक पुरुप इच्छानुसार जिस दरवाजे मे चाहे उसमे प्रवेश कर सकता है। क्या हम सब एक ही पिता की सन्तान नही हैं? ईश्वर ने संसार मे रहने के लिये सब जातियो के लोगो को एक ही खून का बनाया है। आगे के महात्माओ ने कहा, "मनुष्य की आत्मा के लिये जो कल्याणप्रद था उसे ईश्वर ने पुराने लोगों को दिया; जो आजकल के लोगो के लिये कल्याणप्रद है उसे ईश्वर ने आजकल के लोगो को दिया है।"

टेनिसन का कहना है' "मैने स्वप्न मे देखा कि मैने कोई बडा

मन्दिर, बड़ी मसजिद या बड़ा गिरजा नही बनवाया। मैने एकाएक पत्थर जोड़ कर केवल एक मन्दिर बनवाया जिसका द्वार आसमान से आने वाली हवा के लिये खुला था। सत्य, शान्ति, प्रेम और न्याय आये और उस मन्दिर मे रहने लगे।"

मनुष्य की आत्मा को अधिक से अधिक आनन्द देने के लिए धर्म बना है। जब हम सच्चे धर्म का अनुभव करते हैं तो उससे हमको शांति, आनन्द और सुख मिलते हैं। उससे हमको विषाद और दुःख कभी नही मिलते। ऐसे सच्चे धर्म से सबको प्रेम होगा। उससे कोई घृणा न करेगा। भगवान् करे कि हमारे गिरजाघरों मे ऐसा ही सच्चा धर्म प्रवाहित हो, भगवान् करे कि उनके द्वारा लोगों को आत्मज्ञान हो और वे ईश्वर के साथ अपनी एकता के सम्बन्ध को समझें जिससे हमको आनन्द प्राप्त हो और उनमे इतने अधिक लोग एकत्र हों कि उनकी दीवालें फटने लगें और उनमे ऐसे-ऐसे आनन्द देनेवाले गीत दिन रात गाये जायें कि उस धर्म पर सब लोगों की रुचि हो और उसके अनुसार वे अपना जीवन बिता कर उसी को सच्चा और जोरदार धर्म बनावें। सच्चे धर्म का अर्थ यह है कि हमे यहाँ जीवन को सुखी बनाने की पर्याप्त सामग्री मिले और शीघ्र मिले। यदि ऐसी सामग्री नहीं मिलती तो वह सच्चा धर्म नही है। हम इसी प्रकार का विश्वव्यापी धर्म चाहते हैं। यदि हमको ऐसा धर्म नही मिलता तो हम अपना समय नष्ट कर रहे हैं। जिस शाश्वत जीवन को हम व्यतीत कर रहे हैं उसकी सार्थकता इसी में है कि हम दिन प्रतिदिन अपने जीवन के प्रतिक्षण का सदुपयोग करें। यदि हम ऐसा करने मे असफल होते हैं तो हम हर बात में असफल होंगे।

उच्चकोटि के ऐश्वर्य्य का प्रत्यक्षीकरण

लोग मुझसे पूछते हैं कि "ईश्वरीय शक्ति को हम किस प्रकार प्राप्त कर सकते हैं? आपकी बातें तो बहुत ही सुन्दर और सत्य हैं किन्तु हम उस शक्ति का साक्षात्कार किस प्रकार कर सकते हैं जिसका इतना प्रभावशाली परिणाम होता है?"

ईश्वरीय शक्ति को यदि हम स्वयं कठिन न बनावें तो उसे प्राप्त करने की विधि कठिन नहीं है। अपने मस्तिष्क और हृदय का फाटक खोलो जिसके द्वारा ईश्वरीय शक्ति तुम्हारे भीतर प्रवेश करे। मस्तिष्क और हृदय का मुँह खोलना उसी प्रकार है जिस प्रकार किसी छोटे नाले का मुँह खोल दें तो ऊपर के जलाशय से पानी नाले में भर जायगा और नीचे के खेतों की सिचाई उससे भली-भाँति हो जायगी। रह गई बात ईश्वर से अपनी समता की, उसके बारे में मेरा कहना है कि हम अपना सम्बन्ध ईश्वर से स्थापित करें और फिर ईश्वर के साथ अपनी समता को समझें। इसके लिये पहली शर्त यह है कि हम अपने मस्तिष्क और हृदय के मुँह को खोलें। उसके बाद उसके सम्पर्क में आने के लिये उत्कट इच्छा करें।

पहले पहल किसी शान्त और एकान्त स्थान में बैठना अच्छा होगा जहाँ किसी तरह का शोर तुम्हारी शान्ति को भंग न करे। वहाँ मन लगाकर ईश्वर का ध्यान करो और शान्ति के साथ इस बात की इच्छा करो कि तुम्हारी आत्मा में ईश्वर का प्रवेश होने लगे और उसमें

ईश्वर का अधिकार हो जाय। ऐसा करने से आत्मा पर जब उसका अधिकार हो जायगा तो तुम्हारे मन पर उसका प्रकाश होगा और मन से शरीर के सब अंगो पर होने लगेगा। तदनन्तर जितना अधिक तुम ईश्वर की ओर मन को लगाओगे उतना ही तुमको अधिक ऊँचे उठाने वाली एक शक्ति मिलेगी जिससे तुम्हारे शरीर, तुम्हारी आत्मा और तुम्हारे मन को शान्ति मिलेगी और इनके द्वारा संसार मे भी तुम्हे शान्ति मिलेगी। इस प्रकार तुम पहाड़ की चोटी पर बैठ जाओगे और ईश्वर तुमसे बातचीत करेगा। जब तुम ऊपर से उतरो तो ईश्वर का सम्पर्क अपने साथ लेकर उतरो, और सोते, जागते, काम करते, विचार करते और घूमते हुए भी उसको हमेशा अपने साथ रक्खो। इस प्रकार संभव है, तुम पहाड की चोटी पर लगातार न रह सको; किन्तु तुम्हे वहाँ जो ईश्वरीय शक्ति मिली है और जो दैवी भावना प्राप्त हुई है उसी के बीच तुम हमेशा रहोगे।

अभ्यास करते-करते एक समय ऐसा आवेगा जब तुम अपने कार्यालय मे जाओगे अथवा सडक पर चलोगे, जहाँ शोर मच रहा हो तो वहाँ भी अपने विचारों के परदे को खींचकर शान्ति का अनुभव कर सकोगे और वहाँ भी ईश्वरीय प्रेम, बुद्धि, शान्ति, और शक्ति तुम्हारी रक्षा करके तुम्हारा पथ प्रदर्शन करेगी। यही लगातार ईश प्रार्थना करने की भावना है। यही लगातार प्रार्थना करना है। यही ईश्वर को जानना और उसके साथ चलना है। यही महात्मा ईसा को अपने भीतर प्राप्त करना है। यही नया जन्म है और यही दूसरा जन्म है। यही पहले जो हमारे लिये स्वाभाविक है उसे करना है और फिर जो ईश्वरीय ज्ञान है उसे प्राप्त करना है। इस प्रकार पुराने आदम (Adam) को तुम

छोड़ते हो और नये पुरुष ईसा को ग्रहण करते हो। तुम्हारा धर्म कुछ भी क्यो न हो, तुम इस प्रकार अपने शाश्वत जीवन की रक्षा करते हो, क्योंकि ईश्वर को जानना ही शाश्वत जीवन है। हमारा पुराना गाना धीरे-धीरे मिठास की ओर बढ़ता जायगा और "सुन्दर ईश्वरीय जीवन अन्न" ऐसा तुम्हारा नया गाना होगा।

हम चाहें तो इस प्रकार का ईश्वरीय साक्षात्कार हम इसी दिन, इसी घड़ी और इसी पल कर सकते हैं। किन्तु यदि हम ठीक मार्ग की ओर केवल कदम उठाते हैं तो पूर्ण ईश्वरीय साक्षात्कार के लिये समय लगेगा। यदि तुम पहाड़ की ओर मुँह करके चलो और धीरे धीरे या तेजी से उसी ओर कदम बढ़ाते जाओ तो तुम पहाड़ तक पहुँच जाओगे। किन्तु यदि तुम पहाड़ की ओर मुँह बिना किये चलना शुरू कर दो तो तुम नही पहुंचोगे। गोथे (Goethe) ने कहा था :—

"क्या तुम सचमुच काम करना चाहते हो? यदि हॉ तो इसी क्षण तैयार हो जाओ। तुम जो कुछ करना चाहते हो अथवा जिसका स्वप्न देख रहे हो उसे प्रारम्भ कर दो। साहस मे प्रतिभा, शक्ति तथा जादू निहित है। केवल कार्य करने में संलग्न हो जाओ तो मस्तिष्क अपने आप क्रियमाण होगा। प्रारम्भ करने से ही कार्य सम्पन्न होगा।"

नवजवान गौतम ने कहा था, "मुझे सत्य प्राप्त हो गया है, इसलिये मै अपने जीवन के उद्देश्य को पूरा कर लूँगा। मैं वास्तव मे बुद्ध हो जाऊँगा।" इसी भावना से प्रेरित होकर वे बुद्ध हुए और इसी जीवन मे उन्होंने निर्वाण प्राप्त किया। उनका कहना था कि इसी

प्रकार का निर्वाण देने वाला जीवन इसी जीवन मे और यही प्राप्त किया जा सकता है। उन्होंने करोड़ो स्त्री पुरुषो को मोक्ष का मार्ग दिखाया।

नवजवान ईसा ने कहा, "तुमको मालूम नही कि मै अपने पिता का काम करने के लिये यहाँ हूँ।" उन्होने इस बात का साक्षात्कार किया कि मै और मेरे पिता हम दोनो एक ही हैं। इस प्रकार स्वर्ग की बादशाहत का अनुभव उन्होने इसी जीवन मे कर लिया। उन्होने यह भी आदेश दिया कि इसी जीवन मे मनुष्य को स्वर्ग की बादशाहत मिल सकती है। इसी कारण वे करोडो स्त्री पुरुषो के पथ प्रदर्शक हुए।

हम ससार भर को छान डालें किन्तु इससे बढ़कर और कोई असली बात न मिलेगी कि पहले हम ईश्वर की बादशाहत और उसकी ईमानदारी प्राप्त करें जिससे दूसरी वस्तुयें हमे आपसे आप मिल जायँगी। जो पुरुष सत्य पथ का अनुगामी होगा और ईमानदारी से काम करेगा वह भीतरी ईश्वरीय तत्व को समझ लेगा और उसके द्वारा वह उन नियमों को समझ लेगा जिनके द्वारा ईश्वरीय काम हो रहा है।

मुझे ऐसे लोगो की जानकारी है जिन्होंने ईश्वर के साथ अपनी समता का अनुभव करके स्वर्ग की बादशाहत प्राप्त कर ली है। उन्होने ईश्वर की ओर अपने को इस प्रकार लगा दिया है कि उनको उसकी मदद बराबर मिलती रहे। ये लोग इस महत्वपूर्ण सिद्धान्त के जीते-जागते ज्वलन्त उदाहरण हैं। जीवन की प्रत्येक बात मे ईश्वर उनका पथ प्रदर्शन करता है। वे हमेशा अपने और ईश्वर की समता का और स्वर्ग की बादशाहत का अनुभव करते रहते हैं। इससे उनको

प्रचुर मात्रा मे सब चीजें मिलती रहती है। उनको किसी बात की कमी नही रहती। जितना वे चाहते है उतना उनको मिल जाता है। उन्हे यह चिन्ता नहीं रहती कि हम क्या करें और किस प्रकार करें। उनका जीवन बेफिक्री का होता है। उनको मालूम है कि चिन्ता करने की हमे आवश्यकता नही है, क्योंकि ईश्वर हमारी रहनुमाई कर रहा है। ऐसे लोगो मे से दो तीन के जीवन चरित्र का स्मरण करके मै यहाँ कुछ दे रहा हूँ। जिससे विषय की वास्तविकता मालूम हो जायगी। सम्भव है कुछ लोगो को उनका विश्वास ही न हो, चमत्कारों पर विश्वास करने की बात तो दूर रही। स्मरण रक्खो कि जो काम जीवन मे एक व्यक्ति कर सकता है उसे और लोग भी कर सकते हैं। जो ईश्वरी शक्ति का अनुभव करके उसी के आधार पर जीवन व्यतीत करता है और ईश्वरीय नियम को मानता है उसके लिये तो ऐसा जीवन प्राकृतिक और नित्य का जीवन है। ऐसा जीवन तो विश्व मे बहते हुए ईश्वरीय जीवन मे निवास करना है। और जब एक बार वैसा जीवन हो गया तो समझो कि जीवन का झंझट समाप्त हो गया और दिन प्रतिदिन हमारा काम उसी प्रकार साधारण रीति से होने लगता है जिस प्रकार ज्वार भाटा आता है, ग्रह अपने-अपने मार्ग पर आकाश मे चलते हैं और मौसम एक के बाद दूसरे आते जाते रहते हैं।

हम ईश्वर के बनाये हुए नियमो के अनुसार नही चलते हैं इसलिये झगडे, शंकायें, बुराइयाँ, दुख, भय, अनिष्ट और चिन्तायें जीवन मे आती रहती हैं। जब तक हम ऐसा जीवन व्यतीत करते रहेंगे तब तक वे सब आते रहेगे। ज्वार भाटे के विरुद्ध नाव चलाना कठिन होता है और डूबने का भय रहता है।

ज्वार भाटे के साथ नाव चलाना और उसकी नैसर्गिक शक्ति से लाभ उठाना सुरक्षित और सरल होता है। ईश्वर को और अपनी समता का अनुभव करना और उसकी शक्ति को पहचानना ईश्वरीय प्रवाह को प्राप्त करना है। जब हम ईश्वर के सम्पर्क में आते हैं तो लोगों के सम्पर्क मे आते हैं और सारे विश्व के सम्पर्क मे आते हैं। सबसे अधिक लाभ यह होता है कि हमको स्वयं शान्ति मिलती है और हमारे शरीर, मन और हमारी आत्मा सब शान्त हो जाते हैं। ऐसा होने से जीवन पूर्ण और आनन्दमय हो जाता है।

फिर इन्द्रियाँ हमको अपने वश मे करके अपना दास नहीं बनाती। उन पर मन का अधिकार और शासन हो जाता है। तदन्तर ईश्वरीय ज्ञान की चमक उन पर आती है। जीवन फिर दीन और एकाङ्गी नही रह जाता जैसा बहुत से लोगों का हुआ करता है। उसमें सुन्दरता, आनन्द और शक्ति का प्रवेश होता है। इस प्रकार हमारे अनुभव में यह बात आ जाती है कि बीच का रास्ता (मध्य मार्ग) जीवन की समस्या को पूर्ण रूप से हल कर देता है। न तो निरी फकीरी ही से काम चलता है और न भोग और विलास के जीवन से। दुनिया की सब चीजें उपयोग के लिये हैं किन्तु उनका उपयोग बुद्धिमानी से करना चाहिये जिससे उनसे अधिक से अधिक आनन्द मिले।

हम जब ईश्वरीय ज्ञान में मस्त रहते हैं तो इन्द्रियों की उपेक्षा नहीं होती बल्कि उनका और अधिक सुधार होता है। शरीर हल्का होकर बनावट में सुन्दर हो जाता है इसलिये इन्द्रियां भी सुन्दर हो जाती हैं और जिन शक्तियों को हम अपनी नहीं समझते वे

भी धीरे धीरे उन्नति करने लगती हैं। इस प्रकार हम स्वाभाविक रूप से अध्यात्म के ऊँचे स्तर पर पहुँच जाते हैं जहाँ हमे ईश्वरीय नियमो का और सत्य का ज्ञान होता है। जब हम अध्यात्म के इस ऊँचे स्तर पर चढ़ जाते हैं तो फिर हम उन लोगों मे नही रह जाते जो कहते हैं कि अमुक को अमुक लोगों से शक्ति मिली किन्तु हमें यह बात स्पष्ट हो जाती है कि कोई किसी को शक्ति देता लेता नही बल्कि हम स्वयं शक्ति को प्राप्त करते हैं। हम उन लोगो में भी नहीं रह जाते जो जनश्रुति के आधार पर दूसरों की रहनुमाई करना चाहते है। हम तो प्रत्यक्ष देखकर कहते हैं कि शक्ति हमको मिल गई और इसी प्रकार कोई भी बात हम अधिकार के साथ कह सकते हैं। ऐसी अवस्था में पहुँचे बिना बहुत सी चीजों का ज्ञान हमको नहीं होता। प्लाटिनस का कथन है 'जो ईश्वर की इच्छा के अनुसार काम करेगा वह उसके उद्देश्यों को भी समझेगा।" जो मन ईश्वर को देखना चाहता है उसे स्वयं ईश्वर हो जाना चाहिये। जब यह सत्य हमको मालूम हो जायगा और ईश्वरीय नियमों को हम जान जायँगे तो हम भी तत्वज्ञानी हो जायँगे और हमारे द्वारा दूसरो को भी ज्ञान प्राप्त होगा।

मनुष्य जब इधर-उधर जाता है और अपने साथियों से मिलता जुलता है तो उन्हें भी वह ज्ञान और शक्ति देता है। इस ज्ञान की जानकारी मनुष्य को आध्यात्मिक जागृति से होती है। हम लोग दूसरो को वे गुण दे रहे हैं, जो हम में हैं। जिस प्रकार फूल अपनी सुगन्धि देता है उसी प्रकार हम इन गुणों को वितरण करते हैं। गुलाब का फूल हवा में अपनी महक फैला देता है। जो उसके संसर्ग मे

आते हैं वे गुलाब की आत्मा से निकली हुई सुगन्धि से तरोताजा होकर प्रसन्न हो जाते हैं। उसी प्रकार विषैले फूलों से विषैली सुगन्धि निकलती है। उससे न तो लोग तरोताजा होते हैं और न प्रसन्न ही होते हैं। उसका परिणाम इतना भयंकर होता है कि यदि कोई उसमें देर तक रहे तो बीमार पड सकता है।

जितना अधिक ऊँचा जीवन होगा उससे उतना ही अधिक प्रोत्साहित और सहायता करने की भावनायें हमको प्राप्त होंगी। जितना तुच्छ जीवन होगा उससे उतनी ही हानिकारक भावनायें लोगों को प्राप्त होगीं। इनमे से हर एक अपने-अपने अनुरूप वायुमण्डल तैयार करेगा।

हिन्द सागर में भ्रमण करने वाले मॉझियो से हमने सुना है कि वे फैलती हुई चंदन की खूशबूदार महक से ही द्वीपों मे पहुँचने के पहले बता देते हैं कि हम अमुक द्वीपो में पहुँच रहे हैं। उसी प्रकार यह आत्मा भी शरीर के द्वारा तुम्हारी सहायता करेगी। जहॉ कहीं तुम जाओगे वहीं तुम्हारी विलक्षण और मूक शक्ति बाहर निकलने लगेगी और लोग उससे प्रभावित होंगे। तुम जहॉ जाओगे, अपने साथ अन्तर्ज्ञान लेते जाओगे और लोगों पर सुख की वर्षा करते रहोगे। तुम्हारे मित्र और सब लोग कहेंगे—"उस महान् आत्मा का स्वागत है, उसके आने से लोगों को सुख और शान्ति मिलती है।" जब तुम गली में होकर गुजरोगे तो थके हुए और पापी स्त्री पुरुष तुमसे ईश्वरीय स्पर्श का अनुभव करेंगे जिससे उनमें नया जीवन आवेगा और नई स्फूर्ति पैदा होगी। यदि तुम किसी मूर्ख के सामने से गुजरोगे तो वह भी तुम्हें आश्चर्य और अर्ध मनुष्यता की दृष्टि से देखेगा।

जब मनुष्य ईश्वर के सम्पर्क मे रहकर अपने को उन्नत बना लेता है तब उसकी आत्मा की शक्ति विलक्षण हो जाती है ऐसा जीवन हमारे सामर्थ्य के भीतर है और वह ऊँचा बनाया जा सकता है। इसे जानकर ही हम खुशी से उछल कर आनन्द के गीत गाने लगते हैं। जब हमारा जीवन वैसा ऊँचा हो जायगा तो हमारे एक गीत की भावना इस प्रकार होगी :—

"अरे! मैं इस महान् चिर सनातन स्थान में खड़ा हुआ हूँ; मुझे सारी वस्तुयें दैवी प्रतीत होती है। मै स्वर्गीय पदार्थों का सेवन करता हूँ तथा मैं स्वर्गीय सुरा पान करता हूँ।"

"चमकते हुए इन्द्र धनुष की छटा में जैसे ही मैं लाल, नीले और पीले रंगों की आभा देखता हूँ, वैसे ही मेरे मन में परम पिता परमेश्वर के प्रति प्रेम का स्रोत उमड आता है।"

"जितने सुन्दर पक्षी कलरव कर रहे हैं और जितने फूल खिले हुए है उन सब में दैवी सौन्दर्य्य है और वे अपने सौरभ से हमें सुरभित कर रहे है।"

"उषाकाल की रमणीय छटा में और रात्रि की गम्भीर निस्तब्धता में, ओह, मैं परमानन्द की प्राप्ति से आत्मविभोर हो गया हूँ और मुझे अपनी इन्द्रियों तक का ज्ञान नहीं रह गया है।"

जब किसी को पूर्णरूप से ईश्वर की एकता और उसकी शक्ति

का ज्ञान हो जाता है और उसी के अनुसार वह अपना जीवन व्यतीत करता है तो दुनिया भर की चीजें उसको मिल जाती हैं। मनुष्य की स्थिति जब इस प्रकार की हो जाती है तो उसे जीवन का ऐश्वर्य्य, जीवन की मनोहरता और जीवन का आनन्द उसी प्रकार मिलता है जिस प्रकार ईश्वर से सम्पर्क रखने वाले मनुष्य को मिलता है। मनुष्य की जब ऐसी स्थिति हो जाती है तब वह इस पृथ्वी पर रहता हुआ भी स्वर्गीय आनन्द का अनुभव कर सकता है। यह तो स्वर्ग को पृथ्वी में अथवा पृथ्वी को स्वर्ग में लाना है। यह तो हीनता अथवा नपुंसकता को शक्ति में, दुख को सुख में, भय और शंकाओं को श्रद्धा में तथा उत्कण्ठा को पूर्णता में बदलना है। यही तो शान्ति, शक्ति और पूर्णता को प्राप्त करना है। यही ईश्वर के सम्पर्क में आना है।

मार्ग

यदि हम जानबूझ कर जीवन को पेचीदा बनावें तो दूसरी बात है नहीं तो वह पेचीदा नहीं है। जीवन का जो कुछ परिणाम होता रहता है उसे हम स्वीकार कर लेते हैं किन्तु हम परिणाम के कारण को जानने का प्रयत्न बहुत कम करते हैं। जीवन के झरने भीतर से बहते रहते हैं। वास्तव में यह बात सच है कि जैसा भीतर होगा वैसा ही बाहर भी।

यदि हम चौकन्ने होकर ईश्वरीय धारा के ढूँढ़ने का पक्का विचार कर लें तो वह शान्ति और सुरक्षा के साथ हमें अपनी गोद में उठा लेगी। याद रखिये ईश्वर की देख-रेख में उसी के बनाये हुए नियम के अनुसार जीवन का साधारण क्रम प्राकृतिक ढंग से बराबर चलता रहता है।

एक ऐसी गुप्त शक्ति है जो हमारी दिमागी और शारीरिक शक्ति से बढ़ी हुई है। हमारी कुछ ऐसी आन्तरिक शक्तियाँ हैं जिनका हमारे तेज और विचार पूर्ण-मस्तिष्क से कोई सम्बन्ध नहीं है। वे मस्तिष्क की तमाम तेज और विचार पूर्ण शक्तियों को नीचा दिखलाती रहती हैं। उनके द्वारा हमें अन्तर्ज्ञान, प्रोत्साहन, और प्रभुता मिलती है। ये गुण यदा कदा नहीं मिलते प्रत्युत साधारण रूप से हमारी आदतें बनकर हमें रोज मिलते हैं।

यदि हम उन नियमो को जान लें जिनसे ये हमको प्राप्त होते हैं और उनके अनुसार चलें तो वे हमे मिल सकते हैं। इस संसार का, सारे विश्वका और हमारे जीवन का शासन एक नियम द्वारा होता

है—वह तत्व सम्बन्धी नियम है जिसमे कारण और कार्य्य होता है। संसार की शक्ति का उत्पन्न करनेवाला अतीव मेधावी ईश्वर इसी नियम के द्वारा काम करता है। हमारे भीतर एक मार्ग दर्शक होता है जो जीवन पर शासन करता है और हमेशा उसकी व्यवस्था ठीक रखता है।

महात्मा ईसा जीवन के नियमों के ज्ञाता थे। लोगों को वे उन नियमों की जानकारी खूब समझाकर करा देते थे। उनको इसका पूरा और असली ज्ञान था। उन्होंने उसे अपने ही जीवन मे करके नही दिखाया प्रत्युत उन्होंने उसे ऐसा समझाकर बतलाया कि उसे दूसरे लोग भी प्राप्त कर सकते हैं। महात्मा ईसा ने बराबर स्पष्ट रूप से कहा था, "तुम अपने जीवन की परवाह न करो।" और उन्होंने इसे करके भी दिखा दिया था। उन्होंने एक शक्ति भी दिखलाई जिसके द्वारा जीवन के भय, जीवन की शंकायें और अनिश्चित अवस्थायें सब दूर हो सकती हैं।

अपनी दूसरी आज्ञाओ मे महात्मा ईसा ने कहा था, "सबसे पहले स्वर्ग की बादशाहत और ईश्वर की नेकनीयती खोजो फिर सब चीजें तुमको आप से आप मिल जायेंगी।" चीजों से उनका मतलब रोज की साधारण आवश्यकताओं से था।

स्वर्ग की बादशाहत से उनका मतलब भीतरी ईश्वरीय जीवन का था जो हमारे भौतिक जीवन का उद्गम स्थान और तत्व है। ईश्वरीय जीवन का मतलब है अपने मस्तिष्क और काम को ईश्वरीय इच्छा और उद्देश्य के अनुकूल ठीक कर लेना। ईश्वरीय जीवन का मतलब है तुच्छ विचारों और स्वार्थों से मनुष्य को बचाना और उसको अपने उच्च जीवन को समझना अर्थात् अपनी और ईश्वर की

समानता को समझना। इस समानता का अनुभव हो जाने पर मनुष्य अपने विचारो, कार्यों, उद्देश्यों और आचरण को अर्थात् अपने सारे जीवन को उसी ऊँचे स्तर पर ले जाता है।

महात्मा ईसा ने कहा था, "तुम्हारे कान पीछे से एक आवाज सुनेंगे जो चिल्लाकर कहेगी, यह तुम्हारा रास्ता है, इसी पर चलो। तुम दाहिने और बायें कहाँ जा रहे हो? तुम्हारा ईश्वर बड़ा शक्तिशाली है। जो एकान्त मे बैठकर ईश्वर का चिन्तन करता है वह ईश्वर की छत्र छाया मे रहता है।" उनका यह कथन कोरी कवि कल्पना नही है। उसमें प्रधान ईश्वरीय नियम की मान्यता है। उसमे वर्तमान मनोविज्ञान और मानसिक तथा अध्यात्मिक विज्ञान है।

ईश्वर से सम्पर्क स्थापित करने के लिये महात्मा ईसा किस प्रकार पहाड के ऊपर जाते थे, इसका सन्तिप्त विवरण हमे इंजील मे मिलता है। इसके बाद वे पहाड से उतर कर साधारण मनुष्यो के साथ रहते थे। वे वहाँ तुरन्त पहुँचते थे जहाँ सेवा और सहायता की जरूरत होती थी।

अपना दैनिक काम शुरू करने के पहले प्रत्येक स्त्री और पुरुष को एकान्त मे बैठकर अपनी आत्मिक उन्नति के लिये ईश्वर का ध्यान करना चाहिये। इसके बाद उसे यह विश्वास करके अपने काम मे लगना चाहिये कि हमको हमारे काम मे ईश्वर की रहनुमाई हमेशा मिलेगी और जब हम गलत रास्ते पर जायँगे तो वह हमको ठीक रास्ते पर लावेगा। इसके अलावा यदि हम उसकी आज्ञा को मानेंगे तो हमको शान्ति, शक्ति और सुख मिलेगा। भीतरी जीवन का ज्ञान

न होने के कारण जिनको अपना जीवन भार स्वरूप मालूम होता था ऐसे-ऐसे न मालूम कितने लोगों को ईश्वर की आज्ञा मानने से सुख और शान्ति मिली है।

आन्तरिक जीवन की मानसिक और आत्मिक शक्तियाँ भीतर गुप्त रहती हैं। जब हमें उनका ज्ञान हो जाता है और हम उनसे काम लेने लगते हैं तो उनसे हमको जीवन में बड़ी अमूल्य सहायता मिलती है।

महात्मा ईसा के बताये हुए आदेशों के अनुसार स्वर्ग की बादशाहत खोजने से हम किसी अन्धकूप में नहीं पड़ते हैं प्रत्युत उनकी आज्ञा को मानने से हमको साहस पूर्ण निस्वार्थ काम करने की कल्पना हो जाती है। इससे हमें जीवन में सफलता मिलती है।

जो समय हम व्यर्थ की चिन्ताओं में खोते हैं उसका थोड़ा सा भी भाग यदि हम एकान्त में, विचारों के बनाने में, लगावें और जिस परिस्थिति को लाना चाहते हैं उसका और उसकी पूर्ति का विचार करें तो महात्मा ईसा ने हमारे जीवन की उपमा जो एक स्वच्छन्द पक्षी से दी है वह ठीक उतरेगी। उन्होंने कहा है कि हमारा जीवन स्वच्छन्द पक्षी की तरह स्वतन्त्र होना चाहिये।

जो समय एकान्त में बैठकर ईश्वर के साथ सम्बन्ध स्थिर रखने के लिये लगाया जायगा वह हमारे लिये ईश्वर का प्रसाद होगा। यदि हम सचाई से ध्यान लगावें तो वह हमारी एक अमूल्य सम्पत्ति होगी।

जो विधि एक के लिये संभव है वही दूसरे के लिये ठीक नहीं हो सकती तथापि कुछ सुझाव यहाँ दिये जा रहे हैं जो लाभदायक सिद्ध होंगे। प्रत्येक स्त्री और पुरुष को अपनी विधि जारी रखनी चाहिये।

ऐ मेरे आसमानी पिता, तू हमारे जीवन, प्रेम, बुद्धि और शक्ति का दाता है जिसके सहारे हम चलते फिरते और जीवित रहते हैं। तुझसे हमे सहायता मिलती है। तू हममे प्रकट हो जा।

तू मेरी मदद कर कि मुझे विशाल बुद्धि, दूरदर्शिता, प्रेम और शक्ति मिले जिससे मै तेरी, अपने भाइयो की और सारे प्राणियो की सेवा सच्चाई के साथ कर सकूं और मुझे ईश्वरीय मार्ग प्रदर्शन और सहायता मिल सके तथा मेरी सब आवश्यकतायें पूर्ण हो।

ऐ प्रभो! तू हमारे अज्ञान को दूर कर। मुझे रास्ता दिखला और मेरे ऊपर भली भॉति शासन कर जिससे मै अपने जीवन की जानकारी प्राप्त करूं और पहले से भी अधिक अपने को प्रकाशित कर सकूं।

जीवन के अमरत्व, प्रेम, बुद्धि और शक्ति पर मेरा पूरा विश्वास है। मुझे ईश्वरीय पथ प्रदर्शन और प्रेम मिलता रहेगा, क्योंकि मेरा पिता ईश्वर मेरे द्वारा काम करता है। मेरा पिता काम करता है और मै भी काम करता हूँ।

उस मार्ग पर चलने के लिये निम्न लिखित निश्चय, जिसे हम आज ही करें, हमारी सहायता कर सकता है।

मेरा निश्चय है

मेरा निश्चय है कि मेरे भाई ईसा ने जिन उपदेशो को मुझे आसमान के नीचे गैलियन समुद्र के पास पहाड़ की तराई मे बडी सादगी से दिया था दिल खोलकर मै उनको उसी भावना से ही ग्रहण करता हूँ।

जब उन्होने सब धर्मों का तत्व और मनुष्यों का कर्तव्य बताया तो, मेरा विश्वास है कि, वे अपनी भावनाओ को खूब जानते थे और जो वे कहते थे उसे करके दिखाते थे।

मै आज दूसरे दिन निश्चय करता हूँ कि आज से मेरा नया जीवन प्रारम्भ हो रहा है और बडी उत्कण्ठा तथा प्रसन्नता के साथ, बिना किसी की मदद के मै ईश्वर की शरण मे जाऊँगा और पुत्र की तरह से वह मुझे प्यार करेगा तथा मेरी रहनुमाई करेगा। महात्मा ईसा ने जीवन भर इसी का अनुभव किया और ससार से जाने के पहले उन्होने इसी का उपदेश दिया।

मै बडे ध्यान के साथ ईश्वर की इच्छा का अध्ययन करूँगा और बडी उत्कंठा से शान्ति के साथ उसकी पूर्ति करूँगा। वह मेरी रक्षा करेगा इसलिये मुझपर कोई आपत्ति न आवेगी। मै दिव्य जीवन व्यतीत कर रहा हूँ इसलिये मै अमर रहूँगा।

मैं निश्चय करता हूँ कि लोगो से अपने बर्ताव मे मै ढिठाई का उत्तर धैर्य्य से, बहस का नम्रता से और घृणा का प्रेम से दूँगा। मुझे

काम करने की सदैव उत्कंठा रहेगी जिससे आनन्द मिलता है और जो मानवी जीवन को सार्थक बनाता है।

अपने पड़ोसी की हानि करके मै अपना स्वार्थ कभी सिद्ध न करूँगा। मुझे विश्वास है कि एक दूसरे की सहायता से ही मैं मनुष्य बन सकता हूँ और जो कुछ मुझे मिलता है उससे ही मै अपना जीवन सुखी बना सकता हूँ।

मैं निश्चय करता हूँ कि आज का दिन मै इस प्रकार व्यतीत करूँगा कि जब रात होगी तो केवल मुझे यही सन्तोष न होगा कि कल की यात्रा में मैं स्वर्ग के कुछ समीप पहुँच गया हूँ प्रत्युत मुझे इस बात का अभिमान भी होगा कि मैने संसार के रंगमंच पर अपना कर्तव्य खूबी से किया है और मै इस योग्य हो गया हूँ कि परमपिता ईश्वर मुझसे प्रेम करे/और मेरी देख-रेख रक्खे।

—:०:—

श्री जेम्स एलेन व लिली एलेन रचित

कुछ उत्कृष्ट पुस्तकें

(१) **विचारों का प्रभाव**—यह पुस्तक जेम्स एलेन लिखित As you thinketh का अनुवाद है। उसमें बताया है कि मनुष्य के विचारो मे कितनी महान् शक्ति है; उसका कितना प्रभाव हमारे कार्यों पर पड़ता है, एव उसमे क्या चमत्कार है। मूल्य ॥)

(२) **मनुष्य ही अपने भाग्य का निर्माता है**—यह पुस्तक जेम्स एलेन के Man is the Master of his Mind, Body and Circumstances का अनुवाद है। इसमें बताया गया है कि किस प्रकार हम अपने विचारो से, अपने उद्योग और अध्यवसाय से अपने भाग्य को बना सकते है, मूल्य ॥=)

(३) **गौरवशाली जीवन**—यह जेम्स एलेन लिखित Life Triumphant का अनुवाद है। इसमे बताया गया है कि मनुष्य के विचारो मे कितनी महान् शक्ति है; उसका कितना प्रभाव हमारे कार्यो पर पड़ता है, एवं उसमे क्या चमत्कार है। मूल्य ।||)

(४) **नर मे नारायण**—यदि हम ससार से प्रेम करें, हमेशा सच्चाई के मार्ग पर चलें और मन तथा हृदय को अपने वश मे रखें तो यह मानवी दुख दूर किया जा सकता है।" इस पुस्तक मे ऐसे साधन बतलाये गये है जिनके अनुसार चलकर मनुष्य अपने जीवन को निस्सन्देह सुखी और शान्त बना सकता है। मूल्य १।) मात्र।

(५) **मन की अपार शक्ति**—यह पुस्तक श्रीमती लिली एलेन लिखित Might of the mind का अनुवाद है, इस सुन्दर पुस्तक मे बताया गया है कि मनुष्य के भीतर वह अपार शक्ति है जिसको जान लेने पर वह जैसा चाहे, बन सकता है। मूल्य ॥=)

(६) **भाग्य पर विजय**—इस पुस्तक मे पुरुषार्थ का महत्व दिखलाया गया है। पुरुषार्थी पुरुष चाहे तो भाग्य को भी बदल सकता है। मूल लेखक जेम्स एलेन। मूल्य १)

(७) **हमारे मानसिक शिशु**—इस पुस्तक मे भय, अहंकार, काम, क्रोध विकारो से छूटने के सुलभ मार्ग बताये गये हैं जिनके अनुसार चल कर मनुष्य अपने जीवन को सुखी बना सकते हैं। ॥